संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ

(दूसरा भाग)

सम्पादक —

हेमेन्द्र कुमार

मूल्य—आठ आना

[द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण]

मुद्रक—वीरेन्द्रनाथ,
माया प्रेस,
इलाहाबाद

दलदल

लेखक—ए० कुप्रिन

ग्रीष्म की सन्ध्या का अवसान हो रहा था, और वन विश्राम करने जा रहा था। चारो ओर निस्तब्धता का राज्य था। ऊँचे वृक्षो के ऊपर अस्त होते हुए सूर्य की आभा पड रही थी, पर नीचे अन्धकार था। किसी दूरस्थ दावानल की ज्वालाओं के धुँए से वर्षा से भीगी हुई धरती की गन्ध स्पष्ट होती जा रही थी। नीरव द्रुतगति से निशा ने प्रवेश किया। पक्षियों का कलरव रुक गया—केवल दो एक पक्षी कभी-कभी बोल उठते थे।

माकिन और निकोलाई निकोलोविच काम समाप्त कर घर लौट रहे थे। माकिन एक सर्वेयर था और निकोलोविच एक विद्यार्थी। वह मैडम सेराडुकोव का पुत्र था, जो एक धनी विधवा थी। सेरड्डुकोवा गाँव तक पहुँचना कठिन समझ कर उन दोनों ने जगल मे ही रखवाले स्टीपन के साथ रात बिताने का निश्चय किया। उनकी सकरी पगडडी, वृक्षो के झुण्ड के बीच मे होकर जाती थी, और दो एक कदम के आगे स्पष्ट दिखाई भी नही पड़ती थी। माकिन, जो एक दुबला और लम्बा आदमी था, कुछ झुक कर जरा झूमता हुआ चलता था—जिस प्रकार दूर-दूर तक पैदल चलने के आदी चला करते हैं। निकोलोविच कठिनाई से उसके साथ चल रहा था। वह एक मोटा-ताजा, नाटा आदमी था। उसके बाल बिखरे हुए थे, टोपी तिरछी हो गई थी और चश्मा भी ठीक नहीं लगा हुआ था। उसके पैर कभी फिसल पड़ते थे और कभी ठोकर

खा जाते थे। माकिन ने उसकी तकलीफ देखी, पर अपनी गति मन्द नहीं की। वह थका, भूखा और नाराज था; और लड़के की तकलीफ से उसे कुछ सुख मिल रहा था।

माकिन को मैडम सेरडुकोव ने इसलिये नौकर रखा था कि वह मैडम के जगलों के उन हिस्सों का एक सीधा सादा-सा नक्शा बना दे, जिन्हे जानवरों ने उजाड़ डाला था। उनके लड़के निकोलाई निकोलोविच ने स्वय अपनी ही इच्छा से, माकिन को सहायता देने का निश्चय किया था। उससे माकिन को बडी सहायता मिल जाती थी, क्योंकि वह मेहनती और होशियार था और प्रकृति से वह मित्र बनने योग्य था। वह बुद्धिमान्, स्पष्टवादी और दयालु था, यद्यपि उसमे अभी बचपन भी कुछ-कुछ मौजूद था, जो कभी-कभी उसकी जल्दबाजी से मालूम होता था। माकिन काफी आयु का, अकेला, कड़ा और शक्की मिजाज का व्यक्ति था। जिले भर में वह शराबी के नाम से प्रसिद्ध था, इस कारण पहले तो उसे नौकरी मिलती ही नहीं थी, और जब मिलती भी थी तो बहुत थोडे वेतन पर।

दिन भर तो किसी तरह यह निकोलोविच के साथ मित्रता का व्यवहार रखता था, पर शाम से, थकावट और दिन भर चिल्लाने के कारण, वह बड़ा चिड़-चिड़ा हो जाता था। और तब उसे यह जान पड़ता था कि उस लड़के की वास्तव में काम की ओर कुछ भी रुचि नहीं है, केवल पाखण्ड है। वह यह भी सोचता था कि लड़के को उसकी माँ ने यह देखने के लिये भेजा है कि माकिन काम पर कहीं शराब तो नहीं पिया करता। और माकिन लड़के से ईर्ष्या भी करता था, क्योंकि जिस परीक्षा मे माकिन तीन बार असफल हो चुका था, उसके लिये जो कुछ ज्ञान आवश्यक था, यह सब उस लड़के ने एक हफ्ते मे ही सीख लिया था। निकोलोविच के बातूनीपन से, उसकी युवकोचित उत्साही प्रकृति से, उसके साफ़-सुथरेपन से और उसके सभ्य व्यवहार से भी वह

चिढ़ा करता था। लेकिन सबसे अधिक कष्ट माकिन को अपनी वृद्धावस्था, अपने देहातीपन, अपने भग्न-हृदय और अपने अशक्त क्रोध का विचार करने से होता था।

जैसे-जैसे सन्ध्या निकट आती-जाती थी वैसे ही वैसे माकिन का चिड़चिड़ापन भी बढ़ता जाता था। निकोलोविच की प्रत्येक भूल को वह बहुत बढ़ा कर उसे झिड़कता था और पल-पल पर उसे टोकता था। पर उस लड़के के पास शिष्टता इतनी अधिक मात्रा में थी कि वह अपमान का अनुभव नहीं करता था। वह झट अपनी भूलो के लिये क्षमा माँगता, और माकिन की झिड़कियों का उत्तर एक मधुर हँसी से देता। और सर्वेयर के क्रोध की अवहेलना करते हुए वह अनेक प्रश्न पूछता और हँसी मजाक करता।

माकिन चुपचाप नीचे देखता हुआ चला जा रहा था। निकोलोवेच उसके बराबर चलने का असफल प्रयत्न कर रहा था। ठोकर लगने और फिसलने के कारण वह पीछे रह जाता और दौड कर फिर माकिन के बराबर पहुँच जाता था। वह हाँफ रहा था, पर फिर भी जी से और उत्साह के साथ बाते कर रहा था। उसकी आवाज उस ते हुए जगल मे गूँज रही थी।

उसने विश्वास दिलाने के लिये अपने हृदय पर हाथ रख कर हा, "इगोर इवानोविच! मैं देहात मे बहुत दिनों तक नही रहा हूँ और मैं तुम्हारे इस कथन को स्वीकार करता हूँ कि मैं अभी देहात के विषय मे कुछ नहीं जानता हूँ। पर फिर भी मैंने जो कुछ थोडा-बहुत देखा है, उससे मुझे यह मालूम हो गया है कि देहात मे कई सुन्दर र भावोत्पादक वस्तुएँ है।.. .. पर तुम तो कहोगे ही कि मैं अभी क हूँ और उद्दण्ड हूँ.. मै यह मानने को तैयार हूँ, पर तुमसे यह कहना ता हूँ कि तुम्हारे ऐसे गम्भीर, विचारशील व्यक्ति के लिये यह उचित कि तुम, लोगो के जीवन को एक दार्शनिक की दृष्टि से देखो..

माकिन ने घृणा-सूचक मुस्कान् के साथ तिरछी दृष्टि से उसकी ओर देखा, पर चुपचाप चलता गया।

"इगोर इवानोविच! जरा इसका तो ख्याल करो कि देहाती जीवन के रीति-रस्मो का कितना प्राचीन इतिहास है। हल, झोपडी, गाड़ी- इन सबका किसने निर्माण किया? किसी ने नहीं। दो हजार बरस पहले भी यह चीजें उसी दशा मे थीं जिसमे अब हैं। इसी तरह आदमी बोना-जोतना भी करते थे। पर कब, किस प्राचीनतम युग मे किसानी का जन्म हुआ? प्रिय इगोर इवानोविच, हम इसका ख्याल भी नहीं कर सकते। हम लोगो को कुछ भी नही मालूम है। सबसे पहली गाड़ी आदमी ने कब और कैसे बनाई? कितने हजार वर्षों मे यह काम पूरा हो सका था? शैतान ही जाने!" निकोलोविच ने जोर से यह कह कर अपनी टोपी आँखों के ऊपर गिरा ली। फिर उसने कहा, "मैं नहीं जानता हूँ, और कोई भी नहीं जानता है।..... चाहे कोई भी चीज ले लो, कपडे, बर्त्तन, जूते, चर्खे, मगर यह निश्चय है कि करोड़ों आदमियो के दिमाग खपाने से वह सब चीजे निकली हैं। देहातियों की अपनी दवाये होती हैं, अपनी कविता होती है, अपनी सासारिक योग्यता, अपनी सुन्दर भाषा, सब कुछ होती है, पर एक भी आदमी का नाम नहीं चलने पाता; एक भी लेखक का नहीं। लडाई के जहाजों और दुर्बीनो की अपेक्षा चाहे वह कुछ भी न हो, पर विश्वास करो कि एक कुदाल को देखने से मुझमें जितनी भावनाये उदय होती हैं, उतनी उन्हे देखने से नहीं।"

माकिन हाथ हिला-हिला कर गाने लगा—"तु, तु, तू, तु, तु, तू, तू, तू, तू। मशीन चलने लगी! मुझे आश्चर्य होता है कि तुम कभी थकते नही हो, दिन रात यही बाते!"

"नहीं, इगोर इवानोविच, सुनो," विद्यार्थी ने कहा, "किसान चाहे जिधर दृष्टि डाले, उसे प्राचीन सत्य ही दिखाई देगा। प्रत्येक वस्तु

उसके पूर्वजों के अनुभवों से आलोकित है। प्रत्येक वस्तु सरल, स्पष्ट और सम्भव है। और सबसे अधिक महत्व-पूर्ण बात तो यह है कि उसके कष्टों की उपयोगिता का कोई प्रश्न नही है। एक डाक्टर, या जज या लेखक को लो—इन कामो मे बहुत कुछ दिखावटी है। एक शिक्षक, या सैनिक, या राजकर्मचारी, या पुरोहित..."

"धर्म के विषय पर कुछ मत कहो," माकिन ने गम्भीरता से कहा।

"मैंने उस मतलब से नहीं कहा था, इगोर इवानोविच," निकोलोविच ने हाथ को अधैर्य के साथ हिलाते हुये कहा—"अगर चाहो तो बैरिस्टर, चित्रकार या गायक को ले लो। इन योग्य व्यक्तियों के विरुद्ध मुझे कुछ नहीं कहना है। पर इन सबों ने अपने जीवन मे कम से कम एक बार तो अपने आप से पूछा होगा कि क्या वास्तव में उनका उद्यम मनुष्य जाति के लिये उतना आवश्यक है जितना प्रतीत होता है? पर किसान का जीवन अत्यधिक मधुर और निर्मल है। यदि बसन्त मे बोते हो, तो जाड़े मे खाने को मिलेगा। अपने घोडे को खिलाते हो, तो वह तुम्हारा काम करेगा। इससे अधिक सीधा और क्या हो सकता है? और यह विलक्षण व्यक्ति बलात् सभ्यता के चगुल मे फॅसा दिया जाता है। 'अमुक धारा के अनुसार अमुक व्यक्ति ने अमुक व्यक्ति के विरुद्ध अमुक अपराध किया है,' इत्यादि-इत्यादि। वह व्यक्ति भी कुछ न कुछ उत्तर देता है। पर तब सर्वेयर इगोर इवानोविच माकिन दृश्य पर उपस्थित हो जाता है..."

"मुझे कृपा कर मत घसीटो," माकिन ने कहा।

"अच्छी बात है, सर्वेयर सेरडुकोव कहे, अगर वह तुम्हे अधिक पसन्द हो। वह कहता है कि 'इस व्यक्ति के दादा और परदादा ने वह जमीन जोती थी जो उनकी नही थी।' बस, तुरन्त यह व्यक्ति किसी न किसी धारा के अनुसार जेल मे डाल दिया जाता है, पर वास्तव मे

वह कुछ समझता नहीं कि उसे किस अपराध के लिये दण्ड मिला। वह तुम्हारे पैमानो और औजारों और कायदे-कानूनो को क्या समझे जब कि उसने जन्म से ही केवल शिक्षा पाई है कि भूमि मनुष्य की नहीं, ईश्वर की है ?"

"तुम यह सब मुझे क्यो सुनाते हो ?" माकिन ने दुःख से पूछा।

"या दूसरी तरह से देखो। मान लो वही व्यक्ति फौज में भेज दिया गया है," निकोलोविच उत्साह के साथ कहता ही गया—"एटेन्शन ! आइज राइट ! ड्रेस बाइ दी राइट ! एटेन्शन !'—यह सब उसे सार्जेण्ट सिखाता है। मैंने भी दो महीने तक अपने देश की सेवा की है, और मैं यह मानता हूँ कि सैनिक सेवा के लिये इन उपकरणो की आवश्यकता होती है, पर किसान के लिये तो यह सब व्यर्थ की मूर्खता है। चाहे तुम कुछ कहो, पर तुम इसकी आशा नहीं कर सकते कि एक सीधे-सादे होशियार आदमी को तुम समझा सकोगे कि जीवन के लिये इन सब चीजों की वास्तव मे आवश्यकता है। और वह तुम्हारी ओर उसी तरह देखता है जैसे कि एक भेड़ किसी नये फाटक को देखता है।"

"निकोलाई निकोलोविच ! क्या यह आज के लिये काफी नही है ?" सर्वेयर ने पूछा—"सच पूछो तो मैं इस बातचीत से तंग आ गया हूँ। तुम कुछ न कुछ अपने को दिखाना चाहते हो; पर तुम जो कुछ कहते हो, उसमे कुछ भी बुद्धि अथवा तथ्य नही है। यह सब बातचीत क्यों कर रहे हो, मैं बिल्कुल नही समझ सकता।"

निकोलोविच ने कहा, "शायद तुम्हे स्मरण होगा कि आज सुबह तुमने कहा था कि किसान मूर्ख, आलसी और हृदयहीन होता है, तुमने घृणा से बाते की थी और इस कारण तुम न्याय से बाते नहीं कर सके। पर प्रिय इगोर इवानोविच, क्या तुम नहीं समझ सकते कि किसान हमसे कहीं भिन्न परिस्थितियों मे रहता है ? तुम यह कैसे कह

सकते हो कि किसान मूर्ख होता है ? सिर्फ उसे मौसम या जानवर या जोतने-बोने के बारे में बातें करते हुये सुनो। तुम्हें आश्चर्य होगा। प्रत्येक शब्द सीधा-सादा और तथ्यपूर्ण होता है। पर उसी किसान को शहर और वहाँ की तड़क-भड़क के विषय में बातें करते सुनो। तब वह कितने भद्दे शब्दो का प्रयोग करता है। उसकी बातें सुनना भयानक हो जाता है।" निकोलोविच हाथ उछाल-उछाल कर जोर से बोल रहा था—"मैं मानता हूँ कि किसान रूखा दरिद्र व्यक्ति है, पर उसे विश्राम करने के लिए समय तो दो ! उसका जीवन छिन्न-भिन्न हो गया है। उसे भोजन दो, आराम दो, पढ़ाओ और लिखाओ; पर कृपया उसे अपने ज्ञान के भार से पीस मत डालो। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जब तक तुम उसे लिखाते-पढाते नहीं तब तक तुम्हारे कायदे कानून सब फिजूल हैं—उसके समझने के लिये।"

माकिन सहसा रुक गया और निकोलोविच की ओर देख कर बोला—"निकोलाई निकोलोविच ! अब तुमसे चुप होने के लिये कहना पड़ेगा।" उसकी आवाज बूढ़ी औरतो की आवाज की सी थी—"तुमने इतनी बकबक की है कि मेरे लिये धैर्य का अन्त हो गया है। मैं अब और नहीं सुन सकता, और न सुनना चाहता हूँ। देखने मे तो तुम एक काफी होशियार आदमी लगते हो, पर सीधी सी बात भी नही समझते। तुम्हे अपने घर और मित्रों के बीच मे यह सब बाते करने का काफी मौका मिलता होगा ! मैं तुम्हारा दोस्त नहीं हूँ। तुम जो हो वह हो, और मैं जो हूँ वह हूँ, और मुझे इस बकवाद की जरूरत नहीं। मुझे पूरा हक है "

निकोलाई निकोलोविच ने माकिन की ओर तिरछी नजरों से देखा। सर्वेयर का चेहरा विचित्र प्रकार का था—सामने से देखने से लम्बा और बगल से देखने पर चौड़ा जान पडता था। एक ही दृष्टि मे निकोलोविच ने माकिन के हृदय की क्षुद्रता, उसकी जीवन की ओर से अरुचि का पता लगा लिया और उसका हृदय दया से भर आया।

"प्रिय इगोर इवानोविच 'नाराज मत हो," उसने सहानुभूतिपूर्ण स्वर मे कहा—"मैं तुम्हे अपमानित करना नहीं चाहता था। तुम बडे क्रोधी हो !"

"क्रोधी ?" माकिन ने कहा, "मुझे क्रोधी होना चाहिये। मुझे यह बातें पसन्द नहीं। और मैं तुम्हारा साथी भी कैसे हो सकता हूँ ? तुम एक सभ्य शिक्षित धनी हो, और मैं ? एक बूढा व्यक्ति, बस।"

निकोलोविच चुपचाप रहा। वह माकिन के पीछे-पीछे चुपचाप चल रहा था, और उसकी करुण दशा पर विचार करता जा रहा था।

जगल मे अँधेरा हो गया।

रास्ता ढालू था। एक मोड पर निकोलोविच के चेहरे पर ठडक लगी।

"होशियारी से चलो, यहाँ एक दलदल है," माकिन ने कहा।

निकोलोविच ने देखा कि उसके पैरों की आहट नहीं होती, मानो वह कालीन पर चल रहा हो। एक अजीब आवाज हुई। निकोलोविच खड़ा हो गया।

"यह क्या है ?" उसने काँपती हुई आवाज से पूछा।

"एक लिएर्न (एक प्रकार का पक्षी)," माकिन ने जबाब दिया—"तेजी से चलो, यहाँ एक बाँध है।"

अब कुछ दिखाई नहीं देता था। दाहिने बायें कुहरा था। निकोलोविच को सर्दी लगी। उसके सामने एक काली, भारी चीज—माकिन की पीठ पर चल रही थी। दलदल, सड़े हुये पानी, आदि की गन्ध आ रही थी।

माकिन रुका, निकोलोविच का चेहरा उसकी पीठ से लड़ गया।

"होशियार, नहीं तो फिसलोगे।" माकिन बोला,—"तुम इन्तजार करो। मैं स्टीपन को बुलाता हूँ। साँस लेते ही दलदल मे डूब जाओगे।"

उसने जोर से आवाज लगाई—"स्टीपन !"

।ज दूर तक गई और क्षीण होकर अन्तरिक्ष मे विलीन हो गई।

"तुम्हे यह मालूम ही नही है कि कहाँ पैर रखने चाहिये, कहाँ नहीं," माकिन ने दाँत पीसते हुये कहा—"जान पड़ता है, हम लोगो को जानवर की तरह चलना पडेगा !" उसने फिर आवाज दी—"स्टीपन!"

"स्टीपन !" निकोलोविच ने भी पुकारा।

वे देर तक पुकारते रहे। बहुत देर बाद अँधेरे मे एक हल्की-सी रोशनी दिखाई दी। वह उनकी ओर न आकर दाहिने-बाये जा रही थी।

"क्या तुम हो, स्टीपन ?" माकिन ने पूछा।

"क्या तुम इगोर इवानोविच हो ?" आवाज आई।

कुछ क्षण बाद एक छोटे कद का आदमी लालटेन लिये हुये सामने आ गया।

"हाँ मैं ही हूँ," बन-रक्षक ने कहा—"और यह तुम्हारे साथ कौन है ? निकोलोविच तो नही ? निकोलोई निकोलोविच, आदाबअर्ज ! मुझे उम्मीद है कि आप आज रात भर तो यहाँ रहेगे ही। आपका स्वागत करता हूँ। मैं सोच रहा था कि कौन बुला रहा है, पर मैं अपनी बन्दूक़ भी लेता आया था।"

स्टीपन का चेहरा लालटेन की रोशनी मे चमक रहा था। उसकी मूँछे, दाढ़ी सब स्पष्ट दीखते थे। वह एक दयावान अधेड़ आदमी जान पडता था।

"चलिये !" कह कर वह अँधेरे मे गायब हो गया।

"स्टीपन ! क्या अब भी काँप रहे हो ?" माकिन ने पूछा।

"हाँ, इगोर इवानोविच।" दूर से स्टीपन ने कहा—"दिन मे तो नहीं, पर रात को तो काँपना ही पडता है, पर हमे तो अब इसकी आदत पड गई है।"

"क्या मारिया की हालत अच्छी है ?"

"नहीं। पत्नी और बच्चे सब बीमार हैं। छोटा बच्चा ईश्वर की कृपा से अब तक बचा हुआ है, पर उसे भी जल्द ही मौत आ जायगी। .. यहाँ सावधानी से चलना।"

निकोलोविच ने देखा कि स्टीपन का घर जमीन से करीब पॉच फीट ऊँचे पर बना है। सामने कुछ सीढियॉ थीं। स्टीपन बुरी तरह कॉप रहा था।

उसके मकान से वही गध आ रही थी जो किसानो के मकानों से प्रायः आया करती है। माकिन ने पहले प्रवेश किया।

"सलाम माँ जी!" कह कर उसने स्टीपन की स्त्री का अभिवादन किया।

एक लम्बी-दुबली स्त्री ने उसकी ओर फिर कर उसका अभिवादन ग्रहण किया, फिर घूम कर अपने काम मे लग गई। स्टीपन की कुटी बड़ी और गन्दी थी। एक छोटी दस बरस की लड़की एक कोने मे बैठ कर किसी बच्चे को झूले मे झुला रही थी। निकोलोविच मेज के पास बैठ गया, और उसे उसी क्षण से बड़ी उदासी मालूम होने लगी। कमरे के अन्धकार और उसकी गन्दगी के कारण उसका चित्त अत्यन्त उदास हो गया।

माकिन ने पूछा, "कुछ खिलाओगे, स्टीपन?"

स्टीपन बोला, "एक क्षण मे, इवानोविच, एक क्षण मे।" फिर अपनी पत्नी की ओर ताक कर उसने कहा, "मारिया, क्या चाय न बनाओगी?"

मारिया ने कहा, "हॉ . हॉ।"

वह बाहर गई। माकिन बैठ गया। स्टीपन भी उससे कुछ दूर पर बैठ गया। स्टीपन कहने लगा, "मैं सोच रहा था कि कौन बुलाता है। मैंने सोचा, जगल के ऑफिसर तो नही हैं? पर उन्हे रात मे क्या जरूरत हो सकती है? उन्हे यहॉ का रास्ता भी तो नही मालूम! जरूर कोई अजनबी है। ऑफिसर अच्छे आदमी हैं। उनमे अगर कुछ खराबी है, तो सिर्फ लड़कियों को बरबाद करने की...खैर इससे हम लोगो को कोई मतलब नही है।"

वह चुप हो गया। मारिया के चूल्हा जलाने की आवाज आ रही थी। बिछौने पर एक छोटी लड़की बैठी थी। निकोलोविच उसी तरफ देखने लगा। बुखार ने उसके सौन्दर्य को और बढ़ा दिया था। मुँह पर कुछ सूजन रहने पर भी वह चीनी मिट्टी की बनी हुई सुन्दर मूर्त्ति सी मालूम हो रही थी। उसकी सुन्दर बडी-बड़ी आँखो में अस्वाभाविक उज्ज्वलता थी और दृष्टि बड़ी मीठी तथा भावुकतापूर्ण—जैसी रैफेल के चित्रों की स्त्रियों की आँखों में होती है।

निकोलोविच ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है ?"

लड़की ने हाथो से चेहरा ढँक लिया और झट पर्दे की आड़ में छिप गई।

स्टीपन बोला, "बड़ी शर्मीली है। तुम्हे किस बात का डर है ? इसका नाम वारिया है। डरो मत बेटी, सामने आ जाओ। यह सज्जन नहीं मारेंगे ."

निकोलोविच ने पूछा, "क्या यह भी बीमार है ?"

स्टीपन ने पूछा, "क्या ?—तुम पूछ रहे हो, वह बीमार है या नहीं ? हम सब बीमार हैं। मेरी पत्नी और वे बच्चे जो चूल्हे के पास बैठे हैं—सबके सब बीमार हैं। दो को तो पहले ही दफना चुका हूँ—तीसरे को मगलवार को दफना दिया है। जब तक मृत्यु का समय नहीं होता है, तब तक हम लोग बुखार से काँपते रहेगे।"

निकोलोविच ने पूछा, "कुछ दवा क्यों नहीं करते ? हमारे मकान पर किसी दिन आ जाना, मैं तुम्हे कीनीन दूँगा।"

"सब कुछ करता रहता हूँ, मगर फायदा नहीं होता," कह कर स्टीपन ने एक लम्बी साँस ली और कहा, "तीनों को दफना दिया... दलदल की वजह से जगह गीली है.. हवा बहुत खराब है।"

"तब यहाँ क्यों रहते हो ? किसी दूसरी जगह चले आओ।"

"दूसरी जगह पर जाने को कह रहे हो ? यहाँ से चला जाना

बेहतर है, मगर किसी को तो यहाँ रहना चाहिये। मकान काफ़ी बड़ा है—रखवाली के लिये कोई अवश्य रहेगा। हम न रहे, तो कोई और आकर रहेगा। मेरे आने के पहले यहाँ की रखवाली गलाकटियन करता था.. पहले उसने अपने दो बच्चों को दफनाया, फिर अपनी औरत को और आखिर मे वह खुद मरा। कहीं रहो, इससे कुछ होता जाता नही। सब परमात्मा की इच्छा है। वे जहाँ रखते हैं, वहीं रहना है और जो काम कराते हैं वही करना है।"

मारिया चूल्हा जला कर भीतर आई और कुहनी से ढकेल कर दरवाजा बन्द करके उसने स्टीपन से कहा, "वाह जी ! बैठे-बैठे खूब गप्प कर रहे हो ! कम से कम प्याले ठीक करके तो रख सकते थे !"

उसका मुँह पीला था। उसकी आँखों में अस्वाभाविक ज्योति थी। अकाल मे ही वह बूढ़ी मालूम होती थी।

उसने गुस्से मे चूल्हे को जमीन् पर धड़ाम से पटक दिया। फिर नाराजगी के चेहरे से प्याले, रकेबियाँ और रोटी टेबुल पर आवाज करती हुई रखने लगी।

निकोलोविच को चाय पीने की इच्छा नहीं हुई ! उस दिन जो कुछ उसने देखा और सुना था उससे वह स्तम्भित हो गया था। माकिन की अकारण ईर्षा, स्टीपन को रहस्यमय दैव के आगे अफसोस न करके अपने को समर्पित करना, उसकी स्त्री का मूक क्रोध, उनके बच्चो को दलदल मे बुखार से एक के बाद एक मरना—सबने एकत्रित होकर उसे बिलकुल उदास कर दिया। असहाय, भोले-भाले आदमियो के दुःख और उन पर किये गये जुल्म जब सुनने मे आते हैं अथवा पढ़े जाते हैं तो किसे दुःख नहीं होता है ?

माकिन कई प्याले चाय पी गया। वह भूखे कुत्ते की तरह बड़े-बड़े रोटी के ग्रास लेकर चबाने लगा। चबाने के समय उसके चिपके हुए गाल की हड्डी का हिलना दीख पड़ता था। उसकी नीरस, निरुत्सुक

आँखे पशु की आँखों की तरह सामने गड़ी हुई थीं। सबके कहने पर स्टीपन एक प्याला चाय पीने को राजी हुआ। वह बड़ी आवाज के साथ धीरे-धीरे पीने लगा। पीकर उसने बड़ी सावधानी से प्याले को एक कोने मे ले जाकर उलटा रख दिया।

निकोलोविच सोच रहा था, "न जाने कितनी राते इस विषैले कुहरे से भरे टापू की कुटिया मे रहनी पड़ेगी!" झूलने की मचकचाहट बन्द हो गयी थी। झिल्लियो की नींद लाने वाली ध्वनि शुरू हो गयी। बिछौने पर वह छोटी लड़की बैठी हुई रोशनी की ओर एकटक देख रही थी। उसकी बड़ी आँखे और भी ज्यादा खुली हुई हैं; उसका सिर कभी-कभी मानो बेहोशी से एक तरफ झुक रहा था। रोशनी की ओर एकटक ताक कर वह क्या सोच रही थी, क्या अनुभव कर रही थी? कभी-कभी वह हाथ फैलाकर क्लान्ति के साथ अँगड़ाई लेती थी और इसी समय उसकी आँखों पर अद्भुत, अकथनीय मुस्कराहट दौड़ जाती थी, मानो सुनसान और गहरे अन्धकार से भरी रात्रि मे उसे कोई अपूर्व वस्तु मिलेगी। निकोलोविच सोचने लगा, इस परिवार के सभी व्यक्ति इस भयानक रोग के पञ्जे मे फँसे हुए हैं जिससे वे छुटकारा नहीं पा सकते। वह जो लड़की बिछौने पर बैठी है, वह शायद यह भूल गई है कि स्वस्थ जीवन क्या है। उसका दिन न जाने कैसे बीत रहा होगा। दिन निकलता है तो गोल-माल, चिल्लाहट और उकताने वाली रोशनी—न जाने उसे कैसी मालूम होती होगी। सध्या होती है और वह उसी तरह बैठकर रोशनी की ओर क्लान्तिपूर्ण अधैर्य से देखती हुई रात्रि की प्रतीक्षा करती होगी। उसकी कोमल क्षुद्र देह मे असाध्य रोग ने घर कर लिया है और प्रतिदिन उसे दुर्बल कर रहा है। एक दुःखप्रद भीषण स्वप्न-राज्य के बीच मे बीमारी उसे कुछ दिन रख कर एक दिन उसे मिट्टी मे मिला देगी ..

जमाना हुआ, कभी, कहीं निकोलोविच ने किसी प्रसिद्ध चित्रकार

का 'मलेरिया' नामक चित्र देखा था। किसी तालाब के किनारे, दलदल पर एक छोटी-सी लडकी लेटी थी और तेजी से हिल डुल रही थी। और दलदल मे से एक स्त्री की छाया-देह उस लडकी की ओर बढ़ रही थी। निकोलोविच को एकदम इस चित्र का ध्यान आ गया।

माकिन ने कहा, "अमेरिका में लोग देर तक बैटने के बाद सोने चले जाते हैं! मारिया, क्या हम लोगो के लिये पलग ठीक कर दोगी?" यह कहकर वह कुरसी से उठा।

सब उठे। छोटी लड़की ने अपना सर हाथो से दबा लिया और पलग पर लेट गई। उसकी आँखे अधखुली थीं और उसके अधरों पर एक मुस्कराहट थी। जम्हाई लेती हुई मारिया बाहर गई और थोड़ी सूखी घास लाई। उसके चेहरे पर से क्रोध का भाव जाता रहा था और उसका स्थान अशान्ति ने ले लिया था।

जब वह घास-फूस की शय्या का प्रबध कर रही थी, तब निकोलोविच उठ कर दर्वाजे तक गया। उसके चारों ओर घने अन्धकार के अतिरिक्त और कुछ न था और उसे ऐसा जान पड़ता था कि वह जिस सीढी पर खडा था, वह एक किश्ती है और उसे उस अन्धकार रूपी समुद्र मे कहीं ले जा रही है! जब वह अन्दर गया, तो उसके कपडे दलदल की हवा से गीले हो गये थे।

निकोलोविच और माकिन बेञ्चों पर लेटे—पैर बाहर निकले हुये थे। स्टीपन भी आग के पास ही लेटा। उसने दिया बुझा कर देर तक प्रार्थना की, फिर सो गया। मारिया नगे पैर धीरे-धीरे शय्या तक गई। कीड़ो की गुनगुनाहट के अतिरिक्त और किसी किस्म की भी आवाज नहीं हो रही थी।

थकावट से भी निकोलोविच को नीद न आई। वह आँखे खोलकर लेटा था और जाने क्या सोच रहा था। माकिन खर्राटे भर रहा था। शय्या पर माँ के साथ सोती हुई छोटी लड़की नींद मे ही कुछ अस्फुट

शब्द कह रही थी। नीचे सोते हुये बच्चे निस्तब्ध निद्रा में निमग्न थे। स्टीपन आह की सी साँस ले रहा था।

"अम्माँ, जरा पानी!"—किसी शिशु-स्वर ने कहा। मारिया तुरन्त शय्या से उतर कर नगे पाँव झञ्झर तक गई। निकोलोविच ने ग्लास के भरे जाने से लेकर बच्चे के पानी पीने तक की आवाजो को स्पष्ट सुना। फिर निस्तब्धता। माकिन के खर्राटे और बच्चों की साँसे जारी थी। बडी लडकी उठ बैठी, और कुछ कहने की कोशिश करने लगी, पर दाँतों के कटकटाने के कारण कह न सकी। "ठ-ठ-ट-ड—" उसने किसी तरह कहा। दुःख भरी आह के साथ मारिया ने लड़की को कुछ ओढने को दिया, पर निकोलोविच देर तक उसके दातो का बजना सुनता रहा। निकोलोविच ने बहुत कोशिश की कि नीद आ जावे, पर सब व्यर्थ हुई। उसने पुरानी कविताओ को और भूले हुये स्वप्नो को याद करना शुरू किया, पर फिर भी नींद न आई। उसके चारो ओर दुखी प्राणी निद्रित थे, और उस अँधेरे में उसने अनुमान किया कि स्टीपन के दुर्भाग्य-देवता से उसका साक्षात् हो रहा है।

बच्चा रोने लगा। माँ अपनी निद्रा से युद्ध करती हुई एक पुरानी लोरी गाने की कोशिश करने लगी, उस सादे गीत मे ही न जाने कितना अनिर्वचनीय दु ख भरा था। इतिहास की दृष्टि के परे—दूर, सुदूर सृष्टि के आरम्भ मे मनुष्य ऐसे ही गीत गाते रहे होंगे। वे समुद्र के किनारे बैठ कर, आग जला कर ऐसे ही गीत गाते और सुनते थे।

निकोलोविच के सिर की तरफ की खिड़की किसी ने खटखटाई। वह चौंका। स्टीपन फर्श पर से उठा। देर तक वह वहीं खड़ा-खड़ा मानो अपनी भग्न-निद्रा पर दुःख कर रहा था। फिर धीरे-धीरे खिड़की तक गया, और पुकारा, "कौन?"

बाहर से कोई धीमी आवाज आई।

स्टीपन ने जवाब दिया, "किसलिन्स्का में ? हाँ, मैं सुन रहा हूँ। अच्छा, तुम चलो। ईश्वर तुम्हारा साथ दे ? मैं अभी आता हूँ।"

निकोलोविच ने उत्कण्ठा के साथ पूछा, "क्या बात है ?"

स्टीपन माचिस खोज रहा था।

उसने दुःख से कहा, "अरे मुझे जाना पडेगा। कोई उपाय नहीं है। किसलिन्सकी में आग लग गई है, और हम सब लोगो को जाने का हुक्म हुआ है। अभी हरकारा आया था।"

जम्हाइयाँ लेते हुये स्टीपन ने बत्ती जलाई और कपडे पहने। जब वह बाहर जाने लगा, तब मारिया भी दर्वाजा बन्द करने के लिये उसके पीछे हो ली। सर्द हवा का एक झोंका अन्दर आया।

"एक लालटेन ले लो," मारिया ने कहा।

"क्या फायदा ? लालटेन से तो आदमी और भी रास्ता भूल जाता है," स्टीपन ने गम्भीरता से कहा।

निकोलोविच खिड़की के पास खड़ा था। बाहर था कुहरा और अँधेरी रात। सर्द हवा आ रही थी। स्टीपन की पद-ध्वनि सुनाई पड़ती थी, पर वह अदृश्य हो चुका था। बिना बकबक किये, बुखार होने पर भी वह चुपचाप रात मे और सर्दी में बाहर चला गया था। निकोलेविच के लिये इसमे कुछ अजीब-सी, समझ मे न आ सकने वाली बात थी। उसे कुछ डर-सा लगने लगा। रात में कैसे अजीब प्राणी पैदा होते थे। पेड़ पौधों की डालों से कितने सर्पादि लिपटे रहते थे। और ऐसी रात मे, बुखार होने पर भी (वही बुखार जिसने उसके तीन बच्चो को समाप्त कर दिया था, और शेष को करने वाला था) स्टीपन शान्ति और निर्भीकता के साथ बाहर चला गया था ! और यह सीधा आदमी निकोलेविच के लिये एक रहस्यमय पहेली बन गया था।

उसे हल्की नींद आ गई। उसकी आँखों के आगे से पीली, छाया-तन आकृतियाँ आती जाती थीं। "यह सब स्वप्न की चीजे हैं।"—उसने

अपने आप से कहा। वह उस दिन की घटनाये फिर स्वप्न मे देखने लगा। और उसने यह भी देखा कि अश्रुपूर्ण नयनो से वह माकिन से कह रहा है, "इस जीवन का क्या ध्येय है? यह क्षुद्र मनुष्य रूपी पेड़-पौधे किसी का क्या फायदा करते हैं? भाग्य इन लागो की तकलीफ के लिये क्या कारण दे सकता है?" पर माकिन ने झुँझलाहट के साथ मुँह फेर लिया। वह दार्शनिक बातों से कब का थक गया था। और स्टोण्न सदय मुस्कान के साथ खड़ा था। मानो वह इसका अनुभव कर रहा हो कि युवक की उद्दण्ड प्रकृति उसे यह नही समझने देती कि मानव-जोवन कितना निःसार है।

जब निकोलाविच सोकर उठा, तो उसे ऐसा मालूम हुआ मानो उसे बिल्कुल नीद नहीं आई थो, सिर्फ इन बातों को वह सोच रहा था। बाहर सुबह हो रही थी। कुहरा पड़ रहा था, पर अब हल्का-सा था।

निकोलाविच को इच्छा हुई कि सूर्य को देखे और ग्रीष्म की प्रातःकालीन वायु का स्पर्श करे। उसने झटपट कपड़े पहने और बाहर गया। सर्द हवा का झोका आया और उसे कुछ खाँसी आई। निकोलोविच रास्ता पहचानता हुआ दौड़ कर चढाई पर आगे बढने लगा। और उसकी भौहों और मूँछों पर ओस गिरी, पर वह आगे बढ़ता ही गया। आखिरकार वह एक पहाडी की चोटी पर पहुँच गया। खुशी की वजह से उसकी साँस क्षण भर को रुक गई। नीचे कुहरे से ढकी हुई जमोन थी—ऊपर आकाश की नीलिमा। सूर्य की स्वर्णाभ किरणें दोनो पर, और दोनों के बीच में स्वर्गीय नृत्य कर रही थीं।

लेलेचका

लेखक—फ़्रियोडोर सोलोगव

लेलेचका के कमरे मे प्रत्येक वस्तु चमकीली, सुन्दर और प्रसन्नता-पूर्ण थी। लेलेचका की मधुर ध्वनि से उसकी माँ मुग्ध हो जाती थी। लेलेचका एक हृदयहारिणी बालिका थी। ऐसी कोई और लड़की नहीं थी, ऐसी कभी नही रही होगी, और न कभी होगी। लेलेचका की माता सेराफिमा एलेक्जेंड्रोवना को इसका निश्चय था। लेलेचका की आँखें बड़ी-बड़ी और काली थीं, उसके कपोल गुलाबी थे, उसके ओठ चुम्बन और मुस्कान के लिये थे। पर लेलेचका का जो सौन्दर्य अथवा उसके जो गुण उसकी माँ को सबसे अधिक आनन्द देते थे, वे यह नहीं थे। लेलेचका अपनी माँ की इकलौती लड़की थी। यही कारण था कि उसकी प्रत्येक क्रिया उसकी माता को मन्त्र-मुग्ध कर लेती थी। लेलेचका को अपने घुटनों पर बैठा कर प्यार करना अत्यन्त सुखकर था। उस छोटी-सी लड़की को अपने बाहुपाश मे बद्ध करना—जो एक लघुकाय पक्षी की भाँति चपल थी!

सचमुच सेराफिमा एलेक्जेंड्रोवना को केवल शिशु-शाला में ही सुख मिलता था। अपने पति के पास उसे भावशून्यता का अनुभव होता था।

सम्भव है कि इसका कारण यह हो कि उसके पति को ठण्ड (या निर्जीवता) से प्रेम था—उसे ठण्डा पानी पीना और ठण्डी हवा में

साँस लेना बहुत पसन्द था। वह सदा सुव्यवस्थित-चित्त रहता था और सदा उसके मुख पर एक भावहीन हँसी रहती थी।

नेस्लटोव दम्पति (सर्जी मोडेस्टोविच और सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना) ने प्रेम या लोभ के बिना विवाह किया था, क्योंकि करना ही था; वह पैंतीस वर्ष का जवान आदमी था और सेराफिमा पचीस वर्ष की युवती। दोनों समान सामाजिक पद के थे और दोनों अच्छी तरह पले थे। इसे पत्नी की आवश्यकता थी और उसे पति प्राप्त करना था।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना को ऐसा मालूम होता था, मानो वह अपने भावी पति से प्रेम करती हो, और इस विचार मे उसे सुख होता था। वह सुन्दर और सम्मान्य जान पड़ता था। उसकी चतुर आँखों मे एक प्रकार की उच्चता का भाव था और वह भावी पति के कर्त्तव्यों का अत्यन्त सज्जनतापूर्वक पालन करता था।

वधू भी रूपवती थी। वह एक लम्बी, काली आँखों और काले बालों वाली लड़की थी, कुछ-कुछ शर्मीली थी, पर चतुर। वह उसके दहेज के पीछे पागल नही था। हाँ, यह जान कर कि उसके पास कुछ है, उसे ख़ुशी हुई थी। उसका ऊँचे घराने के लोगों से सम्बन्ध था, और उसकी पत्नी का भी। यह अवसर पड़ने पर लाभदायक सिद्ध हो सकता था। नेस्लटोव सदा निष्कलंक और चतुर रीति से अपने पद पर उन्नति करता जाता था। उसकी उन्नति न इतनी शीघ्र हो रही थी कि दूसरे उससे ईर्ष्या करें और न इतनी मन्दगति से ही कि वह दूसरो से जले। प्रत्येक वस्तु उसे उचित समय पर और उचित परिमाण में मिलती थी।

विवाह के बाद सर्जी मोडेस्टोविच के आचरण मे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई दी, जिसे उसकी पत्नी बुरा मानती। पर कुछ समय बाद, जब उसकी पत्नी का प्रसव-काल निकट आ गया, तब सर्जी मोडेस्टोविच ने कुछ काल के लिये अन्यत्र सम्बन्ध-सा स्थापित कर लिया। सेराफिमा

एलेक्जेड्रोवना ने इसका पता पा लिया, पर उसे स्वयं यह अनुभव कर आश्चर्य हुआ कि उसे इससे कोई विशेष दुःख नहीं हुआ। वह अपनी सन्तान की इतनी व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रही थी कि और किसी भाव के लिये उसके हृदय मे स्थान ही न था।

एक छोटी-सी लड़की पैदा हुई। सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने अपने आपको उसे समर्पित कर दिया। शुरू मे उल्लास के साथ लेलेचका के जीवन की आनन्ददायिनी बातो को वह अपने पति से कहा करती थी। पर उसने शीघ्र ही देख लिया कि वह उन बातों को अनिच्छापूर्वक सुनता था—केवल शिष्टता के कारण, और सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना उससे दूर होती गई। वह अपनी छोटी लड़की के प्रति असन्तुष्ट प्रेम अनुभव करने लगी, जो अन्य स्त्रियाँ अपने पति से प्रेम न पाकर दूसरों के प्रति प्रदर्शित करने लगती हैं।

"मामोचका (अम्माँ), आओ हम लोग प्रियाटकी (आँख-मिचौनी) खेलें," लेलेचका बोली। उसने 'र' का 'ल' की तरह उच्चारण किया, जिससे वह शब्द 'लियाटकी' मालूम होता था।

स्पष्ट बोलने की असमर्थता से सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना सदा मुग्ध हो जाती थी। लेलेचका फिर अपनी छोटी-छोटी टाँगों से कालीन पर थप-थप करती हुई भाग गई और पलग के पास पर्दे मे छिप गई।

वह शरारत भरी आँखों से देखती हुई बोली, "तू, तू, मामोचका!"

"मेरी बच्ची कहाँ है?"—माँ ने पूछा। वह इस तरह इधर-उधर देखने लगी मानो उसे लेलेचका सचमुच ही नहीं दीख रही हो।

और लेलेचका जहाँ छिपी थी, वहाँ से प्रसन्नता के मारे हँसने लगी। तब वह कुछ बाहर निकली और उसकी माँ, मानो उसने अभी-अभी ही उसे देख पाया हो, उसके कन्धों को पकड़ कर बोल उठी, "यह है मेरी लेलेचका!"

लेलेचका अपनी माता के घुटनों पर सिर रख कर जोर से हॅसने लगी। उसकी मॉ की ऑखे प्रेम से चमक रही थीं।

"मामोचका, अब तुम छिपो," लेलेचका ने हॅसी रोक कर कहा।

उसकी मॉ छिपने गई। लेलेचका ने इस तरह मुॅह फेर लिया मानो वह वास्तव मे कुछ न देख रही हो, पर सचमुच वह अपनी 'मामोचका' की गति को चोर की तरह देख रही थी। मॉ आलमारी के पीछे छिप गई और बोल उठी, "तू, तू, बच्ची!"

लेलेचका कमरे के चारों ओर दौड़ती फिरी। वह इस तरह हर तरफ खोज रही थी मानो सचमुच ही माँ को देख नहीं सकती थी, पर उसे अच्छी तरह मालूम था कि उसकी मॉ कहॉ छिपी हुई थी।

"मेरी मामोचका कहॉ है?"—लेलेचका ने पूछा। वह यह कहती हुई कि 'वह यहॉ नहीं है, यहॉ नहीं है' एक कोने से दूसरे कोने को दौड़ रही थी।

उसकी माँ सॉस धीमी लेती हुई, दीवार से सिर सटा कर खडी थी। उसके बाल बिखरे हुये थे। उसके लाल ओठों पर पूर्ण आनन्द की मुस्कान खेल रही थी।

दाई फेडोस्या, जो एक सुन्दर और अच्छे स्वभाव की किन्तु बुद्धिहीना स्त्री थी, अपनी मालकिन को देख-कर मुस्करा रही थी, मानो यह सोच रही हो कि भले घर की औरतों की इन पागलों जैसी हरकतो से उसे कोई प्रयोजन नहीं। उसने स्वगत कहा, "मॉ भी छोटी लड़की की तरह है—कैसी उत्कण्ठित हो रही है!"

लेलेचका अपनी मॉ के छिपने के स्थान के निकट पहुॅच रही थी। उसकी मॉ खेल मे तन्मय हो रही थी। उसने सॉस और भी धीमी कर ली, दीवार से और भी सट गई और बाल और भी बिखरा लिये। लेलेचका ने सहसा अपनी मॉ के छिपने के स्थान की ओर देखा और प्रसन्नता से चिल्ला उठी—"मैं तुमको पा गई!"

उसकी तोतली बोली से उसकी माँ और भी प्रसन्न हो गई।

उसने अपनी माँ को कमरे के बीच तक खींचा और उसके साथ खुशी से हँसने लगी। लेलेचका अपनी माँ के घुटनो मे सिर छिपा कर अपनी तोतली बोली मे बातें करने लगी।

इस समय सर्जी मोडेस्टोविच शिशु-गृह की ओर आ रहा था। उसने आधे खुले हुये दरवाजो से सुना कि अन्दर हँसी की और पैर पटकने की आवाज आ रही थी। वह कमरे मे अपनी स्वाभाविक भावशून्य हँसी हँसता हुआ आया। उसकी पोशाक बिलकुल करीने की थी। वह मानो अपने चारों ओर शिष्टता और भावहीनता का वातावरण उत्पन्न कर रहा था। वह जब अन्दर आया, तब खेल उत्साह के साथ चल रहा था। उसने अपनी भावशून्यता के कारण उनके खेल में विघ्न डाल दिया। फेडोस्या भी उद्विग्न हो गई—इस क्षण अपनी स्वामिनी के लिये, इस क्षण अपने लिये। सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना इसी क्षण एकदम शान्त हो गई—और इसका असर उस छोटी-सी लड़की पर भी पड़ा, वह एकदम चुप हो गई और ध्यानावस्थित-सी होकर अपने पिता की ओर देखने लगी।

सर्जी मोडेस्टोविच ने तेजी से कमरे के चारों ओर देखा। उसे यहाँ आना अच्छा लगता था, क्योंकि यहाँ प्रत्येक वस्तु भलीभाँति सजी सजायी रहती थी। सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना की यह आकाक्षा थी कि वह छुटपन से ही अपनी पुत्री को केवल सुन्दर और सुसज्जित वस्तुओं के मध्य ही रक्खे। वह अपनी वेश-भूषा का विशेष ध्यान रखती थी, और यह भी लेलेचका के लिये। एक बात जिसे सर्जी मोडेस्टोविच जरा भी पसन्द नही कर सकता था, यह थी कि उसकी स्त्री सदा शिशु-शाला में ही रहती थी।

उसने निश्चय और अभिमान भरी हँसी हँस कर कहा, "बस, ठीक जैसा मैंने सोचा था...मैं जानता था कि तुम्हे यहीं पाऊँगा!"

वे साथ ही साथ शिशु-गृह से चले। दरवाजे से निकलते समय उसने कुछ लापरवाही के साथ अपनी स्त्री से कहा, "क्या तुम यह नहीं समझतीं कि तुमसे कुछ अलग रहना लडकी के लिये लाभप्रद होगा ?"

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना की आश्चर्यान्वित दृष्टि देखकर वह फिर बोला, "सिर्फ इसीलिये कि उसे भी अपने व्यक्तित्व का आभास होने लगे।"

"वह अभी बिल्कुल छोटी है," सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने कहा।

"खैर, यह मेरी तुच्छ सम्मति है। मै जिद नहीं करता। यह तुम्हारा राज्य है।"

उसकी पत्नी ने उसी की भाँति उत्साहहीन मुस्कान के साथ कहा, "मै सोचूँगी।"

फिर वे और किसी विषय पर बातें करने लगे।

(२)

उस दिन सायकाल के समय दाई फेडोस्या रसोई-घर मे बैठ कर शान्त स्वभाव वाली दासी दार्या और बातूनी मृहराजिन अगाथ्या से अपनी मालकिन और उसकी बच्ची के 'प्रियाटकी' खेलने के विषय मे बातें कर रही थी। उसने कहा, "वह अपना नन्हा-सा सिर छिपा कर 'तू—तू' चिल्लाती है।"

"और," फेडोस्या ने मुस्कराते हुये कहा, "मालकिन भी बिल्कुल छोटी लडकी ही है।"

अगाथ्या सुनती रही और मानो किसी भविष्य की आशङ्का से डर कर अपना सिर हिलाने लगी। उसकी मुद्रा गम्भीर और कुपित-सी हो गई।

"मालकिन ऐसा करती है तो—खैर, कोई बात नही; पर छोटी लड़की भी ऐसा कहती है, यह बुरी बात है।"

"क्यों ?"—फेडोस्या ने कौतूहलवश हो पूछा।

इस कौतूहल के भाव से उसका चेहरा ऐसा बन गया, मानो वह एक लकड़ी की गुड़िया हो।

"हाँ, यह बुरी बात है," अगाथ्या ने निश्चयपूर्ण स्वर मे कहा, "बहुत ही बुरी बात है।"

"खैर, क्यों?" फेडोस्या ने पूछा। उसके मुख पर कौतूहल का भाव और भी जम गया।

अगाथ्या ने दरवाजे की ओर देखते हुये विचित्र, अज्ञेय-स्वर मे कहा, "वह छिपती-छिपती एकदम छिप जायेगी!"

एकदम डर कर फेडोस्या चीख उठी, "तुम क्या कह रही हो?"

उसी स्वर में अगाथ्या कहती गई, "मैं जो कह रही हूँ, वह सत्य है। मेरे वचन याद रखना। यह निश्चय उसी का लक्षण है।"

बुढिया ने अभी अचानक यह सोच लिया था, और उसे इस नये लक्षण के आविष्कार का बड़ा गर्व हो रहा था।

(३)

लेलेचका सो रही थी और उसकी माँ अपने कमरे मे बैठी हुई प्रेम और प्रसन्नता के साथ उसके विषय में सोच रही थी। उसके विचार लेलेचकामय हो रहे थे।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने पता भी न पाया कि फेडोस्या उसके समीप आकर खड़ी हो गई थी। फेडोस्या की आकृति से चिन्ता और भय प्रकट होते थे।

उसने काँपती हुई आवाज मे कहा, "मालकिन! मालकिन!"

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना चौंक पड़ी। फेडोस्या की मुखाकृति ने उसे डरा दिया।

उसने घबरा कर पूछा, "क्या बात है, फेडोस्या? क्या लेलेचका को कोई तकलीफ है?"

"नहीं, मालकिन!"—कहते हुये उसने हाथ से उसे बैठ जाने और

शान्त होने के लिये इशारा किया, "लेलेचका सो रही है। ईश्वर उसकी रक्षा करे। मैं केवल एक बात कहना चाहती थी—बात यह है—लेलेचका हमेशा छिपती रहती है—यह ठीक नही है।"

फेडोस्या भयभीत दृष्टि गड़ा कर अपनी मालकिन को देख रही थी।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने खीझ कर और विचित्र प्रकार से डर कर पूछा, "क्यों ठीक नही है?"

फेडोस्या ने कहा, "मैं कह नहीं सकती, यह कितना बुरा है!"

उसकी आकृति से पूर्ण निश्चय टपकता था।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने रुखाई से कहा, "कृपा करके समझ-बूझ कर बातें करो। तुम क्या कह रही हो, यह मैं बिल्कुल नहीं समझ रही हूँ।"

फेडोस्या ने अचानक शरमाई हुई आवाज मे कहा, "मालकिन, यह एक प्रकार का लक्षण है।"

"सब बेवकूफी है," सेराफिमा ने कहा।

उसने और कुछ सुनने की इच्छा नहीं की। पर एक विचित्र प्रकार के भाव का उसे सहसा अनुभव होने लगा।

फेडोस्या कहती गई, "मैं जानती हूँ कि भले आदमी शकुनों पर विश्वास नहीं करते, पर यह अपशकुन है। लड़की छिपते-छिपते..." सहसा वह रो पड़ी, "वह छिपते-छिपते एक ठण्डी कब्र में छिप जायगी!" कह कर उसने अपने आँसू पोछे।

सेराफ़िमा एलेक्जेड्रोवना ने गम्भीर आवाज मे पूछा, "तुमसे यह सब किसने कहा?"

फेडोस्या ने जवाब दिया, "अगाथ्या ने कहा था। वह जानती है।"

"जानती है?"—सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने इस तरह कहा, मानो

वह इस आशका से किसी प्रकार अपनी रक्षा करनी चाहती हो, "कितनी बेवकूफी है ! कृपया भविष्य मे अब कभी ऐसी बातें कहने के लिये मेरे पास न आया करो। अब तुम जा सकती हो।"

फेडोस्या को बहुत बुरा लगा। वह चली गई।

लेलेचका की मृत्यु की सम्भावना के विचार मात्र से उसे जो डर लगने लगा था, मानो उस पर विजय प्राप्त करने के लिये उसने सोचा, "उँह, कैसी बेवकूफी है ! मानो लेलेचका मर ही जायेगी !" उसने विचार कर यह निश्चय किया कि अज्ञान के कारण ही इन औरतों का शकुनो पर विश्वास है। उसे स्पष्ट मालूम हो रहा था कि खेल मे और जीवन में ऐसा कोई सम्बन्ध नही हो सकता। उसने दूसरी बातों का ध्यान करने की कोशिश की, पर वह इसे भुला ही न सकती थी कि लेलेचका को छिपना पसन्द था।

(४)

दूसरे दिन, लेलेचका को प्यार करने मे मग्न होकर, सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना पिछले दिन की कही हुई फेडोस्या की बाते भूल गई थी।

पर जब वह खाना तैयार करने की आज्ञा देकर शिशु-गृह में गई और वहाँ मेज के नीचे से लेलेचका की 'तू-तू' सुनी, तो उसे एकदम डर-सा लगा। उसने अपने को समझाने की चेष्टा की, पर उसका डर बना ही रहा और उसने दूसरी ओर लेलेचका का ध्यान आकर्षित करने की बहुतेरी चेष्टा की।

लेलेचका अच्छी लड़की थी। उसने माँ की इस नई आज्ञा का पालन करने का यत्न किया, पर आदत पड़ जाने के कारण वह अक्सर 'प्रियाटकी' खेलने लग जाती।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने बहुतेरी कोशिश की, पर भयानक विचार उठते ही रहे।

वह सोचती, "लेलेचका को छिपना इतना पसन्द क्यों है ? शायद वह और बच्चों के समान संसार को प्यार नही करती। क्या इसका अर्थ यह है कि उसे जीने की ही इच्छा नहीं है।"

उसे आँख-मिचौनी से प्रेम था, पर अब डर लगने लगा था। वह कभी-कभी स्वय ही खेलना शुरू करती, पर उसे ऐसा जान पड़ता था मानो यह खेल खेलकर वह कोई बड़ा अपराध कर रही हो।

उसके लिये वे बडे दुःख के दिन थे।

(५)

लेलेचका को नींद आ रही थी। अपने छोटे से सुरक्षित पलंग पर लेटते ही उसकी आँखे थकावट से बन्द होने लगीं। उसकी माँ ने उसे एक नीला कम्बल ओढ़ा दिया था।

लेलेचका ने अपनी माता का आलिंगन किया, चुम्बन किया और फिर अपने प्यारे, नन्हे हाथो को कम्बल मे छिपा कर कहा, "हाथ—तू , तू।"

लेलेचका की माँ के हृदय की गति मानो रुक-सी गई। लेलेचका ने धीरे-धीरे आँखे बन्द की और कहा, "आँखे—तू , तू।"

फिर और भी धीरे-धीरे कहा, "लेलेचका—तू , तू।"

इन शब्दो को कहते-कहते उसे नींद आ गई। उसकी माँ उसे दुःख भरे नेत्रों से देख रही थी।

लेलेचका के भविष्य की चिन्ता करते हुये उसकी माता ने धीरे-धीरे कहा, "मैं इसकी माँ हूँ। क्या मैं इसकी रक्षा नहीं कर सकूँगी ?"

उसने रात को देर तक प्रार्थना की, पर इससे उसका दुःख न मिटा।

(६)

कई दिन बीत गये। लेलेचका को ठण्ड लग गई। रात में ज्वर आ गया। जब फेडोस्या से यह समाचार पाकर सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना लेलेचका के पास गई और उसे इतने कष्ट मे देखा, तो सहसा उसे अपशकुन की याद आ गई और अभी से एक प्रकार का डर मालूम होने लगा।

डॉक्टर बुलाया गया। ऐसे अवसर पर जो कुछ किया जाता है, सब किया गया, पर लेलेचका की दशा बिगड़ती ही गई।

सब लोग शान्त दीख पड़ते थे, पर केवल इसीलिये कि सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना डर न जाये।

सब से अधिक दुःख उसे उस समय होता था, जब फेडोस्या रोते-रोते कहती, "हमारी लेलेचका हमेशा अपने को छिपा लिया करती थी!"

पर सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना समझ न पाती थी कि क्या हो रहा है। वह अत्यधिक घबराई हुई थी।

ज्वर लेलेचका को खाता जा रहा था, और कभी-कभी तो वह बेहोश हो जाती थी और बक-झक करने लगती थी। पर जब कभी उसे होश आता था, वह शान्ति से कष्ट सहन करती थी, जिसमें उसकी माँ को मालूम न हो कि उसे कितना कष्ट सहना पड़ रहा है। उसे मालूम न था कि वह मरने जा रही है।

उसने माँ की ओर देखा और बहुत ही क्षीण स्वर मे कहा, "मामोचका, तू-तू। मामोचका, तू-तू करो।"

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने लेलेचका के पलग के पास, पर्दे में अपना मुँह छिपा लिया।

अत्यन्त क्षीण स्वर मे लेलेचका ने पुकारा, "मामोचका!"

लेलेचका की माँ उसके ऊपर झुकी और लेलेचका ने अपनी

द्युतिहीन आँखो से अन्तिम बार अपनी माँ का निराशापूर्ण मुख देखा।

"एक सफ़ेद मामोचका!" लेलेचका ने कहा।

'मामोचका' का सफेद चेहरा धुँधला पड़ गया और लेलेचका की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। उसने धीरे से पलँग की चादर पकड़ते हुये कहा, "तू-तू!"

उसके गले मे कुछ अटकने-सा लगा; लेलेचका ने अपने पीले पड़ते हुये ओठों को एक बार खोला और फिर बन्द कर लिया और मर गई।

कमरे से बाहर जाने पर सेराफिमा एलेक्जेंड्रोवना को उसका पति मिला।

उसने धीरे-धीरे कहा, "लेलेचका मर गई।"

सर्जी मोडेस्टोविच ने चिन्तापूर्वक उसके पीले चेहरे की ओर देखा। पहिले के रूपवान और सजीव मुखमण्डल पर एक विचित्र प्रकार की जड़ता देख कर उसे बड़ी चिन्ता हुई।

(७)

लेलेचका की अर्थी सजाई गई। सेराफिमा एलेक्जेंड्रोवना पास खड़ी हुई अपनी मृत बालिका को देख रही थी। सर्जी मोडेस्टोविच ने अपनी पत्नी को, सान्त्वना देकर, अर्थी से दूर हटाने की अनेक चेष्टायें कीं, पर सेराफिमा एलेक्जेंड्रोवना ने केवल मुस्करा दिया।

"भाग जाओ," उसने कहा, "लेलेचका खेल रही है। वह अभी एक मिनिट मे उठ जायेगी।"

उसके पति ने धीरे से कहा, "इतनी उद्विग्न न बनो। भाग्य का दोष है।"

पर उसकी स्त्री कहती ही गई, "वह एक ही मिनिट में उठ बैठेगी।"

वह चुपचाप अपनी स्त्री का हाथ पकड़ कर उसे वहाँ से हटा ले गया। उसने कोई आपत्ति नहीं की।

वह शिशु-शाला मे जाकर उन चीजो को देखने लगी, जिनके पीछे लेलेचका छिपा करती थी। वह बराबर कहती जाती थी, "कहाँ छिपी है मेरी लेलेचका, कहाँ है?"

(८)

सर्जी मोडेस्टोविच को सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना की बुद्धि के ठीक न रहने की आशङ्का ने विचलित कर दिया। उसने इस आशा से दफ़नाने मे जल्दी कराई कि शायद इससे वह अपना दुःख कुछ भूल सके।

दूसरे दिन प्रातःकाल, भलीभाँति कपड़े पहिन कर, पुरोहितादि से भरे हुये कमरे मे सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने जाकर लेलेचका के कफन पर अपना मुँह रख कर धीरे से कहा, "तू-तू, बच्ची!"

कई अपरिचित व्यक्ति उसी क्षण लेलेचका को कही अन्यत्र ले जाने लगे।

सेराफिमा एलेक्जेड्रोवना ने आह भर कर कहा, "लेलेचका!"

लेलेचका बाहर ले जाई जा रही थी। उसकी माँ, जिस द्वार से अर्थी निकली थी, उसी के पास फर्श पर बैठ कर बाहर देखती हुई बोल उठी, "लेलेचका, तू-तू!"

फिर वह दरवाजे से सिर निकाल कर हँसने लगी।

रूस

ईश्वर सत्य देखता है, पर प्रतीक्षा करता है

लेखक—लिओ टालसटाय

व्लाडीमीर शहर मे आइवन डिमिट्रिच एक्सिओनोव नामक एक सौदागर रहता था। उसके पास दो दूकाने थी और एक निजी मकान।

एक्सिओनोव एक सुन्दर घुँघराले बालों वाला युवक था। वह मजाक-पसन्द और सगीत-प्रेमी भी था। जब वह बिल्कुल ही जवान था, तब उसे शराब पीने की लत लग गई थी, और अत्यधिक मदपान करके वह बड़ी उद्दडता भी करता था। पर शादी करने के बाद उसने शराब पीना छोड़ दिया, सिर्फ कभी-कभी पी लेता था।

एक बार गर्मी मे एक्सिओनोव निजनी के मेले मे जा रहा था, और जब वह परिवार से विदा लेने लगा, तब उसकी स्त्री ने उससे कहा, "आइवन डिमिट्रिच, तुम आज मत जाओ। मैंने आज तुम्हारे बारे में एक बुरा स्वप्न देखा है।"

एक्सिओनोव हँस पड़ा और बोला, "तुम्हे डर है कि मेले से मै कहीं आनन्द करने चला जाऊँगा ?"

उसकी स्त्री ने उत्तर दिया, "मैं कह नही सकती कि मुझे किस बात का डर है। मैं यही जानता हूँ कि मैंने एक बुरा स्वप्न देखा कि तुम वापस आ गये हो और टोपी उतारने पर मैंने देखा कि तुम्हारे कुछ बाल सफेद हो गये हैं।"

एक्सिओनोव ने हँस कर कहा, "यह तो सौभाग्य-सूचक स्वप्न है !

देखना मै अगर सब चीजे बेच कर मेले से तुम्हारे लिये कोई चीज न लाया तो कहना।"

इस प्रकार वह कुटुम्ब से विदा लेकर गाडी मे बैठ कर चल पड़ा। जब वह आधी दूर निकल गया था तब उसे जान-पहचान का एक सौदागर मिला, और उन दोनो ने एक ही सराय मे रात काटी। उन्होने साथ-साथ चाय पी और फिर अगल-बगल के कमरो में सोने चले गये।

एक्सिओनोव की आदत देर तक सोने की न थी, इसलिये वह सुबह तड़के ही उठ गया और ठडे ही ठडे चल पडने के इरादे से उसने अपने कोचवान को जगाकर उससे घोड़ा जोतने के लिये कहा।

फिर वह सराय के मालिक के पास गया (जो सराय के पीछे ही एक कुटिया में रहता था), और बिल चुका कर आगे बढा।

करीब २५ मील तक जाकर वह घोड़ो के खिलाने-पिलाने के लिये रुक गया। एक्सिओनोव ने कुछ देर तो सराय मे आराम किया फिर बाहर निकल कर उसने चाय बनाने का हुक्म दिया और बैठकर गिटार बजाने लगा।

सहसा एक ट्रोइका (एक प्रकार की गाड़ी) सामने आकर रुक गई और उसमे से एक अफसर और दो सिपाही उतरे। उसने पास आकर एक्सिओनोव से पूछना शुरू किया कि वह कौन था और कहाँ से आया था। एक्सिओनोव ने पूरी तरह से जवाब दिया और पूछा, "क्या आप मेरे साथ चाय न पीजियेगा?" पर वह अफसर उससे प्रश्न करता ही गया। उसने पूछा—"तुमने पिछली रात कहाँ बिताई थी? क्या तुम अकेले थे या तुम्हारे साथ कोई और सौदागर भी था? क्या तुमने आज सुबह उस सौदागर को देखा था? तुम तड़के ही क्यों सराय से चल पड़े?"

एक्सिओनोव को इन प्रश्नो से बड़ा आश्चर्य हो रहा था, पर उसने सब का पूरी तरह से जवाब दिया। फिर उसने कहा, "आप मुझसे इस तरह के सवाल क्यों पूछ रहे हैं, जैसे मैं कोई लुटेरा हूँ? मैं अपने काम से सफर कर रहा हूँ, मेरी इस तरह जाँच करने की कोई जरूरत नही है।"

उस अफसर ने तब उन सिपाहियों को बुलाया और कहा, "मैं इस जिले का पुलीस अफसर हूँ, और मैं तुम्हारी जाँच इस वजह से कर रहा हूँ कि जिस सौदागर के साथ तुमने रात बिताई थी उसका आज गला कटा हुआ पाया गया है। हमें तुम्हारी चीजों की तलाशी लेनी पड़ेगी।"

वे मकान के अन्दर घुसे। सिपाहियों और अफसर ने एक्सिओनोव के बक्स खोल डाले और उनकी तलाशी की। अचानक एक बैग (थैला) मे से एक छुरा निकाल कर वह अफसर चिल्ला कर बोला, "यह किसका छुरा है?"

एक्सिओनोव ने देखा, और अपने बैग से निकाले हुये उस खून से भरे हुये छुरे को देख कर सहम गया।

"इस छुरे पर खून कहाँ से आया?"

एक्सिओनोव ने जवाब देने की कोशिश की पर एक शब्द भी न कह सका, सिर्फ हकलाते हुये इतना कह सका "मैं—नहीं जानता—मेरा नही है।"

पुलीस-अफसर ने कहा, "आज सुबह वह सौदागर बिस्तर पर गला कटा हुआ पाया गया। तुम्हीं ने वह काम किया होगा। मकान अन्दर से बन्द था और वहाँ और कोई था भी नहीं। यह तुम्हारे बैग में से निकला हुआ छुरा है और तुम्हारी सूरत और रंग-ढंग से पता चल जाता है कि यह तुम्हारा ही काम है। बताओ, तुमने उसे कैसे मारा और कितना रुपया चुराया?"

एक्सिओनोव ने कसम खाई कि उसने वह काम नही किया, और कहा, "चाय पीने के बाद मैने उस सौदागर को देखा भी नहीं था। मेरे पास अपने आठ हजार रुपयो (रूबलो) के अलावा और कुछ भी नही है। और वह छुरा भी मेरा नहीं है।" पर उसकी आवाज टूटी हुई थी, चेहरा पीला था और वह भय से इस प्रकार काँप रहा था मानो वही अपराधी हो।

पुलीस-अफ़सर ने सिपाहियों को हुक्म दिया कि वे एक्सिओनोव को पकड़े और बाँध कर गाड़ी मे डाल दे। जब उन्होने उसके पैरों को बाँधकर उसे गाड़ी मे डाला, तो उसने ईश्वर का ध्यान किया और फिर रोने लगा। उसकी सारी चीजे उससे छीन ली गईं और वह समीप के गाँव मे ले जाया गया और वहाँ बन्द कर दिया गया। व्लाडीमीर मे उसके चाल-चलन के बारे मे जाँच की जाने लगी। वहाँ के सौदागरो ने बताया कि पहले वह शराबी गुण्डा था, पर अब भला आदमी हो गया था। उस पर रयाजा के एक सौदागर को कत्ल करने और उसके पास से बीस हजार रुपये चुराने का अभियोग लगा था।

उसकी स्त्री विपत्ति मे ग्रस्त थी—वह यह भी नहीं समझ पा रही थी कि किस पर विश्वास किया जाय, किस पर नहीं। उसके सब बच्चे छोटे-छोटे थे, एक तो दूध पीता था। उन सब को साथ लेकर वह उस गाँव मे गई जिसमे उसका पति बन्दी था। पहले तो उसे अन्दर जाने की अनुमति नहीं मिल रही थी, पर अधिकारियो की अनुनय-विनय करने पर अनुमति मिल ही गई। उसने जब अपने पति को हथकड़ी तथा बेड़ियों मे जकड़ा और चोर-डाकुओं के साथ खड़ा देखा, तो उसे मूर्च्छा आ गई और देर तक उसे होश नही आया। फिर अपने बच्चों को पास खींच कर उसके पास बैठ गई। उसने घर के समाचार बताये और पति का हाल पूछा। उसने पूरा विवरण

सुनाया, और फिर उसकी स्त्री ने पूछा, "अब क्या किया जा सकता है ?"

"हम लोग जार से प्रार्थना करे कि वह एक निर्दोष व्यक्ति को मरने न दे।"

उसकी स्त्री ने बताया कि उसने जार के पास एक अर्जी भेजी थी पर वह ली नही गई।

एक्सिओनोव ने जवाब नहीं दिया, सिर्फ नीचे की ओर देखता रहा।

तब उसकी स्त्री ने कहा, "तुम्हारे बाल सफेद होने वाला मेरा स्वप्न व्यर्थ नही था। तुम्हे याद है ? तुम्हे उस दिन नही चलना चाहिये था।" और अपनी अँगुलियाँ उसके बालो मे दौड़ा कर कहा, "प्यारे वान्या, अपनी स्त्री से तो सच-सच कह दो, तुम्ही ने किया था न ?"

"तो तुम भी मुझ पर शक करती हो ?" एक्सिओनोव ने कहा, और अपने हाथों मे अपना सिर छिपा कर रोने लगा। तब एक सिपाही आया और उसने उसकी स्त्री और बच्चों को चले जाने की आज्ञा दी, और एक्सिओनोव ने उससे अन्तिम विदा ली।

जब वे चले गये तब एक्सिओनोव ने बीती बातों पर फिर से विचार किया, और जब उसे याद आया कि उसकी स्त्री ने भी उस पर सन्देह किया था, तब सोचा, "ईश्वर ही जान पड़ता है सच्ची बात जानता है; उसी से प्रार्थना करनी चाहिये।"

इसके बाद एक्सिओनोव ने अर्जियाँ नही लिखीं, सब आशाये छोड कर वह सिर्फ ईश्वर की प्रार्थना में लग गया।

एक्सिओनोव को कोडे लगाने और खदानों मे भेजे जाने का दण्ड मिला। इसलिये पहले उस पर कोडे पडे, और जब कोड़ों की मार के

घाव भर गये, तब वह दूसरे अभियुक्तो के साथ साइबेरिया भेज दिया गया।

छब्बीस वर्षों तक एक्सिओनोव साइबिरिया मे कैदी रहा। उसके बाल बर्फ की तरह सफेद हो गये और उसकी दाढी पतली और सफेद हो गई थी। उसकी सारी प्रसन्नता जाती रही, कमर झुक गई, वह धीरे-धीरे चलता और बोलता था, कभी हँसता न था, पर अक्सर प्रार्थना किया करता था।

जेल मे एक्सिओनोव ने जूते गाँठने का काम सीख लिया था और वह इससे कुछ कमा कर "सन्तों के जीवन-चरित्र" नामक पुस्तक खरीद लाया। जेल मे जब तक रोशनी रहती थी, वह यही किताब पढ़ता था और रविवार के दिन गिर्जाघर जाकर प्रार्थना और गायन मे लग जाता था, क्योंकि उसकी आवाज अभी तक अच्छी थी।

जेल के अफसर एक्सिओनोव को उसकी सरलता के कारण चाहते थे, और दूसरे कैदी उसकी इज्जत करते थे और उसे "दादा" या "साधू बाबा" कहा करते थे। जब वे अफसरों से कुछ कहना चाहते थे, तब इसे ही अगुआ बनाते थे, और जब कभी आपस मे लड़ते थे, तब इसी के पास अपने मुकदमे ले आते थे।

एक्सिओनोव को घर से कोई समाचार न मिलता था, और वह यह भी नहीं जानता था कि उसकी स्त्री और उसके बच्चे जिन्दे थे या नहीं।

एक दिन अभियुक्तों का नया झुण्ड जेल आया। शाम को पुराने कैदी, नये कैदियो के इर्द-गिर्द बैठकर, उनसे पूछने लगे कि वे कहाँ के रहने वाले थे और क्यों और कैसे जेल भेजे गये। सबके साथ एक्सिओनोव भी बैठकर दुःखित चित्त से उनकी बाते सुनता रहा।

उनमे से एक लम्बे कद और मजबूत बदन का साठ बरस का आदमी अपने पकड जाने और दण्ड पाने की कहानी सुना रहा था।

उसने कहा, "दोस्तो ! एक गाड़ी मे जुता हुआ घोड़ा खोल लेने के कारण ही मुझे चोरी की सजा मिली। मैंने कहा कि मैंने घर जल्द पहुँचने के लिये ही घोड़ा खोल लिया था—घर पहुँचकर उसे फिर छोड दिया। और फिर घोड़े का मालिक मेरा परिचित व्यक्ति था। इसलिये मैने कहा कि सब ठीक है। पर लोगों ने कहा कि 'नहीं, तुमने चोरी की है।' पर मैंने कहाँ और कैसे चुराया, यह वे साबित न कर सके। मैंने एक बार सचमुच एक अपराध किया था, जिसके लिये मुझे सजा मिलनी चाहिये थी, पर उस बार मैं पकड़ा न जा सका। पर अब बिना किसी कारण के यहाँ भेजा गया हूँ ..उँह, यह सब झूठ है, मैं पहले भी साइबिरिया आ चुका हूँ, पर ज्यादा दिन नहीं ठहरा।"

किसी ने पूछा, "तुम कहाँ से आये हो ?"

"व्लाडीमीर से। मेरा परिवार वहाँ का रहने वाला है। मेरा नाम मकार है, और लोग मुझे सेम्योनिच भी कहते हैं।"

एक्सिओनोव ने सिर उठाकर कहा, "सेम्योनिच, क्या तुम मुझे व्लाडमीर के एक्सिओनोव खानदान के बारे मे कुछ बता सकते हो ? क्या वे अभी जीते हैं ?"

"उन्हे जानता हूँ ? जरूर जानता हूँ ! एक्सिओनोव अमीर लड़के हैं गो कि उनका बाप, सुनते हैं, हम लोगों के ऐसा पापी है और यहीं साइबिरिया में पडा है। दादा, तुम यहाँ कैसे आये ?"

एक्सिओनोव अपने अभाग्य के विषय मे बाते करना नहीं चाहता था। उसने सिर्फ ठडी साँस लेकर कहा, "इन छब्बीस वर्षों से मैं अपने पापों के कारण यहाँ पड़ा हूँ।"

"कौन पाप ?" मकार ने पूछा।

पर एक्सिओनोव ने सिर्फ यही कहा, "खैर, खैर—जरूर मैं इस योग्य रहा हूँगा।" एक्सिओनोव ने और कुछ नही कहा, पर उसके साथियों ने मकार को सब किस्सा बता दिया—कैसे किसी ने, किसी

सौदागर का खून करके छुरा एक्सिओनोव के बैग मे डाल दिया, कैसे वह पकड़ा गया, इत्यादि।

मकार ने यह सुनकर ताली पीटते हुये चिल्लाकर कहा, "ओह, यह तो खूब है। कमाल है ! पर दादा, तुम कितने बूढ़े हो गये हो !"

लोगों ने पूछा कि उसे इतना आश्चर्य क्यों हुआ, और उसने एक्सिओनोव को पहले कहाँ देखा था, पर मकार ने कुछ जवाब न दिया। उसने यही कहा, "लड़को, यह कमाल हुआ कि हम लोग यहाँ इस तरह मिले।"

इन बातों से एक्सिओनोव ने सोचा कि शायद इस आदमी को असली खूनी का नाम मालूम है। इसलिये उसने पूछा, "सेम्योनिच, शायद तुमने इस मामले को सुन रक्खा होगा, या शायद तुम पहले मुझसे मिले हो।"

"मैं कैसे न सुनता ? दुनिया अफवाहों से भरी है। पर बहुत दिन बीत गये, और मैं भूल गया हूँ कि मैंने क्या सुना।"

एक्सिओनोव ने कहा, "शायद तुमने यह सुना होगा कि सौदागर को किसने मारा था ?"

मकार ने हँसकर जवाब दिया, "जिसके बैग मे छुरा पाया गया था, वही होगा। अगर किसी और ने छुरा वहाँ छिपा दिया था, तो जैसा कि कहा जाता है 'जब तक पकड़ा न जाय तब तक चोर नही है।' जब बैग तुम्हारे सिर के नीचे था, तब कोई उसमें कुछ कैसे रख सकता था ? इससे तुम अवश्य ही जग जाते।"

जब एक्सिओनोव ने यह शब्द सुने तब उसे निश्चय हो गया कि इसी ने खून किया था। वह उठकर चला गया। सारी रात जागता रहा। उसे बडा दुःख हो रहा था, और कई चित्र उसकी आँखों के आगे आ रहे थे। विदा के समय का चित्र उसे दिखाई पड़ा। वह मानो अपनी स्त्री को हँसती-बोलती देख रहा था। फिर उसने अपने

बच्चों को देखा—एक कोट पहने खड़ा था, दूसरा माँ की गोद में था। फिर उसे अपने पुराने जीवन की याद आई। वह कितना आनन्दित रहता था! उसे अपने गिरफ्तार होने से पहिले का आराम से गिटार बजाना याद आया। फिर उसे कोड़े खाना, और वहाँ छब्बीस बरस बिताना याद आया। इस सबसे वह इतना दुखी हुआ कि उसे मर जाने की इच्छा होने लगी।

"और यह सब उसी शैतान की करतूत है!" एक्सिओनोव ने सोचा और वह मकार पर इतना क्रोधित हुआ कि बदला लेने का निश्चय करने लगा। सारी रात प्रार्थना करता रहा, पर शान्ति न मिली। दिन में वह मकार के पास तक न गया।

दो हफ्ते बीत गये। एक्सिओनोव को रात भर नींद नहीं आती थी।

एक बार वह जब रात मे जेल के अन्दर घूम रहा था, तब उसने देखा कि जिन कोठरियो मे कैदी सोते थे, उनमे से एक से जरा मिट्टी गिर रही थी। वह रुक कर देखने लगा। सहसा नीचे से मकार निकला और डर कर उसकी ओर देखने लगा। एक्सिओनोव चुपचाप चला जाना चाहता था, पर मकार ने उसका हाथ पकड़ कर उसे रोका और बोला, "बुड्ढे, मैंने दीवार फोड़ ली है। तू चुपचाप मेरे साथ भाग चल्। अगर किसी से कह देगा, तो मैं मार डाला जाऊँगा, पर तुझे भी मार डालूँगा!"

एक्सिओनोव क्रोध से काँप रहा था। उसने हाथ छुड़ा लिया और बोला, "मैं भागना नही चाहता और रही तेरी मुझे मारने की बात, सो तो तू मुझे पहिले ही मार चुका है। किसी से कुछ कहना न कहना मैं ईश्वर की आज्ञा के अनुसार करूँगा।"

दूसरे दिन सिपाहियो ने सेंध देख ली। जेलर आया और सेंध फोड़ने वाले का पता लगाने को हुक्म दे गया। सभी कैदियो ने अपराध अस्वीकार किया। जो जानते थे उन्होने भी मकार का नाम नहीं बताया।

आखिर जेलर ने एक्सिओनोव से पूछा, "बुड्ढे, तुम सच्चे आदमी हो। कसम खाकर कहो कि सेंध किसने फोडी है ?"

मकार आराम से खडा था। एक्सिओनोव कॉप रहा था। उसने सोचा, "मैं इस शैतान को क्यो जाने दूॅ ? पूरी तरह से सजा दूॅगा। पर शायद यह लोग इसे मार डाले ! और फिर मेरा क्या फायदा होगा ?"

जेलर ने पूछा, "कहो बुड्ढे, सच-सच बताना।"

एक्सिओनोव ने मकार की ओर देखा और कहा, "मुझे मालूम है पर मैं नहीं बता सकता। आपकी जो इच्छा हो कीजिये।" जेलर ने बहुत कोशिश की, पर एक्सिओनोव ने कुछ न बताया।

रात मे एक्सिओनोव जब सोने जा रहा था, तब कोई चुपके से उसके कमरे में आया। वह मकार था।

एक्सिओनोव ने पूछा—"तुम मुझसे अब और क्या चाहते हो ? यहॉ क्यों आये हो ?" मकार चुप था। एक्सिओनोव ने कहा, "भाग जाओ, नहीं तो सिपाहियों को बुलाऊँगा।"

मकार ने कहा, "आइवन डिमिट्रिच ! मुझे माफ करो।"

"किस लिये ?"

"मैंने ही सौदागर को मार कर तुम्हारे बैग मे छुरा छिपा दिया था। तुम्हे भी मार डालता, पर आवाज सुन कर भाग गया।"

एक्सिओनोव चुप था। मकार ने कहा "मुझे माफ करो। मैं कह दूॅगा कि खून मैने किया था, औप फिर तुम छूट जाओगे।"

एक्सिओनोव बोला—"बाते करना आसान है। मैं छब्बीस बरस तक यहॉ तकलीफ उठा चुका हूॅ। अब कहॉ जाऊॅ ? मेरी स्त्री मर गई है। और वे मुझे भूल गये हैं। मैं जाऊॅ तो कहॉ जाऊॅ ?"

मकार सिर पीट कर चिल्लाने लगा, "आइवन डिमिट्रिच ! मुझे माफ करो।"

फिर वह रोने लगा। उसे रोता देख एक्सिओनोव भी रोने लगा। उसने कहा, "ईश्वर तुम्हे माफ करेगा।" इतना कहकर उसका दिल हल्का हो गया। वह जेल से छूटना नही चाहता था. फिर भी मकार ने अपराध स्वीकार कर लिया। पर जब एक्सिओनोव की रिहाई का हुक्म आया, तब वह मर चुका था।

रूस

एक रात

लेखक—मैक्सिम गोर्की

वह जाडे की रात थी। उस रात को सयोग से मैं एक ऐसी परिस्थिति में जा पड़ा, जब कि मेरे पास जेब में एक कौडी भी नहीं थी, और न रात काटने का ठिकाना ही। ऐसे शहर में मैं आ पड़ा था जहाँ मैं किसी को भी नही जानता था। कुछ ही दिन पहले मैं अपना प्रत्येक कपड़ा बेच चुका था। पर बिना उनके कहीं जाना असम्भव तो नहीं था, इसलिये मैं शहर छोड़ कर 'वेस्त' नामक मुहल्ले की ओर चल पड़ा। यह जहाजों का अड्डा था। जहाजो के आने-जाने के मौसम मे परिश्रमी-जीवन के शोर-गुल के मारे वहाँ चहल-पहल रहती थी, पर अब—अक्टूबर के अतिम दिनो मे—यह बिल्कुल निर्जन और सुनसान हो गया था। एकदम गहरा सन्नाटा छाया हुआ था। मैं नम बालू पर पैर घसीटता हुआ, और किसी लकडी के टुकड़े को पा जाने की आशा से बालू को ध्यान से देखता हुआ चला जा रहा था। मैं बिल्कुल अकेला उन निर्जन घरों के बीच मे होकर जा रहा था, और सोच रहा था—'अगर पेट भर खाना मिल जाता!...'

हमारी आधुनिक सभ्यता मे हमारे मास्तिष्क की भूख पेट की भूख से जल्दी शान्त की जा सकती है। पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिये सड़को पर चक्कर काटते समय, हमारे चारो ओर खडी हुई ऊँची-ऊँची अट्टालिकायें, जो बाहर से देखने में बुरी नहीं जान पडती, मन में शिल्प-कला के और भी ऊँचे-ऊँचे भाव जाग्रत कर देती हैं। सड़क

पर साफ-सुथरे और सुन्दर कपडे पहिने हुये सभ्य लोग हमें मिल जाते हैं जो हमसे चालाकी से कतरा कर निकल जाते हैं और हमारे दयनीय अस्तित्व को देख कर भी अनदेखा कर देते हैं।

हाँ, एक भूखे आदमी का मस्तिष्क एक भरपेट खाये हुये मनुष्य के मस्तिष्क से अधिक स्वस्थ रहता है। और ऐसी ही बात से, भूखे आदमी के पक्ष मे ऐसे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

शाम हो चली थी। पानी बरस रहा था और उत्तरी ठडी हवा तेजी से बह रही थी। वह लकड़ी के बने हुये छोटे-छोटे खाली घरों और दूकानो मे साँय-साँय करती हुई, सरायों की कॉच की खिड़कियों मे से बहती हुई, नदी की छोटी लहरो मे, जो जोर की आवाज के साथ नदी के किनारो पर पानी बिखेर कर, अपनी श्वेत चोटियो को ऊपर दूर तक फेक कर एक दूसरे के कंधे से कन्धा भिड़ा कर, दौड़ रही थीं, उन्हीं लहरो के ऊपर तक फेन उछालती हुई बह रही थी। मानो नदी सर पर आये हुये भयकर जाड़े का अनुभव कर रही थी, और इस डर से कि कही वह उत्तरी हवा उसके शरीर पर बर्फ की वर्षा न करने लगे, भगी जा रही थी।

आकाश काला और गम्भीर था, और पानी की बूँदे जोर से पड़ रही थीं। प्रकृति की उस नीरवता में मेरा ध्यान एक पेड़ की ओर आकर्षित हुआ, जिसकी जड़ से एक उल्टी नाव बँधी हुई थी।

वह छोटी सकरी नाव . ठण्डी हवा के झोकों को सँभालता हुआ वह पुराना वृक्ष ..सारी प्रकृति नीरव और सहमी हुई जान पड़ती थी! आकाश के न रुक सकने वाले आँसू ..और प्रकृति का वह करुण रूप! मानो सब कुछ मर चुका था ..केवल मुझे उस निर्जन और डरावनी प्रकृति के बीच मे छोड़ कर . और मानो अब मेरे लिये भी मृत्यु प्रतीक्षा कर रही थी!

मैं भीगी हुई बालू पर चला जा रहा था। मेरे दाँत असहनीय भूख

और उस कंड़ाके की सर्दी का स्वागत करने के लिये कट-कटा कर मधुर सगीत सुना रहे थे। मैं बडे ध्यान से खाने को ढूँढने का प्रयत्न कर रहा था। इतने मे मेरा ध्यान स्त्री की-सी एक आकृति पर गया जो जमीन पर झुकी हुई थी। उसके पास जाकर मैंने यह पता लगाने की चेष्टा की कि वह क्या कर रही है। वह बालू मे, एक बडे लकड़ी के टोकरे के नीचे हाथ से गड्ढा खोद रही थी।

"तुम क्या कर रही हो?" उसके बहुत पास जाकर मैंने पूछा।

वह डर के मारे चीख उठी, और उठ कर खड़ी हो गई। वह मेरे सामने खड़ी होकर, अपनी बड़ी-बड़ी भूरी आँखो मे न जाने कितना भय और आशका भर कर, मेरी ओर देख रही थी। वह लगभग मेरी ही उम्र की रही होगी। उसके चेहरे की सुन्दरता तीन नीले दागों के द्वारा बिगड़ गई थी। पर यह दाग मानो बड़े ध्यान से बनाये गये थे। तीनों एक नाप के थे। दो तो दोनों आँखो के नीचे थे, और तीसरा जो उन दोनों से कुछ बड़ा था, मत्थे के बीच में—ठीक नाक की सीध पर।

उसका डर धीरे-धीरे मिट गया। वह बोली—"तुम्हें भी कुछ खाने को चाहिये क्या? तो आओ ..गड्ढा खोदो...मेरे हाथ दुखने लगे हैं... वहाँ खोदो..." उसने सिर हिला कर लकड़ी के उन घरों में से एक की ओर इशारा किया, "वहाँ रोटी भी है...वहाँ अभी तक कारबार चलता है..."

मैंने उसकी आज्ञा का पालन किया। मैं यह नहीं कह सकता कि गड्ढा खोदने के लिये झुकते समय मुझे उचित-अनुचित का ध्यान भी था, जिसका ध्यान, अनुभवी मनुष्यों की राय मे, प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन की हर एक घड़ी मे रखना चाहिये। वह काम करने में मैं इतना तल्लीन हो गया था कि उस टोकरे में क्या है, यह जानने की उत्सुकता को छोड़ कर, सब कुछ भूल गया।

शाम हो चली थी। हम घने कुहरे मे कैद होते जा रहे थे। नदी की लहरे और भी जोर के साथ किनारो पर टक्कर ले रही थीं, और पानी की बौछार उस नाव की दीवारो पर और भी तेजी से पड़ने लगी थी। कही दूर पर शहर का चौकीदार आवाजे देता हुआ चला जा रहा था।

"इनमे पेंदा है क्या ?" मेरी साथिन ने धीरे से पूछा। मैं समझ नही सका कि वह किस चीज़ के बारे मे पूछ रही है। मैं चुप रहा।

"मैं पूछ रही हूँ, क्या ठोकरे मे पेंदा है ? अगर है तो हम लोग इसे तोड़ने की चेष्टा फिजूल ही कर रहे हैं। हो सकता है सिवाय लकड़ी के तख्तो के हमे इसके नीचे कुछ भी न मिले।...कैसे निकाले हम इसे ?...अच्छा...ताला तोड डालो तो ठीक होगा। कमजोर-सा तो है।"

औरतों के दिमाग़ मे अक्लमन्दी की बाते अधिकतर नहीं आती हैं। पर जैसा कि आप देख रहे है कभी-कभी उनका आ जाना असम्भव भी नही है।

ताला खोज निकाल कर मैंने उसे झटके से तोड़ डाला। मेरी साथिन साँपिन की तरह रेंग कर खाली जगह से अन्दर घुस गई और धीरे से बोली, "तुम बडे बहादुर हो !"

'आजकल किसी स्त्री द्वारा कहा गया प्रशंसा का एक शब्द भी मेरे लिये किसी पुरुष द्वारा की गई स्तुति से कही अधिक महत्वपूर्ण है। पर उस समय मैं ऐसा नही था। इसलिये उसकी प्रशसा की ओर कुछ ध्यान न देकर उत्सुकता से पूछा, "उस टोकरे मे है क्या ?"

उसने गिनना शुरू किया—"एक टोकरी बोतल...थोड़े से जानवर के बाल—वगैरह-वगैरह।" यह सब तो खाने की चीजे नही थी। मेरी सारी आशाएँ कपूर की तरह उड़ गई। पर इतने ही मे वह चिल्ला पड़ी—

"अरे यह देखो !"

"क्या ?"

"रोटी ! सिर्फ जरा भीगी है...लो थामो !"

एक रोटी आकर मेरे पैरों के पास गिरी और इसके बाद स्वय वह—मेरी वीर माथिन ! रोटी में से एक टुकडा मुँह मे भर कर मैं धीरे-धीरे खाने लगा ।

"मुझे भी थोड़ा दो...और अब हम लोगो का यहाँ रहना ठीक नहीं है—पर कहाँ जायँ ?" और हमारे रहने की जगह ढूँढने के लिये चारो ओर देखने लगी । इतने मे वह बोली—"वहाँ एक उल्टी नाव है न ? वहीं हम चले ।"

"चलो फिर", मैंने कहा, और हम दोनों चल दिये । अपने चोरी के माल के अस्तित्व को शीघ्र से शीघ्र मिटा देने के लिये, हम जल्दी-जल्दी रोटी खाते चले जा रहे थे । पानी और भी तेजी से बरसने लगा । कुछ दूर पर सीटी की आवाज सुनाई पड़ी । हृदय काँप उठा, पर लालच के मारे मैं खाता ही चला जा रहा था । और वह लड़की भी मेरी बॉयी ओर उसी चाल से चल रही थी ।

"तुम्हारा नाम क्या है ?" मैंने पूछा ।

"नाताशा ।"

मैंने उसकी ओर देखा । मेरा मन रो पड़ा, और फिर मैंने सामने घने कुहर की ओर देखा, और मुझे लगा मानो नियति मेरे सामने खड़ी होकर करुणा और शुष्क हँसी हँस रही !...

नाव की दीवारों पर वर्षा कोड़े मार रही थी, और उसकी धीमी आवाज से मन मे दुःख के भाव उठ रहे थे । नदी की लहरे किनारो से टकरा कर इस तरह की आवाज कर रही थीं मानो वह कुछ बहुत ही ऊबाने वाली कहानी सुना रही हो . मानो वह स्वय ही ऊब कर उसे खतम कर देना चाह रही थी, पर खतम करना उसके वश की बात

नही थी। वर्षा का शब्द इस शब्द से मिल गया था। उज्ज्वल गरमी के बाद इस वर्षा के कारण जो परिवर्त्तन हो गया था, उससे दुखित होकर पृथ्वी ठडी साँस ले रही थी।

नाव के नीचे हम आश्रय लेकर बैठे थे, पर वह स्थान बडा कष्ट-दायी था। सकरी, गन्दी और गीली जगह, और फिर नाव के फटे पेंदे से बौछार और ठडी हवा तीर की तरह आ रही थी। ठड से काँपते हुये हम चुपचाप बैठे थे। नाताशा गठरी की तरह सिकुड़ कर और नाव को टेक कर बैठी थी। अपने दोनो हाथो से घुटनों को लपेटे हुये, और घुटनों पर ठोढी रखे हुये वह स्थिर दृष्टि से नदी की ओर देख रही थी। मैं बहुत चाह रहा था कि उससे कुछ बोलूॅ, पर किस तरह शुरू करूँ, यह मैं समझ नही पा रहा था। आखिरकार वही पहिले बोली—"जिन्दगी भी क्या चीज है!"

बेचारी भोली-भाली लड़की ने अपनी समझ के अनुसार, बहुत सोच-विचार कर यह बात कही, जिसका मैं विरोध नही कर सका। मैं चुप रहा, और वह भी उसी तरह बैठी रही।

"अगर...ऊँह, भुन-भुनाने से ही क्या होगा?"

उसने फिर कहना शुरू किया। यह स्पष्ट था कि अपने अतीत का स्मरण करके और अपने दुःखमय जीवन की सारी उलझनो, सारे कष्टो का खयाल करके वह इसी निष्कर्ष पर पहुँची है कि अपने को जीवन के उपहास से बचा रखने के लिये वह केवल भुन-भुनाने के ही योग्य थी!

नाताश की यह बात मेरे लिये बहुत दुःखदायी थी। मुझे लगा कि अगर मैं कुछ देर और न बोला तो निश्चय रो पडूँगा, और एक स्त्री के सामने जो स्वय भी कष्टों से घिरी हुई है...दुःखो की चोट पर चोट वर्दाश्त करते हुये भी जिसकी आँखो मे आँसुओं का नाम भी नहीं है! मैंने उससे बोलने का निश्चय किया।

"तुम इस तरह मारी-मारी क्यो फिर रही हो ?" उस समय मुझे यही प्रश्न सब से अधिक उपयुक्त जान पडा।

"यह सब कुछ पाश्का के कारण हुआ है।" उसने कहा।

"वह कौन है ?"

"मेरा प्रेमी . वह एक रोटी वाला था।"

"तुमको वह मारता था ?"

"जब-जब वह शराब पीता था, तब-तब मारता था ..अक्सर ही।"

और अचानक मेरी ओर घूम कर वह पाश्का के और अपने सम्बन्ध मे बाते करने लगी। वह एक लाल मूछों का रोटी वाला था, और "बैञ्जो" बहुत अच्छा बजाता था। वह उससे मिलने आया था, और नाताशा ने उसको बहुत पसन्द किया था। वह बड़ा अच्छा हॅसोड़ आदमी था और कपडे भी खूब साफ-सुथरे पहिनता था। इन्ही सब कारणो से वह उससे प्रेम करने लगी थी, और उसकी ऋणी हो गई थी। वह उससे पैसे माँग कर ले जाया करता था, और उनसे शराब पीकर नाताशा को पीटता था। पर नाताशा इसकी बिल्कुल परवाह न करती, अगर वह दूसरी लड़कियो के फेर मे न पड गया होता।

"क्या यह काफी बेइज्जती की बात नही है ? क्या मैं औरो से भी गई बीती हूॅ ? परसों मैं अपनी मालकिन से छुट्टी लेकर उसके यहाॅ गई थी। और उसके यहाॅ मैंने डिम्का को देखा। मैंने उससे कहा—'बदमाश लुच्चे !' इस पर उसने मुझे कस कर लात मारी, और मेरे बाल पकड़ कर मुझे बाहर निकाल दिया। उसने मेरी यह दशा कर दी है। अब भला अपनी मालकिन के सामने कैसे जाती ? उसने मेरे सारे कपडे खराब कर दिये हैं, और मेरा रूमाल भी फाड डाला। ओह, भगवान् ! अब मेरा क्या होगा !"

हवा और भी ठडी और भयकर होती जा रही थी। मेरे दाॅत कट-कटा रहे थे, और वह जाड़े से बचने के लिये मेरे अत्यन्त पास

आकर बैठ गई थी। मैं अँधेरे मे उसकी आँखों की चमक को देख रहा था।

"तुम मर्द लोग कितने पाजी होते हो! तुम सब को चूल्हे मे जला देने को जी चाहता है! जी करता है कि तुम लोगो के टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ। अगर तुम में से कोई मर भी रहा हो, तो मैं उस पर दया न करूँ और उसके मुँह मे थूक कर चली जाऊँ। तुम नीचों के लिये हम औरते अपना बलिदान कर देती हैं, पर तुम! तुम लोग हमे पैरों से ठुकरा कर अलग हट जाते हो! नीच...बदमाश!"

वह जी भर कर मर्दों को गालियाँ दे रही थी। पर यह सब जिस ढँग से कहना चाहिये, वह उस ढँग से नही कह रही थी। उसकी आवाज बहुत शान्त थी। उसकी गालियो मे घृणा नही थी—क्रोध भी नही था। पर शान्तिपूर्वक कही गई उस लड़की की इन बातो का जितना प्रभाव मेरे मन पर पड़ा, उतना आज तक पढ़ी गई किसी भी किताब का, या आज तक सुने हुये किसी भी व्याख्यान का नहीं पड़ा। और इसका कारण यही था कि आँखों के सामने मरते हुये मनुष्य का कष्ट, मृत्यु के सजीव से सजीव वर्णन से कहीं अधिक दुःखदायी होता है।

मुझे वास्तव में बहुत कष्ट हो रहा था—मृत्यु से उतना नहीं जितना नाताशा के शब्दों से। उसी समय मुझे लगा, मानो दो कोमल हाथों से मेरा गला घिरा हो, और एक बहुत ही मधुर और प्यार भरी आवाज ने पूछा—"तुम्हे क्या कष्ट है?"

मैं यह विश्वास करने को तैयार था कि वह प्रश्न मुझसे किसी और ने किया है, नाताशा ने नही, जिसने अभी-अभी कहा था कि दुनिया के सब पुरुष झूठे और दगाबाज होते हैं! पर पूछने वाली नाताशा ही थी, और अब वह प्रश्न पर प्रश्न कर रही थी—

"तुम्हे क्या तकलीफ है? कही दर्द है? जाड़ा लग रहा है? बहुत

ज़्यादा ? सो तुम भी अजीब आदमी हो ! मुझसे कहा क्यों नहीं ? आओ, यहाँ लेट जाओ।...और मै...हाँ, मै तुम्हारे ऊपर लेट रहती हूँ . हाँ, अब ठीक है ! ठीक है न ? अब मुझे अपनी बाहों में कस लो—और ज़ोर से ! अब तुम्हे जल्द ही गर्मी लगने लगेगी। फिर हम लोग पीठ से पीठ लगा कर लेट जायँगे। फिर रात तो जल्द कट ही जायेगी।...क्या तुमने शराब पी है ?...खैर कुछ हर्ज नही..."

नाताशा ने मेरा कष्ट दूर किया...उसने मुझे प्रोत्साहित किया।

इस जरा-सी बात मे मेरे लिये कितना व्यग्य, कितना अर्थ था ! सोचो तो, मैं एक दरिद्र लड़की की सहायता का भिखारी था, जिसके जीवन का कही कुछ भी मूल्य नहीं, और जिसका इतनी बड़ी दुनिया में कहीं ठिकाना नहीं था ! और जिसे सहायता देने का मैंने कभी स्वप्न भी नहीं देखा था।

ओह ! अगर मुझसे कोई यह कहता कि वह सब हृदय को रुलाने वाला दुःख भरा स्वप्न था, तो मैं मान जाता। पर ऐसा सोचना मेरे लिये असम्भव था...पानी की ठडी बूदे मेरे शरीर पर पड़ रही थीं... हवा का रूप भयकर हो गया था, वर्षा नाव की दीवारों से टक्कर ले रही थी...और हम दोनों जाड़े मे काँप रहे थे। यह सब सच था, और मुझे विश्वास है कि किसी ने इस सत्य का इतना भयकर स्वप्न भी न देखा होगा।

पर नाताशा किसी न किसी चीज के बारे मे बकती ही जा रही थी। बडे प्रेम और सहानुभूति के साथ, जैसा सिर्फ स्त्रियाँ ही कह सकती हैं। उसकी आवाज और शब्दो ने मानो मेरे अन्दर एक आग धधका दी। बाहर की वर्षा की तरह मेरी आँखों से भी वर्षा की झड़ी लग गई। मानो मेरे मन का सारा मैल, सारा दुःख आँसू बन कर बहा जा रहा था..

हाँ, नाताशा ने मुझे शान्ति प्रदान की थी !

"बस, बस, बहुत हो चुका। ईश्वर तुम्हारी सहायता करेगा—तुम फिर अपना पहिला जीवन पा जाओगे—रोओ मत!"

न जाने कितने चुम्बन उससे मुझे मिले...आग की तरह जलते हुए!...और सब यो ही!...नाताशा पहिली स्त्री थी जिसने मुझे प्यार किया—और सबसे मूल्यवान् प्यार, क्योंकि इसके बदले मुझे जीवन मे कुछ मिला था!

"इस तरह मत रोओ...तुम्हारे लिये कल कोई जगह मैं ढूँढ़ूँगी। जरूर...अच्छा?" अपने शात स्वर मे उसने मेरे कान मे कहा—मानो वह आवाज कहीं दूर स्वप्न से आई थी। पौ फटने तक हम लोग वहीं रहे।

पौ फटते ही हम सब उस छोटी-सी नाव के नीचे से निकल कर शहर की ओर चले। हम लोगों ने प्रेम से एक दूसरे से विदा ली और तब से हम लोग फिर कभी नहीं मिले! मैंने छः महीने तक कोने-कोने में अपनी नाताशा की तलाश की जिसके साथ मैंने वह रात बिताई थी, पर उसे फिर नही पा सका!

अगर वह मर गई है (मौत उसके लिये अच्छी ही है), तो उसकी आत्मा को शान्ति मिले। अगर वह जिन्दा है, तो भी मैं कहूँगा उसकी आत्मा को शान्ति मिले और अपने पतन से वह सदा अनभिज्ञ रहे।

रूस

डार्लिङ्ग

लेखक :—ऐण्टन चेख़व

गर्मी के दिन थे। ओलेन्का अपने मकान के पिछले दरवाजे पर बैठी थी। यद्यपि उसे मक्खियाँ बहुत सता रही थीं, फिर भी यह सोच कर कि शाम बहुत जल्दी ही आने वाली है, वह बड़ी प्रसन्न हो रही थी। पूर्व की ओर घने, काले बादल इकट्ठे हो रहे थे।

कुकीन, जो ओलेन्का के मकान में ही एक किराये का कमरा ले कर रहता था, बाहर खड़ा आकाश की ओर देख रहा था। वह "ट्रिवोली नाटक कम्पनी" का मैनेजर था।

"ओह, रोज-रोज पानी, रोज-रोज पानी! नाक में दम हो गया।" कुकीन अपने ही आप कह रहा था—"रोज कम्पनी का नुकसान होता है।" फिर ओलेन्का की ओर मुड़ कर बोला, "मेरी जिन्दगी कितनी बुरी है? विना खाये-पिये रात भर परिश्रम करता हूँ, ताकि नाटक में जरा-सी भी गलती न निकले। सोचते-सोचते मर जाता हूँ, पर जानती हो फल क्या होता है? इतने ऊँचे दर्जे की चीज को कोई भी नहीं समझ पाता। जनता बेवकूफ़ी की बातों को, दौड़-धूप को बहुत पसन्द करती है। और फिर मौसम का यह हाल है! देखो न, रोज शाम को पानी बरसने लगता है। मई की दस तारीख से पानी शुरू हुआ, और सारे जून भर रहा। जो पहले आते भी थे, वे अब इस पानी के मारे नहीं आते। कुछ भी नहीं मिलता; अभिनेताओं को देने के लिये रुपया कहाँ से लाऊँ, कुछ भी समझ में नहीं आता।"

दूसरे दिन शाम को ठीक समय पर आकाश मे फिर बादल इकट्ठे होने लगे। कुकीन लापरवाही से हँस कर बोला—"ऊँह, जाने भी दो! चाहे मुझे और मेरी कम्पनी को डुबा दे, पर मुझे कुछ भी फिक्र नहीं है। जाने दो, अगर इस जीवन मे मैं अभागा ही रहूँगा, तो रहूँ। यदि सब अभिनेता मिल कर मेरे ऊपर मुकदमा चला दे तो कितना अच्छा हो। हा...हा...हा—!"

तीसरे दिन फिर वही पानी! बेचारे कुकीन का हृदय रो रहा था।

ओलेन्का ने चुपचाप बहुत ध्यान से कुकीन की बाते सुनी। कभी-कभी उसकी आँखों से दो बूँद आँसू भी टपक पड़ते थे। ओलेन्का को कुकीन से बहुत सहानुभूति थी। कुकीन एक नाटा, पीला और लम्बे बालों वाला आदमी था। उसके बाल हमेशा बिखरे और मुँह उदास रहा करता था। उसकी आवाज बहुत पतली और तेज थी।

ओलेन्का अभी तक किसी न किसी को प्यार करती आई है। वह अपने बुड्ढे बीमार बाप को प्यार कर चुकी है, जो हमेशा अँधेरे कमरे मे, आराम कुर्सी पर लेट कर, लम्बी साँसे लिया करता था। वह अपनी चाची को प्यार कर चुकी है, जो साल भर मे एक या दो बार ब्रिआत्सका से ओलेन्का को देखने आया करती थी। हाँ, उसके पहले उसने अपनी शिक्षका को प्यार किया था। और अब वह कुकीन से प्रेम करती थी।

ओलेन्का चुप्पी और दयालु थी। उसके दुबले शरीर, और पीले, पर मुस्कराहट भरे चेहरे को देख कर, लोग हँस कर कह देते, "हाँ—कोई वैसी बुरी तो नहीं है।" औरते बातचीत करते-करते उसे "डार्लिङ्ग" कह कर सम्बोधित किया करती थीं।

उसका यह मकान, जो उसकी पैतृक-सम्पत्ति थी और जिसमें वह बचपन से ही रह रही थी, 'ट्रिवोली नाटक कम्पनी' के पास, जिप्सी रोड पर था। वह सुबह से शाम तक ट्रिवोली के गाने सुना करती

थी, साथ ही साथ कुकीन का गुस्से से चिल्लाना भी सुन सकती थी। यह सब सुन कर उसका कोमल हृदय पिघल जाता, वह रात भर सो न सकती। जब एक पहर रात गये कुकीन घर लौटता, तो वह मुस्करा कर उसका स्वागत करती, और उसका दिल खुश करने की चेष्टा करती। अन्त मे उनकी शादी हो गई। दोनो प्रसन्न थे। पर... ठीक शादी के दिन शाम को जोरो की वर्षा हुई, और कुकीन के चेहरे से निराशा और ऊब के चिन्ह न मिटे।

उनके दिन अच्छी तरह बीत रहे थे। कम्पनी का हिसाब रखना, थियेटर हाल का निरीक्षण, और तनख्वाह बाँटना, अब ओलेन्का का काम था। अब जब वह अपनी सहेलियों से मिलती, तो अपने थियेटर की ही चर्चा किया करती। वह कहा करती कि थियेटर दुनिया की सब से मुख्य, सबसे महान् और सबसे आवश्यक चीज है और कहती थी कि सच्चा आनन्द और सच्ची शिक्षा थियेटर के सिवा और कहीं नहीं मिल सकती।

"पर क्या तुम समझती हो कि जनता मे यह समझने की शक्ति है?" वह पूछा करती, "जनता तो बेवकूफी की बातों और दौड-धूप को बहुत पसन्द करती है। कल के खेल में सब जगह खाली थी। कल मैंने और कुकीन ने बहुत अच्छा खेल चुन कर दिया था, इसी लिये। अगर हम लोग कोई रद्दी बेवकूफी का खेल देते तो हॉल मे तिल भर भी जगह न बाकी रहती। कल हम लोग " · " दिखलाने वाले हैं। अवश्य आना, अच्छा?"

वह रिहर्सल की देख-भाल करती, अभिनेताओं की गलतियाँ सुधारती, गायको को ठीक करती और जब किसी पत्र मे उस नाटक की बुराई निकलती, तो वह घण्टो रोती और उस पत्र के सम्पादक से बहस कर उसे गलत प्रमाणित करने के लिये दौडी जाती।

थियेटर के अभिनेता उसे चाहते थे, और "डार्लिङ्ग" कहा करते

थे। वह उनकी चिन्ताओ से स्वय भी चिन्तित थी, और आवश्यकता पड़ने पर उन्हे कर्ज भी दे देती थी।

जाड़ों के दिन भी अच्छी तरह निकल गये। ओलेन्का बहुत प्रसन्न थी, और कुछ-कुछ मोटी भी हो रही थी, पर कुकीन दिन पर दिन दुबला और चिडचिड़ा होता जा रहा था। रात-दिन वह कम्पनी के नुकसान की शिकायत किया करता था, यद्यपि जाड़ो मे उसे नुकसान नही हुआ था। रात को उसे बडे जोरों की खाँसी उठती, तो ओलेन्का तरह-तरह की दवाये दे कर उसके कष्ट को दूर करने की चेष्टा करती।

कुछ दिनों बाद, थोडे दिनो के लिये वह अपनी कम्पनी के साथ मास्को चला गया। उसके चले जाने पर ओलेन्का बहुत दुखी रहने लगी। खिड़की पर बैठ कर, रात भर वह आकाश की ओर देखा करती। कुकीन ने लिखा कि किसी कारण-वश वह 'ईस्टर' त्योहार के पहले घर न लौट सकेगा। उसके खत केवल 'ट्रिवोली' के समाचारों से भरे रहते।

'ईस्टर' के सोमवार के पहले एक दिन रात को न, जाने किसने किवाड़ खटखटाये। रसोइया नींद से उठ कर, गिरते-पड़ते दर्वाजा खोलने गया।

"तार है, जल्द दर्वाजा खोलो!" किसी ने बड़े रूखे-स्वर मे कहा।

ओलेन्का को उसके पहले कुकीन का एक तार मिल चुका था। पर न जाने क्यो इस बार उसका हृदय किसी अनिष्ट की आशका से कॉप रहा था। काँपते हुये हाथो से उसने तार खोला।

"कुकीन की आज अचानक मृत्यु हो गई। आदेश की प्रतीक्षा है। अन्तिम सस्कार मगल को।"—तार में यही खबर थी! तार पर "ऑपरा" कम्पनी के मैनेजर का हस्ताक्षर था।

ओलेन्का फूट-फूट कर रो रही थी! आह, बेचारी...!

कुकीन मास्को मे मगलवार को गाड़ा गया। बुधवार को ओलेन्का घर वापस आ गई। आते ही वह पलॅग पर गिर पड़ी, और इतने जोर से रोने लगी कि सडक पर चलने वाले तक उसका रोना सुन सकते थे। उसके पड़ोसी उसके घर के सामने से निकलते तो कहते, "बेचारी डार्लिङ्ग, कितना रो रही है!"

तीन महीने पश्चात् एक दिन ओलेन्का कही जा रही थी। उसके बगल में एक आदमी जा रहा था। वह लकड़ी के कारखाने का मैनेजर था। देखने से वह अमीर आदमी मालूम होता था। उसका नाम वेसिली था।

"ओलेन्का, वडे दुःख की बात है," वह धीरे-धीरे कह रहा था, "यदि कोई मर जाय तो ईश्वर की इच्छा समझ कर चुप रह जाना चाहिये। अच्छा जाता हूॅ—नमस्कार।" और वह चला गया।

उसके बाद से ओलेन्का सदैव उसी का ध्यान करने लगी। एक दिन वेसिली की एक रिश्तेदार ओलेन्का से मिलने आई। ओलेन्का ने उसकी बड़ी खातिरदारी की। उस बुढिया ने वेसिली की तारीफ मे ही सारा समय बिता दिया। उसके बाद, एक दिन वेसिली स्वय भी ओलेन्का से मिलने आया। वह केवल दस मिनट ठहरा। पर इस दस मिनट की बातचीत ने ओलेन्का पर बहुत प्रभाव डाला।

कुछ दिनो बाद, उस बुढिया की सलाह से दोनों की शादी हो गई।

वेसिली और ओलेन्का के दिन अच्छी तरह कट रहे थे। वह खाना खाने तक कारखाने में रहता, फिर बाहर चला जाता। उसके जाने के बाद, ओलेन्का उसका स्थान ग्रहण करती। कारखाने का हिसाब रखना, नौकरो को तनख्वाह बॉटना, अब उसका काम था।

अब वह अपनी सखियों से लकड़ी के व्यापार और कारखाने के ही विषय मे बाते किया करती थी, "लकडी का दाम बीस रुपये सैकड़ा बढ़ रहा है," वह बडे दु.ख से कहा करती, "पहले मै और वेसिली

जगल से लकडी मँगा लेते थे। पर अब बेचारे वेसिली को हर साल मालगेव शहर में जाना पड़ता है। उस पर चुगी अलग से।" अब उसके लिये ससार की सबसे मुख्य, सबसे महान्, और सबसे आवश्यक चीज लकड़ी थी। वेसिली की राय और उसकी राय एक थी। वेसिली को खेल-तमाशे से नफरत थी, अतएव उसने भी तमाशो में जाना छोड़ दिया।

अगर उसकी सखियाँ पूछती कि, "तुम घर के बाहर क्यों नहीं निकलती? थियेटर क्यो नही देखती?" तो वह गर्व से कहती, "मुझे और वेसिली को थियेटर मे वक्त खराब करना पसन्द नहीं। थियेटर जाना बिल्कुल मूर्खता है।"

एक दिन ओलेन्का और वेसिली गिरजे से लौट रहे थे। ओलेन्का ने कहा, "ईश्वर को बहुत धन्यवाद, हम लोगों का समय ठीक से कट रहा है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि सब मेरी और वेसिली की तरह सुख से रहे।"

जब एक दिन वेसिली लकड़ी खरीदने मालगेव चला गया, तो वह पागल-सी हो गई। रोते-रोते वह सारी रात बिता देती। दिन भर पगली-सी रहती; कभी-कभी स्मिरनॉव, जो मकान मे किराये के कमरे मे रहता था, उसे देखने जाया करता था। वह पशुओं का डाक्टर था। वह ओलेन्का को अपने जीवन की घटनाये सुनाया करता या ताश खेला करता। उसकी शादी हो चुकी थी, और एक लड़का भी था; पर अब उसने अपनी स्त्री को छोड दिया था, और अपने लड़के के लिये चालीस रुपया हर महीने भेजा करता था। वह कहा करता था कि उसकी पत्नी बड़ी धोखेबाज थी, इसीलिये उसे अलग होना पड़ा। ओलेन्का को उससे बड़ी सहानुभूति थी। "ईश्वर तुम्हे खुश रक्खे," ओलेन्का वापस जाते हुए स्मिरनॉव से कहा करती थी, "तुमने बहुत कष्ट उठाया। मेरा समय कट गया। किन शब्दो मे तुम्हे धन्यवाद

दूँ ?" जब स्मिरनॉव चला जाता तो वह बडी दुःखी हो जाती, और रात भर स्मिरनॉव और उनकी पत्नी की दोस्ती करा देने के लिये, तरह-तरह के उपाय सोचा करती।

वेसिली के लौट आने पर, एक दिन ओलेन्का ने उसे स्मिरनॉव की दुःख-पूर्ण कहानी सुनाई।

छः साल तक ओलेन्का और वेसिली के दिन बडे आनन्द से कटे। एक दिन जाडों मे वेसिली, किसी आवश्यक काम से, नगे सिर ही बाहर चला गया। लौट कर आया तो जुकाम हो गया था, और दूसरे ही दिन उसे पलॅग पकड़ना पडा। शहर के सबसे अच्छे डाक्टर ने उसकी दवा की। पर चार महीने की बीमारी के बाद, एक दिन वह मर गया। ओलेन्का फिर विधवा हो गई!

बेचारी ओलेन्का दिन-रात रोती रहती थी। वह केवल काले कपडे पहनती, और गिरजा के सिवाय कहीं भी न जाती। एक सन्यासिनी की तरह वह अपने दिन काट रही थी।

वेसिली की मृत्यु के छः महीने बाद उसके शरीर से काले कपडे उतरे। अब रोज सवेरे वह अपने रसोइये के साथ बाजार जाया करती थी।

घर मे वह क्या किया करती थी, यह केवल अन्दाज से लोग जान सकते थे। वे लोग कई बार ओलेन्का और स्मिरनॉव को बाग मे बैठ कर चाय पीते और बाते करते देख चुके थे, इसीसे वे अन्दाज लगाने की चेष्टा किया करते थे।

एक दिन पशुओ के डाक्टर स्मिरनॉव ने कहा, "तुम्हारे शहर में अच्छा इन्तजाम नहीं है, लोग बहुत बीमार पड़ते हैं। जानवरो की भी देख-भाल ठीक तरह से नही होती।"

अब वह स्मिरनॉव की बाते दुहराया करती, और प्रत्येक चीज के बारे मे जो उसकी राय होती, वही ओलेन्का की भी। यदि ओलेन्का के

स्थान पर कोई दूसरी स्त्री होती, तो अभी तक सबकी घृणा का पात्र बन गई होती, पर ओलेन्का के विषय मे कोई भी ऐसा नहीं सोचता था। उसकी सखियाँ अब भी उसे "डार्लिङ्ग" कहती थीं, और उससे सहानुभूति रखती थीं। स्मिरनॉव अपने मित्रों और अफसरो को यह नहीं बतलाना चाहता था कि उससे और ओलेन्का से मित्रता है, पर ओलेन्का के लिये किसी बात को गुप्त रखना असम्भव था। जब डाक्टर के अफसर या दोस्त उससे मिलने आते, तो उनके लिये चाय बनाती, और तरह-तरह की बीमारियो के विषय मे बाते किया करती। वह स्मिरनॉव के विषय मे बाते किया करती। यह स्मिरनॉव के लिये असह्य था। उनके जाने के बाद, वह ओलेन्का का हाथ पकड़ कर गुस्से से कहता, "मैंने तुमसे कहा था कि तुम उन विषयो के बारे मे बाते न किया करो, जिन्हे तुम नही समझतीं। याद है या भूल गई? जब हम लोग बाते करते हैं, तो तुम बीच मे क्यो बोलती हो? मैं यह नही सह सकता। क्या तुम अपनी जीभ को वश मे नही कर सकती?"

ओलेन्का डर कर उसकी ओर देखती, और दुःखित होकर पूछती, "फिर मैं किस बारे मे बाते किया करूँ, स्मिरनॉव?" फिर वह रोते-रोते उससे क्षमा माँगती। और फिर दोनों खुश हो जाते।

ओलेन्का स्मिरनॉव के साथ बहुत दिनों तक नहीं रह सकी। स्मिरनॉव की बदली हो गई, और उसे बहुत दूर जाना पड़ा। ओलेन्का फिर अकेली थी।

अब वह बिल्कुल अकेली थी। उसका पिता बहुत दिन पहले मर चुका था। वह दिन पर दिन दुबली होती जा रही थी। अब लोग उसे देख कर भी बिना कुछ कहे चले जाते। ओलेन्का शाम को सीढ़ियो पर बैठ कर "ट्रिवोली" के गाने सुना करती थी। पर अब उन गानों से उसे कुछ मतलब नही था।

वह अब भी लकड़ी के कारखाने को देखती पर उसे देख कर न

वह दुखी होती न सुखी । खाना मानो उसे जबर्दस्ती खाना पडता था । सबसे दुःख की बात तो यह थी, कि अब वह किसी भी चीज के बारे में राय नही देती थी । कुकीन, वेसिली, और पशुओं के डाक्टर के साथ रहने के समय बिना सोचे अपनी राय दे देना उसके लिये कुछ भी मुश्किल नहीं था । अब वह सब कुछ देखती, पर अपनी राय नही दे सकती थी ।

धीरे-धीरे सब ओर परिवर्त्तन हो गया । "जिप्सी रोड" अब एक बडा रास्ता बन गया है, और ट्रिवोली और लकड़ी के कारखाने के स्थान पर अब बहुत से बडे-बडे मकान बन गये हैं । ओलेन्का बूढी हो चली है, उसका घर भी कही-कहीं टूट गया है ।

अब ओलेन्का की रसोइया मार्वा जो कहती, वही वह मान लेती ।

जुलाई मे एक दिन, किसी ने दरवाजा खटखटाया । ओलेन्का स्वयं ही दरवाजा खोलने गई । दरवाजे पर अचानक स्मिरनॉव को देख कर वह आश्चर्य मे डूब गई । पुरानी बाते एक-एक करके, उसे याद आने लगी । अब वह अपने को न रोक सकी । दोनों हॉथों से मुँह ढँक कर रोने लगी । उसे यह पता ही न चला कि वह कैसे चाय पीने बैठ गई । वह बहुत कुछ कहना चाह रही थी; पर मुँह से एक शब्द भी नही निकल रहा था । अन्त मे बड़े कष्ट से वह बोली, "तुम अचानक आ गये ?"

"मैंने नौकरी छोड़ दी है ।" स्मिरनॉव ने कहा, "और अब मैं अपनी गृहस्थी यही बसाना चाहता हूँ । मेरे लड़के की उम्र अब स्कूल जाने लायक हो गई है । उसे स्कूल भी भेजना है । और हॉ, तुम तो जानती न होगी, मेरी स्त्री से मेरी सुलह हो गई है ।"

"तब वह कहॉ है ?" ओलेन्का ने बहुत उत्सुकतापूर्वक पूछा ।

"वह और लड़का दोनों अभी होटल मे हैं । अभी मुझे घर खोजना है ।"

"हे भगवान्! तुम इतनी तकलीफ क्यों करोगे। मेरा घर क्यो नहीं ले लेते? क्या यह घर तुम्हे पसन्द नही? अरे नही, डरो मत, मैं एक पैसा भी किराया नहीं लूँगी। मेरे लिये एक कोना काफी होगा, बाकी सब तुम ले लो। देखो न, काफी बड़ा मकान है। मेरे लिये इससे बढ़ कर सौभाग्य की बात और क्या हो सकती है?" कहते-कहते वह फिर रो पड़ी।

दूसरे दिन तड़के उठ कर ओलेन्का ने घर की सफाई शुरू कर दी। घर की पुताई होने लगी। ओलेन्का बड़ी उमग से चारों ओर घूम कर देख-भाल कर रही थी। थोड़ी देर मे स्मिरनॉव, उसकी पत्नी और लड़का भी आ गये। स्मिरनॉव की पत्नी एक लम्बी और दुबली स्त्री थी। स्मिर-नॉव का लडका साशा, अपनी उम्र के हिसाब से बहुत नाटा था। वह बड़ा बातूनी और शरारती था।

"मौसी, यही तुम्हारी बिल्ली है?" उसने बड़े कौतूहल से पूछा, "अच्छा मौसी, यह हमे दे दोगी? अम्मा चूहों से बहुत डरती है।" कह कर वह बड़े जोरो से हँसने लगा।

ओलेन्का को साशा बहुत पसन्द आया। उसने उसे अपने हाथ से चाय पिलाई और फिर घुमाने ले गई।

शाम को साशा अपना सबक याद करने बैठा। ओलेन्का भी उसके पास जाकर बैठ गई और धीरे से बोली, "बेटा, तुम बडे होशियार हो, बहुत सुन्दर......" साशा ओलेन्का की बात की कुछ भी परवाह न कर, अपनी ही धुन मे कह रहा था, "द्वीप पृथ्वी के उस टुकड़े को कहते हैं, जो चारो ओर पानी से घिरा रहता है।" ओलेन्का ने भी कहा, "द्वीप पृथ्वी के उस टुकडे को कहते हैं..." रात को खाने के समय वह साशा के माँ-बाप से कहा करती कि साशा को बहुत मेहनत करनी पड़ती है। रोज भूगोल रटना पड़ता है।

साशा अब स्कूल जाने लगा। उसकी माँ एक बार खारकोव मे

अपनी बहिन को देखने गई, फिर वहीं रह गई। बाप सारे दिन, सारी शाम, घर के बाहर रहता। रात को नौ-दस बजे लौट कर आता। अतएव ओलेन्का ही साशा को रखती थी। रोज सवेरे वह साशा के कमरे में जाती, उसे जगाने मे उसे बड़ा दुःख होता, पर उसे विवश होकर जगाना ही पड़ता था। उसे जगा कर वह धीरे-धीरे कहती, "उठो बेटा! स्कूल का समय हो गया।" साशा कुछ नाराजगी से उठता; मुँह-हाथ धोकर कपड़े बदलता और फिर चाय पीने बैठ जाता। ओलेन्का धीरे से डरते-डरते कहती, "बेटा, तुमने कहानी ठीक तरह से याद नहीं की।" साशा नाराज होकर कहता, "ऊँह, तुम यहाँ से जाओ।" ओलेन्का उसकी ओर ऐसे देखती मानो वह किसी लम्बी यात्रा पर जा रहा हो, फिर धीरे-धीरे चली जाती। जब वह स्कूल जाने लगता, तो वह थोड़ी दूर तक उसके पीछे-पीछे जाती। साशा को यह पसन्द नहीं था कि इतनी लम्बी अधेड़ औरत उसके पीछे-पीछे जाय। क्योंकि यदि उसका कोई साथी ओलेन्का को उसके पीछे-पीछे आते देख लेता, तो उसे सब लड़को के सामने बहुत बनाता। वह ओलेन्का से कहता, "मौसी, तुम घर चली जाओ, मैं अकेले जा सकता हूँ।"

साशा को पहुँचा कर वह धीरे-धीरे घर लौटती। रास्ते मे यदि कोई मिलता और हाल-चाल पूछता, तो वह कहती, "स्कूल के मास्टर बड़े खराब होते हैं। बेचारे छोटे-छोटे बच्चो से बहुत मेहनत कराते हैं।"

साशा के स्कूल से लौटने पर वह उसे चाय पिलाती, और घुमाने ले जाती। रात को खाना खा चुकने पर उसे सुला कर तब वह सोती।

एक दिन वह साशा को सुला कर स्वय सोने जा रही थी कि किसी ने दरवाजा खटखटाया। ओलेन्का अब तार से बहुत डरने लगी थी, क्योंकि इसी तरह रात को कुकीन की मृत्यु का समाचार मिला था। इतने ही मे उसने सुना—"तार है, दर्वाजा खोलो।" उसने काँपते हुए हाथो से तार पर दस्तखत किया। तार खारकोव से आया था। ओलेन्का ने पढा—"साशा की माँ चाहती है कि साशा उसके पास चला आवे।"

चीन

सती विधवा

लेखक :—अज्ञात

कई सौ साल पहले, चीन की राजधानी से कुछ दूर पर एक शान्ति-पूर्ण गाँव मे चोयाङ्ग नामक एक दार्शनिक रहते थे—वे लाओ-सी नामक चीन के महान् दार्शनिक के शिष्य थे। चोयाङ्ग अपनी तीसरी पत्नी के साथ सुखपूर्ण जीवन बिता रहे थे। यौवन मे—विवाहित जीवन मे वे सुखी नही थे। उनकी पहिली पत्नी बहुत कम उम्र में मर गई थी, दूसरी पत्नी बदचलन निकली, इसलिये उससे अलग होना पड़ा, पर तीसरी पत्नी—श्रीमती तियेन—से उन्हे जो सुख मिल रहा था, वैसा पहले कभी न मिला था। दार्शनिक होने के कारण सोचने-विचारने के लिये वे कभी-कभी अकेले पहाड़ो पर या निर्जन जगल मे चले जाते थे। ऐसे ही एक सफर के समय अचानक उन्होने देखा—एक नई कब्र के बग़ल मे शोक-सूचक वस्त्र पहने एक युवती बैठी हुई उस कब्र पर पखा झल रही है। यह अनोखा कार्य देख कर उन्हे बहुत कौतूहल हुआ और उस स्त्री के पास जाकर उन्होने पूछा—"यह क्या कर रही हो?"

युवती बोली—"यह मेरे पति की कब्र है। उस निगोड़े ने मरने के पहिले मुझसे वादा ले लिया था कि मैं तब तक फिर शादी नही कर सकूँगी जब तक उसकी कब्र के ऊपर की जमीन सूख न जाय। पर यह इतने धीरे-धीरे सूख रही है कि मैं अधीर हो गई हूँ इसीलिये पखा झल रही हूँ जिससे कुछ जल्दी सूख जाय।" यह कह कर उस युवती

ने ऐसी सरलता के साथ करुण चेहरे से उनकी ओर देखा कि दार्श-निक चोयाङ्ग उसी क्षण उसकी सहायता के लिए तैयार हो गये।

"तुम्हारी कलाई इस तरह के काम के लिये वैसी ताकतवर नहीं है," उन्होंने कहा, "मुझे करने दो!"

युवती ने विनती भरे स्वर से कहा—"यह पंखा लीजिये। मैं सदा के लिए कृतज्ञ रहूँगी अगर आप इसे जल्दी से जल्दी सुखा दें।"

और अधिक बातें न कर चोयाङ्ग काम में लग गये और पाँच-छः बार पखा झल कर उन्होंने जादू के जरिये कब्र की जमीन से गीलापन निकाल लिया। उनकी सफलता पर युवती बहुत खुश हो गई और आनन्द भरे चेहरे से बोली—"आपको उपयुक्त धन्यवाद देने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। कृतज्ञता के चिह्न स्वरूप मैं आपको अपना यह कारचोबी का पंखा दे रही हूँ और श्रद्धा की यादगार के लिये मैं अपनी एक 'हेयर-पिन' दे रही हूँ—कृपया स्वीकार कीजिये।" कह कर वह दार्शनिक को अपना पखा देकर, बालों से सोने की एक कामदार 'हेयर-पिन' निकाल कर देने लगी। दार्शनिक ने पखा तो ले लिया पर श्रीमती तियेन क्या सोचेगी, इस डर से 'हेयर-पिन' लेने से इन्कार किया। इस घटना ने उनको चिन्तित कर दिया था; जब वे घर लौट कर अपनी बैठक मे बैठे हुए थे तो बार-बार लम्बी साँस छोड़ रहे थे।

श्रीमती तियेन उसी समय बैठक मे आई। यह देख कर उसने पूछा—"क्यो जी—तुम लम्बी साँस क्यों ले रहे हो?—और यह पखा कहाँ पाया?"

इस तरह पूछे जाने पर कब्र पर की सारी घटना चोयाङ्ग ने कह सुनाई। कहानी सुनते-सुनते श्रीमती तियेन के चेहरे पर घृणा के भाव आ गये और जब कहानी समाप्त हुई तो उसने नाराजी से उस विधवा को स्त्रियो में कलंक बताया। उसके चुप होने पर चोयाङ्ग ने कहा, "किसी

इस कहावत से श्रीमती तियेन ने यह मतलब निकाला कि उसके पति ने उस पर सन्देह किया है। वह उबल कर बोली—"तुम इस नीच बेशर्म विधवा के उदाहरण से सब स्त्रियो को कैसे दोष दे सकते हो! सब एक तरह के थोडे ही होते हैं? मुझे आश्चर्य हो रहा है कि तुम जैसे समझदार लोग मुझ पर और मेरी तरह अन्य स्त्रियो पर ऐसी अन्याययुक्त धारणा करते हैं!"

पति ने कहा—"नाराज क्यो हो रही हो?—अच्छा, यह तो कहो कि अगर मैं मर जाऊँ तो तुम अपनें इस यौवन और-सौन्दर्य को लेकर पॉच साल तक—नहीं, तीन ही साल तक—विधवा रह सकोगी?"

पत्नी बोली—"एक विश्वासी और नेक वजीर जैसे दो राजाओ की खिदमत नहीं कर सकता, उसी तरह एक साध्वी स्त्री दूसरे पति के बारे मे सोच ही नही सकती। अगर विधाता की यही मर्जी है कि तुम पहले मरो, तो पॉच या तीन साल का प्रश्न नही—जब तक मेरा जीवन रहेगा, दूसरे विवाह की कल्पना तक नही कर सकती।"

पति ने कहा—"यह कहना बहुत कठिन है—यह कहना बहुत कठिन है।"

पत्नी बोली—"स्त्रियॉ पुरुषों की तरह धर्मज्ञान-हीन और अन्यायी नहीं होतीं। जब एक पत्नी मर जाय तो तुम दूसरी शादी करते हो—एक को तलाक देकर दूसरी शादी करते हो!—मगर हम स्त्रियॉ एक पति पर ही सन्तोष रखती हैं।...तुम क्यों यह सब कह कर मुझे दुःख दे रहे हो?"

यह कह कर उसने उस पखे को टुकडे-टुकड़े कर डाला।

पति ने कहा—"शान्त हो जाओ। अगर कभी ऐसा अवसर हुआ तो मुझे आशा है कि तुम जैसा कह रही हो वैसा ही करोगी।"

इसके कुछ ही दिनों के बाद यकायक चोयाङ्ग बहुत बीमार पड़ गये और दिन पर दिन उनकी हालत बिगड़ती ही गई। एक दिन उन्होंने

पत्नी से कहा—"दुनिया से अब मेरा सम्बन्ध छूट रहा है। तुम से विदा लेने का समय अब आ गया है। उस दिन उस पखे को तोड कर तुमने वेवकूफी की थी। वह मेरी कब्र की जमीन सुखाने के काम मे आता।"

आँसू भरी आँखों से पत्नी बोली—"ऐसे समय पर मुझ पर सन्देह न करो। क्या मैंने धर्म पुस्तके नही पढ़ी हैं? पति रहे या नहीं, एक पति पर ही सन्तोष रखना चाहिये, क्या मैंने उन ग्रन्थों मे से यह शिक्षा नही पाई है? तुम्हे अगर मेरी निष्कपटता पर विश्वास न हो, तो कहो—मैं तुम्हारे सामने मर कर अपनी सच्चाई साबित करूँ।"

थके हुये स्वर से चोयाङ्ग बोले—"अब मेरी कोई कामना नही है—मैं मर रहा हूँ—मेरी दृष्टि कम होती जा रही है ....." यह कहते-कहते उनकी आँखों की पलके लग गई और साँस रुक गई।

पति की मृत-देह पर श्रीमती तियेन पछाड़ खाकर गिरी और चिल्ला-चिल्ला कर शोक प्रकट करने लगी। वह दिन-रात रोती और उदास रहती और सदा पति के प्रेम, सदाचार और ज्ञान की याद करती। चीन की रीति के अनुसार चोयाङ्ग जैसे विद्वान् के मरने पर, एक ताबूत के अन्दर चालीस दिनों तक मृत-देह रक्खी जाती है और पड़ोस और दूर-दूर से लोग सम्मान और शोक प्रकट करने आते हैं। बहुत लोग आये, अन्त में, एक तस्वीरो के नायकों की तरह सुन्दर युवक आया, वह हल्के-नीले रंग की पोशाक पहिने था, सिर पर काली टोपी थी और पैरो में लाल जूता था। उसके नौकर ने कहा कि वह युवक एक बहुत धनी जमींदार का लड़का है।

युवक बोला—"मैं बहुत दिनो से चोयाङ्ग का शिष्य होने का विचार कर रहा था और यह बात उनसे कहला भी भेजी थी। उसी निश्चय के अनुसार यहाँ आया, पर आकर सुन रहा हूँ कि वे परलोक सिधार गये हैं।"

अपने श्रद्धापूर्ण शोक को प्रमाणित करने के लिये कुमार ने अपनी रंगीन पोशाक उतार कर साधारण श्वेत-वस्त्र पहिने और चोयाग के ताबूत पर साष्टाङ्ग प्रणाम कर, चार बार माथा टेक कर, रुँधे स्वर से कहने लगा—"पंडित जी ! मैं बहुत अभागा हूँ, इसीलिये आप से शिक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। मगर आपकी स्मृति मे श्रद्धा प्रदर्शन करने के लिये मैं सौ दिन तक यहीं रह कर शोक प्रकट करूँगा।"

यह कह कर कुमार ने फिर चार बार माथा टेका। उसकी आँखो मे आँसू भरे थे। फिर जब वह कुछ शान्त हो गया, तो श्रीमती तियेन को नमस्ते करने की इच्छा प्रकट की। मगर श्रीमती तियेन ने कुमार के सामने जाना तीन बार अस्वीकार किया। पर जब उससे यह कहा गया कि शास्त्र के अनुसार गुरु-पत्नी शिष्य से बेखटके मिल सकती है तो वह बाहर आई।

नीची दृष्टि किये कुमार से नमस्ते लेकर जब श्रीमती तियेन ने आँख उठाई, तो उसकी सुन्दरता देखकर वह चकित हो गई। उसने अतिथि से अपने गृह मे ठहरने के लिये प्रार्थना की और भोजन बन जाने पर सामने बैठ कर खिलाया। कुछ देर के बाद जब दोनों के बीच का संकोच कुछ कम पड़ा, तो श्रीमती तियेन ने पति के दो सर्वप्रिय ग्रन्थ लाकर कुमार को अर्पण किये। कुमार प्रतिदिन गुरु के ताबूत के पास बैठ कर शोक प्रकट करता और श्रीमती तियेन भी वहीं खड़ी लम्बी साँसे लेती। इसी तरह का नित्य साक्षात् उन दोनों को दो-चार बाते करने के लिये बाध्य करता—वे एक दूसरे से दृष्टि विनिमय करते, और जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन दोनो के हृदय मे प्रेम उत्पन्न होता गया। कुछ ही दिनो मे कुमार की प्रीति व्यवहार मे प्रकट होने लगी, पर अब तक श्रीमती तियेन प्रेम से पागल हो गई थी। अतिथि के बारे मे कुछ जानने के ख्याल से एक दिन श्रीमती तियेन ने कुमार के नौकर को अपने खास कमरे मे बुला भेजा, और उसे कुछ शराब पिला कर पूछा, उसके मालिक विवाहित हैं या नहीं।

नौकर ने कहा—"मेरे मालिक की अभी तक शादी नहीं हुई है।"

श्रीमती तियेन ने पूछा—"किस गुण से भूषित रमणी को वे अपनी पत्नी निर्वाचित करेंगे ?"

नौकर ने कहा—"मेरे मालिक कहते हैं कि अगर उन्हे आपकी तरह अपूर्व सुन्दरी मिल जाय, तो उनके यौवन की कामना पूर्ण हो जाय।"

श्रीमती तियेन उत्तेजित होकर बोली—"क्या उन्होंने ऐसा ही कहा है, तुम सच कह रहे हो ?"

नौकर ने कहा—"भला, मेरी तरह बूढा आदमी आप से झूठ कैसे बोल सकता है ?"

"अगर ऐसा हो तो तुम हम दोनो मे विवाह कराने की बात-चीत पक्की कर दो।"

"इस विषय मे मालिक मुझ से बाते कर चुके हैं। वे आप से विवाह करने के लिये पागल हैं, पर यह विवाह नही हो सकता। इस लिये कि आप दोनों मे गुरु-पत्नी और शिष्य का सम्बन्ध है। लोग निन्दा करेंगे।"

श्रीमती तियेन बोली—"पर कुमार कभी भी मेरे पति के शिष्य नहीं थे, और हमारे पड़ोसी सब मामूली आदमी हैं—वे निन्दा करने का साहस नहीं कर सकते।"

इस तरह बाधाये कट जाने पर नौकर ने मालिक से सब बात कहने का भार लिया और वायदा किया कि उस बात-चीत का फल वह शीघ्र से शीघ्र कह जायगा।

नौकर के चले जाने के पश्चात् श्रीमती तियेन उत्तेजना से अधीर हो गई। वह बार-बार मृत-देह रक्खे हुये कमरे मे जाने लगी जिससे वह कुमार के कमरे के सामने से जा सके। उसने कई बार कुमार के कमरे की खिड़की मे कान लगाकर नौकर और कुमार की

बात-चीत सुनने की चेष्टा की पर कोई आवाज नहीं सुनाई दी। इसके कुछ देर बाद जब वह पति के ताबूत के बगल से जा रही थी तो जोर से साँस लेने की आवाज उसे सुनाई दी। वह मारे डर के चिल्ला पड़ी—"क्या मृत फिर से जीवन पा गया!"

पर उसने क्षीण रोशनी मे देखा कि पति के बिस्तर पर कुमार का नौकर सो रहा है। यह देख कर उसके हृदय का कम्पन बन्द हुआ। दूसरा समय होता, तो वह नौकर पर कड़ी डाँट-फटकार करती, मगर इस समय वह कुछ न बोली। दूसरे दिन जब नौकर उसके सामने आया, तो उसने बिस्तर पर सोने का जिक्र नहीं किया। उसके अधीर प्रश्न के उत्तर में नौकर ने कहा कि कल शाम को जो बाते हुई थीं उससे तो कुमार को सन्तोष हो गया था, पर तीन बातें ऐसी प्रतिकूल हैं जिसके लिये उन्हे हिच-किचाना पड़ रहा है।

"वे तीन क्या हैं?"—श्रीमती तियेन ने पूछा।

नौकर ने कहा—"पहली तो यह है कि रिवाज के अनुसार विवाह के समय मकान के अन्दर मृत-देह नहीं रह सकती, दूसरी यह है कि चोयाङ्ग अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करते थे और उनकी विद्वत्ता के लिये उनकी पत्नी उनसे बहुत प्रेम करती रही होगी, इसलिये कुमार को आशका है कि कही दूसरे पति के लिये प्रेम ही न बचा हो; और तीसरी यह है कि कुमार अपने साथ अधिक सामान और रुपया नहीं लाये हैं और न उनके पास दूल्हे की पोशाक है।"

वह बोली—"हमारे विवाह मे इन बातो से कोई बाधा नही पड़ सकती। पहली बात के बारे में मेरा यह कहना है कि मैं उस ताबूत को अनायास ही हटा कर मकान के पिछवाडे नौकरों के किसी कमरे मे रखवा सकती हूँ, फिर दूसरी के बारे मे—मेरे पति विद्वान् तो थे पर वे सदाचारी नहीं थे। पहली पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होने दूसरा विवाह किया, पीछे उस पत्नी को तलाक दिया, और अपने बीमार

पड़ने के पहले उन्होंने एक विधवा से बहुत ही निन्दाजनक रूप से हँसी मजाक किया था जो अपने मृत-पति की कब्र पर पखा झल रही थी। तब क्यों तुम्हारे मालिक—नव-युवक, सुन्दर और धनवान् होते हुये भी मेरे प्रेम के बारे मे सन्देह कर रहे हैं ? फिर तीसरी बात के बारे मे यह कि विवाह के खर्च के विषय मे तुम्हारे मालिक को कोई चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है; जो कुछ खर्च लगेगा मैं दूँगी। इस समय मेरे पास छः सौ रुपये हैं। बहुत खुशी से उसे मैं दे सकती हूँ। जाओ—जो कुछ मैंने कहा है, कुमार से जाकर कहो और उनसे कहना कि विवाह के लिये आज का दिन बहुत शुभ है—और ऐसा शुभ दिन जल्दी नहीं मिलेगा।"

छ. सौ रुपये हाथ मे लिये नौकर अपने मालिक के पास लौट गया और कुछ ही देर बाद आकर कहा कि कुमार आज ही विवाह करने के लिये तैयार हैं।

यह आनन्दपूर्ण खबर सुनकर श्रीमती तियेन ने शोक-सूचक श्वेत वस्त्र छोड़कर दुलहिन की रङ्गीन पोशाक पहनी और अच्छी तरह से श्रृङ्गार किया। फिर नौकरों से उसने कहा कि मृत-देह को किसी नौकर के कमरे मे रख आवे और विवाहोत्सव का इन्तजाम करे। वह स्वयं रोशनी के इन्तजाम और मकान की सजावट मे लग गई। जब विवाह का समय आया, तो वह और कुमार—बहू और वर के भेष मे—विवाह मडप पर पुरोहित के सामने जाकर खडे हो गये। पुरोहित ने विवाह कर दिया। वे बहुत खुश थे। उनके चेहरे पर प्रेमपूर्ण मुस्कराहट खिली हुई थी। भोजन के बाद कुमार बडे प्रेम से उसे सुहागरात के कमरे मे ले गये। वे बहुत देर तक गप-शप करते रहे—फिर एकाएक कुमार जमीन पर गिर कर हाथ पैर पटकने लगे—हाथों से छाती पीटने लगे।

यह देखकर श्रीमती तियेन ने घबराकर कुमार का आलिङ्गन किया

और उसकी छाती पर हाथ फेरने लगी—तरह-तरह से आराम देने की चेष्टा की। पर कोई फायदा न होता देख कर उसने कुमार के नौकर को बुला भेजा।

श्रीमती तियेन ने पूछा—"तुम्हारे मालिक को क्या मिरगी की बीमारी की शिकायत है?"

नौकर ने कहा—"जी हाँ, पर किसी भी दवा से कोई फायदा नहीं होगा, मगर एक चीज है जिससे फायदा होता है।"

"वह क्या है?"

नौकर ने कहा—"किसी मनुष्य के मगज को शराब में उबाल कर खिलाने से यह झट होश मे आ जायँगे। अपने देश में जब कभी उन्हे मिरगी आती है तो उनके पिता—राजा साहब, एक आदमी को मरवा कर उसका मगज निकाल कर खिलाते हैं; मगर यहाँ कैसे इस तरह की दवा मिल सकेगी?"

उसने पूछा—"मगर क्या ऐसे आदमी के मगज से भी फायदा हो सकता है जो स्वाभाविक मृत्यु से मर गया है?"

"हाँ—अगर उस आदमी की मृत्यु उनचास दिन के भीतर हुई हो।"

"तब तो मेरे पहले पति के मगज से ही काम हो जायगा। वह बीस दिन पहले मरे है। उनका ताबूत खोल कर अनायास ही मगज ले लिया जा सकता है।"

"मगर आप क्या ऐसा कर सकेंगी?"

"क्यो नही! कुमार और मैं अब पति-पत्नी हैं। एक पत्नी तन-मन से पति की सेवा करेगी। पति को स्वस्थ करने के लिये एक मरे आदमी के सिर से मगज निकालने मे क्या हर्ज है?"

नौकर से मालिक के पास रहने को कहकर, वह एक कुल्हाड़ी लेकर नौकरो के कमरो की तरफ गई जहाँ मृत-देह हटा कर रक्खी गई थी।

मोमबत्ती जला कर उसने एक तरफ रख दी। फिर दोनो हाथों से कुल्हाड़ी पकड़ कर दॉत पीसते हुये ताबूत पर आघात करने लगी। इकतीसवे आघात पर ताबूत के ऊपर की लकड़ी टूट कर गिरी और ताबूत का ढक्कन खुल गया। परिश्रम से हॉफते हुये उसने मुर्दे के सिर पर आघात करने के लिये तैयार होकर मृत-देह की ओर देखा। यह देख कर उसके आश्चर्य और भय की सीमा नही रही कि चोयाङ्ग ने दो बार लम्बी सॉस ली, अपनी ऑखे खोली और फिर धीरे-धीरे उठ कर बैठ गये। वह चीख कर पीछे हट गई और उसके कॉपते हुये हाथों से कुल्हाड़ी गिर पड़ी।

"प्यारी!" दार्शनिक चोयाङ्ग ने कहा—"मुझे उठने मे सहायता दो।"

वह निर्वाक्, पति की सहायता के लिये आगे बढी और उन्हे ताबूत से बाहर निकाला। चोयाङ्ग मोमबत्ती हाथ में लिये आगे-आगे बढ़ कर मकान की ओर जाने लगे। मकान मे जाकर पति को क्या दृश्य देखने को मिलेगा यह सोच कर वह थर-थर कॉप रही थी। मगर कुमार और उसके नौकर को गायब देख कर उसे चैन मिला। वह एकाएक बहुत मीठे स्वर से कहने लगी—"जिस दिन से मरे हो दिनो-रात मेरी चिन्ता मे तुम वर्तमान हो। अभी—कुछ देर पहले, तुम्हारे ताबूत से एक आवाज निकलने पर मुझे एक पुरानी कहानी याद आ गई जिसके नायक के मृत-देह मे फिर से जीवन आ गया था। मुझे बड़ी आशा हुई, शायद मेरे पति की देह मे जीवन आया हो! मैं उसी क्षण एक कुल्हाड़ी उठा कर ताबूत खोलने लगी। विधाता को धन्यवाद कि मेरी आशा सफल हुई—तुम्हे मैं फिर से पा गई।"

चोयाङ्ग ने पूछा—"मगर तुम क्यो इतनी चमकीली रङ्गीन पोशाक पहने हो?"

पत्नी बोली—"जब मैं आशा से पागल होकर तुम्हारे ताबूत के पास

जाने लगी, तो जाने क्यो मुझे इच्छा हुई कि विधवा के भेष मे न जाकर सुहागिनि की तरह जाऊँ—"

पति ने कहा—"मेरा ताबूत नौकरों के कमरे में क्यो भेज दिया ?"

श्रीमती तियेन की बुद्धि अब काम न कर सकी। वह चुप रह गई। चोयाङ्ग चारो ओर विवाह-उत्सव के चिन्ह देख रहे थे, पर वे कुछ न बोले। उन्होंने पत्नी से कुछ शराब लाने के लिये कहा। श्रीमती तियेन ने एक बड़े गिलास में शराब भर कर बहुत ही मनमोहन मुस्कान के साथ पति के हाथ मे गिलास दिया। मगर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। शराब पीकर चोयाङ्ग ने एक अँगुली बढा कर कहा—"अपने पीछे खडे हुए उन आदमियो को देखो।"

पीछे घूमते ही श्रीमती तियेन ने कुमार और नौकर को आँगन में खड़े देखा। डर कर उसने पति की ओर देखा, पर वे वहाँ नहीं थे! फिर उसने आँगन की ओर देखा—कुमार और नौकर आँगन मे नही थे, मगर उसके पति अब उसकी बगल में खडे थे। अब वह समझ गई कि उसके पति ने जादू के जरिये से कुमार और नौकर का रूप धारण कर लिया है—उसकी परीक्षा करने के लिये यह चाल चली है। अब छिपाना व्यर्थ था, इसलिये एक कमरे में जाकर उसने फाँसी लगा कर आत्महत्या कर ली।

चोयाङ्ग घर मे आग लगा कर चल दिये। सब जल कर खाक हो गया। पड़ोसियों ने केवल दो अमूल्य-ग्रन्थ बचा लिये थे—वह अभी तक पुस्तकालय मे मौजूद हैं।

यह कहा जाता है कि चोयाङ्ग पश्चिम की ओर चले गये और कैसे उन्होने अन्तिम दिन बिताये, यह तो नहीं मालूम, पर यह निश्चय है कि उन्होने फिर विवाह नही किया।

मीङ्ग-ई

लेखक—अज्ञात

एक हजार साल पहिले, सम्राट होअङ्ग-औ के राजत्व-काल में, जेनिआई नगर मे तियेन-पीलो नाम के एक प्रसिद्ध विद्वान् रहते थे। तियेन-पीलो का एक पुत्र था—वह बहुत ही सुन्दर था। उन दिनों ज्ञान-पिपासा, शारीरिक सौन्दर्य और नम्र तथा भद्र व्यवहार मे उस प्रान्त के युवकों में वह वेजोड़ था। उसका नाम था—मीङ्ग-ई।

जब वह अठारह साल का था, तब उसके पिता—तियेन-पीलो को—चिङ्ग-तो नगर में शिक्षा-विभाग के इन्सपेक्टर की नौकरी मिली। मीङ्ग-ई पिता के साथ वहाँ गया। चिङ्ग-तो नगर से कुछ दूर पर श्रीमान् चैङ्ग नाम के एक बहुत ऊँचे सरकारी अफसर रहते थे—उन्हे अपने बच्चों के लिये एक गृह-शिक्षक की आवश्यकता थी। शिक्षा-विभाग के नये इन्सपेक्टर का आगमन सुन कर श्रीमान् चैङ्ग इसलिये उनसे मिलने गये कि शायद वे किसी योग्य शिक्षक की सिफारिश कर सकें। तियेन-पीलो के घर में उनके सुशिक्षित पुत्र से बाते कर, श्रीमान् चैङ्ग मोहित हो गये और उसी क्षण उसे अपने बच्चो का गृह-शिक्षक नियुक्त किया।

श्रीमान् चैङ्ग का भवन, नगर से कई मील दूर पर होने के कारण यह निश्चित हुआ कि मीङ्ग-ई अपने स्वामी के घर में ही रहेगा। युवक आवश्यकीय सामान बाँध-बूँध कर जाने के लिये तैयार हो गया। उसके माँ-बाप उसे खूब उपदेश देने लगे, उसे बडे-बड़े ज्ञानियो की बाते सुनाई और अन्त में विदा के समय महर्षि लाओ-सी का एक वचन सुनाया।

"सुन्दर मुँह मोह और भ्रम का कारण है—इससे वचना चाहिये, अपने को ठगाना न चाहिये। अगर तुम देखो कि पूर्व से एक रमणी आ रही है, तो तुम पश्चिम की ओर मुँह फेर लो; अगर तुम देखो कि पश्चिम की ओर से एक कुमारी आ रही है, तो तुम पूर्व की ओर अपनी आँखे फेर लो।"

अगर मीङ्ग-ई ने वाद मे इस उपदेश पर ध्यान नहीं दिया तो उसका कारण उसका नवयौवन और उसके उमङ्गो से भरे हुये चित्त की अस्थिरता थी।

माँ-बाप के पैर छूकर वह श्रीमान् चैङ्ग के भवन में रहने के लिये चल पड़ा।

नये स्थान मे—नये लोगो के वीच, शरद और शीत ऋतु देखते ही देखते कट गई।

... ...

वसन्त ऋतु का द्वितीय शुक्ल पक्ष जब निकट आने लगा—और वह उत्सव के दिन जिसे चीनी लोग 'होवा-चाओ' यानी 'शत पुष्पों का जन्म दिन' कहते हैं—पास आया तो माता-पिता को देखने के लिये मीङ्ग-ई अधीर होने लगा। उसने श्रीमान् चैङ्ग से अपनी इच्छा प्रकट की। श्रीमान् चैङ्ग ने सहर्ष आज्ञा दे दी। फिर यह सोच कर कि शायद वह माँ-बाप के लिये कुछ उपहार ले जाना चाहता होगा, उसके हाथ पर उन्होने छटाँक भर चाँदी रख दी। क्योंकि 'होवा-चाओ' त्योहार के दिन मित्र और आत्मीय को उपहार देना चीनी रिवाज है।

उस दिन सारी हवा फूलो की गन्ध से मतवाली और मधुमक्खियों के गुञ्जन से कम्पित थी। मीङ्ग-ई चलते-चलते सोचने लगा कि वह जिस पथ से जा रहा था, उस पर वर्षों से किसी ने पैर नहीं रक्खा होगा। पथ पर लम्बी-लम्बी घास उग आई थी। दोनो तरफ के बडे-बड़े प्राचीन वृक्ष अपनी-अपनी वाहे बढ़ा कर मानो उसका स्वागत कर रहे थे, और

उन शाखाओं के घने पत्तों के भीतर, पक्षी स्वर्गीय गीत गा-गाकर मानो हर्ष प्रकट कर रहे थे। मीङ्ग-ई का चित्त एक अज्ञात पुलकावेग से नृत्य करने लग गया; उसका चित्त कभी ऐसा आनन्दित नहीं हुआ था। वह नाचते कूदते सड़क के पास ही एक फूलों के वन मे जाकर बैठ गया। ऊपर बैङ्गनी रंग का आकाश चारों ओर फल और उनकी मादक सुगन्ध। यह मधुर निर्जनता उसे बहुत ही सुखद प्रतीत हो रही थी। वह विभोर होकर बैठा रहा। सहसा एक आहट पाकर उसने आँखे उठाई और फूलों की आड़ से एक फूल-सी सुन्दरी युवती को अपनी ओर झाँक कर छिप जाते देखा। यद्यपि मीङ्ग-ई ने उसे क्षण भर के लिये देखा, पर उसकी सुन्दर मोहक आँखे, गुलाब से रँगा हुआ-सा आकर्षक चेहरा और कोमल हल्की देह उसके मानस-पट पर अंकित हो गयी। इस रमणीय वातावरण मे अचानक इस रमणी के दर्शन से उसका चित्त काँप उठा। मीङ्ग-ई घबरा कर आँखे फेर कर, उठ कर चलने लगा। वह इतना घबड़ा गया था कि कब उसकी जेब से वह चाँदी का टुकड़ा जमीन पर गिर पड़ा—उसे पता नहीं। कुछ क्षणो के पश्चात् उसने सुना—पीछे से कोई हल्के पैरो से दौड़ा आता हुआ उसे पुकार रहा है! चकित होकर, सिर घुमा कर उसने देखा—एक लड़की थी; वह कहने लगी—"महाशय, मेरी मालकिन ने चाँदी को उठा कर आपको देने के लिये आज्ञा दी है—इसे आप जमीन पर छोड़ आये थे।" मीङ्ग-ई ने उस लड़की को धन्यवाद दिया और उसकी मालकिन को नमस्कार और धन्यवाद कहने के लिये कहा। फिर वह सुगन्धित निर्जनता को चीरता हुआ आगे बढने लगा। वह स्वप्न मे अनमना चला जा रहा था। क्षण भर के लिये आँखो के सामने आई हुई उस रमणी के चित्र को, कल्पना करने मे उसे बहुत सुख अनुभव होने लगा—उसकी सारी देह क्षण-क्षण मे रोमाञ्चित होने लगी।

...   .

माँ-बाप से मिल कर जब मीङ्ग-ई लौट रहा था, तब फिर वह उसी स्थान पर खड़ा हुआ जहाँ से उस अपूर्व सुन्दरी को देखा था। यह देख कर वह चकित हो गया कि कुछ ही दूर पर घने पेड़ों की आड में एक भव्य-कुटीर है, जिसे उसने पहले लक्ष्य नहीं किया था। वह कुछ बढ़ा और देखा—उस मकान के बराडे में उसकी कल्पना की रानी उसी लड़की के साथ खड़ी-खड़ी बातें कर रही थी, जो उसे चाँदी देने के लिये आई थी। मीङ्ग-ई ने जब उसी तरफ ध्यान से देखा तो वे उसी की ओर देख रही थीं और इस ढंग से हँस-हँस कर बातें कर रही थीं मानो वे उसी के बारे में बातें कर रही हों। यद्यपि वह शर्मीला था, फिर भी बहुत साहस कर दूर से उसने नमस्कार किया। यह देखते ही नौकरानी ने हाथ के इशारे से बुलाते हुये बराडे से उतर आकर पीले फूलों से ढँका हुआ फाटक खोल दिया। मीङ्ग-ई को कुछ आश्चर्य हुआ, पर वह हर्षावेग से फाटक की ओर बढ़ता गया। वह जैसे ही फाटक के पास पहुँचा, मकान की मालकिन मकान के भीतर छिप गईं। लड़की बोली—"आइये! मेरी मालकिन समझ गई हैं कि चाँदी लौटाने के लिये आप उन्हें धन्यवाद देने आये हैं। वे आपका स्वागत कर रही हैं। आइये! आप से दो घड़ी बातें करने पर उन्हें बड़ी खुशी होगी, क्योंकि आपकी विद्या की प्रतिष्ठा से वे परिचित हैं।"

लज्जा से अवनत मस्तक, धीमी गति से मीङ्ग-ई बैठक के भीतर गया। कमरा किसी अमीर की बैठक की तरह सजा हुआ था। कमरे की प्रत्येक वस्तु से उग्र परन्तु मधुर सुगन्ध चित्त पर जाने कैसा रहस्य-मय असर कर रही थी। कमरे में जाकर खड़े होते ही एक दूसरे द्वार से मकान की युवती मालकिन वहाँ आई और बड़े ही मीठे स्वर तथा शब्दों से उसका स्वागत किया। मीङ्ग-ई ने दोनों हाथ अपनी छाती पर रख कर, सिर झुका कर नमस्कार किया। उसके अनुमान से वह कुछ अधिक लम्बी थी। और उसका शरीर एक कमल की तरह नरम और

इकहरा था, उसके काले केश 'चु—शा—कीह' नामक फूल से मिला कर गूँथे हुये पीठ पर लटक रहे थे, उसकी पीली पोशाक कुछ हिलने पर रग बदलती थी, जैसे प्रकाश के बदलने पर वाष्प का रङ्ग बदलता है।

यथाविधि स्वागत कर मीङ्ग-ई के पास बैठ कर वह बोली—"मै यदि भूलती नहीं हूँ तो आपका नाम मीङ्ग-ई है—आप मेरे परम आत्मीय श्रीमान् चैङ्ग के बच्चों के गृह-शिक्षक हैं। श्रीमान् चैङ्ग और मैं जब एक ही घराने के हैं तब आप कोई पराये नही हैं।"

कुछ भी चकित न होकर मीङ्ग-ई ने कहा—"क्या मैं पूछ सकता हूँ, आप किसकी पुत्री हैं और मेरे स्वामी से आपका कैसा सम्बन्ध है ?"

उस सुन्दरी ने कहा—

"पीङ्ग घराने मे मेरा जन्म हुआ है, चिग-तो नगर का यह एक बहुत पुराना वश है। मेरा नाम सोई है; मेरा विवाह एक बहुत ही उच्च कुल के व्यक्ति के साथ हुआ था—मेरे पति का नाम खाङ्ग था। इसी विवाह के द्वारा आपके स्वामी के घराने से नातेदारी हुई। पर मेरे पति विवाह के कुछ दिनों के बाद ही मर गये और मैं तब से इस निर्जन स्थान में आकर रहने लगी हूँ।"

उसके स्वर में चित्त मे बेहोशी लाने वाला सङ्गीत था। मीङ्ग-ई ने कभी ऐसा सुन्दर तथा मधुर स्वर नही सुना था। वह चकित हो गया—विह्वल हो गया! क्योंकि वह विधवा है इसलिये बिना निमन्त्रण के उसे अधिक समय तक ठहरना नहीं चाहिये और उचित भी नहीं। चाय पीकर वह जाने के लिये उठ कर खड़ा हो गया। पर श्रीमती साई इतना शीघ्र उसे जाने देना नहीं चाहती थी।

वह बोली—"नहीं मित्र, और कुछ देर तक तो रहो। श्रीमान् चैङ्ग जब सुनेंगे कि तुम मेरे घर में आये, पर मैं अच्छी तरह तुम्हारी खातिर नहीं कर सकी, तो वे नाराज हो जायँगे। भोजन करके जाना।"

मीङ्ग-ई मन ही मन बहुत आनन्दित होकर ठहर गया। सोई की तरह सुन्दरी उसने कभी देखी नहीं थी। उसने अनुभव किया कि वह अपने माँ-बाप से भी अधिक उससे प्रेम करने लगा है।

वे दोनो बाते करते रहे। कब दिन का प्रकाश अँधेरे मे विलीन हो गया, उन लोगो को पता नहीं था। नौकरानी आकर बत्तियाँ जला कर, भोजन के लिये आसन बिछा गई। भोजन आया। मीङ्ग-ई भोजन के लिये बैठा, पर उसे भोजन की रुचि नही थी—सामने बैठी हुई उस सुन्दरी को लेकर उसका चित्त खेल रहा था। उसे कुछ भी खाते न देख कर, उसे शराब पीने के लिये सोई जोर देने लगी। वे दोनों कई प्याले पी गये। शराब लाल रग की थी—मीठी और बहुत ही ठडी, पर पीने के पश्चात् ही उसकी सारी नसो मे एक अद्भुत गर्मी छा गई। पीने के बाद ही मीङ्ग-ई की आँखों के सामने सब वस्तुएँ चमकती हुई दीख पड़ने लगी, कमरे की दीवाले बहुत पीछे हट गई—छत ऊपर चढ़ गई; बत्तियाँ तारे की तरह चमकती मालूम हुई, और सोई का कण्ठ-स्वर निद्रित रजनी मे दूर से आती हुई सगीत-ध्वनि की तरह तैरता हुआ उसके कानों मे आने लगा। उसकी छाती फूलने लगी, जबान ढीली पड़ गई, ऐसी-ऐसी बाते वह कह गया जिसे वह कहने का साहस ही नही कर सकता था। पर सोई ने न उसे कहने से रोका और न उसकी बातें सुन कर मुस्कराई, बल्कि उसकी प्रशसा भरी बाते सुन कर उसकी बड़ी, उज्ज्वल आँखे आनन्द से हँसने लगी और उसकी दृष्टि से प्रेम बरसाती रही।

वह बोली, "मैंने सुना है, सगीत पर भी तुम्हारा बहुत दखल है। मैं भी कुछ गाना-बजाना जानती हूँ। तुम जैसे उस्ताद के साथ एक स्वर मे गाने को जी कर रहा है। मुझे बड़ी खुशी होगी यदि तुम मेरा गीत-सग्रह पढ़ कर अपरी राय प्रकट करो।"

मीङ्ग-ई ने उत्सुक होकर कहा—"तुम्हारी यह कृपा है कि तुम मेरे

साथ गाना चाहती हो। मैं सहर्ष गाऊँगा। तुम अपनी गीत-सग्रह दिखाओ।"

घण्टा बजा कर नौकरानी को बुला कर, सुन्दरी ने गीत-सग्रह लाने की आज्ञा दी। नौकरानी गीत-सग्रह देकर चली गई। मीङ्ग-ई उसे लेकर उत्सुक आनन्द से उसकी परीक्षा करने लगा। पीले कागज पर बहुत ही सुन्दर अक्षरो में गीत लिखे हुये थे—वैसी सुन्दर काली रोशनाई उसने कभी देखी न थी। उन गीतों के नीचे वेन-चीन, काओ-पीन और थो-मो जैसे बहुत प्राचीन महाकवियों के गीत देख कर वह चकित हो गया। ऐसा अमूल्य और अपूर्व सग्रह देख कर आनन्द से मीङ्ग-ई चिल्ला पडा। ऐसी प्राचीन पाण्डुलिपि किसी के पास रह सकती है, यह उसकी कल्पना के बाहर था। उस सग्रह को एक क्षण के लिये भी हाथ से छोडने को उसका जी नही कर रहा था।

उसने आवेग से चिल्ला कर कहा—"श्रीमती जी! यह एक सम्राट के खजाने से भी अधिक अमूल्य है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि यह पाँच सौ साल पहले के अमर कवियों के हस्ताक्षर हैं। यह सब कितनी हिफाजत से सुरक्षित हैं!—ऐसा दीख रहा है, जैसे कवियों ने आज ही इन्हे लिखा है। और इसकी रोशनाई भी कैसी आश्चर्यजनक है—पाँच सौ साल हो गये पर रग वैसा ही है।—और कवि-सम्राट काओ-पीन का यह गीत! आह, किसी ने भी ऐसी रचना नहीं कर पाई!"

विहुल आँखों से सोई बोली—"काओ-पीन! मेरे प्यारे काओ-पीन! काओ-पीन मेरा सब से प्रिय है। आओ मीङ्ग-ई हम दोनों उनके गीत एक स्वर में गायें—"

उस स्तब्ध, सुगन्धित, मधुर रात्रि में उन दोनों की मीठी स्वर-लहर स्वर्गिक पक्षियों की कल्लोल की तरह वायु मे प्रकम्पित होने लगी। पर क्षण भर के पश्चात् मीङ्ग-ई चकित विह्वल होकर गाना बन्द कर, अपनी संगिनी की ओर देखते हुये उसका गाना सुनने लग गया—

उसका स्वर इतना मीठा था !—वह विभोर, चेतनाहीन हो गया और उसकी आँखो से आनन्दाश्रु बहने लगे।

इसी तरह रात्रि काल की गोद में बीती जा रही थी, और वे बाते करते रहे, ठडी लाल शराब पीते रहे और पाँच सौ साल पहले के गीत गाते रहे...रात्रि समाप्त होने लगी। कभी-कभी माना स्वप्न से जग कर मीङ्ग-ई विदा लेने को सोचता, पर प्रत्येक बार सोई अपने मीठे स्वर से, किसी न किसी पुराने कवि की आश्चर्यजनक तथा मनोहर प्रेम कहानियाँ सुनाने लग जाती और वह मन्त्र-मुग्ध सा बैठा रह कर सुनने लगता; या वह कोई ऐसा सुन्दर गीत सुनाने लगती कि कानो के सिवाय सब इन्द्रियाँ चेतनाहीन हो जाती।...अन्त मे, जब सोई एक प्याली भर कर उसे शराब देने लगी, तब वह अपना एक हाथ, उसकी गरदन मे बिना डाले न रह सका और उसे अपने पास खींच कर, शराब से भी लाल उसके अधरों का चुम्बन किया। फिर उनके अधर अलग नहीं हुये,—रात्रि जाने कब बीत गई, उन्हे पता ही नहीं था।...

× × ×

पक्षी जग कर कलरव करने लगे, उदीयमान सूर्य को देख कर फूलो ने आँखे खोली। अन्त मे मीङ्ग-ई को उस अपूर्व जादूगरनी से विदा लेनी ही पड़ी। फाटक तक सोई उसके साथ आकर, प्रेम से चुम्बन कर, उसे विदा देती हुई बोली—"प्रियतम, जब आने की सुविधा हो, आना—जब तुम्हारा हृदय मेरे पास आने के लिये कहे, आ जाना—अच्छा ! और एक बात है। तुमसे मेरी एक प्रार्थना है कि हम दोनो के प्रेम की बात किसी से भी नहीं कहना। हम लोगों का प्रेम तारों के सिवाय सब जीवित व्यक्तियो से गुप्त रहे। मैं जानती हूँ, प्रियतम, तुम सच्चे और विश्वासी हो, और तुम इसे गुप्त ही रक्खोगे।...और हमारी सुखपूर्ण रजनी की स्मृति स्वरूप यह तुच्छ उपहार स्वीकार करो।"

और उसने एक बहुत ही सुन्दर और अद्‌भुत वस्तु उसे दी—वह एक पीले पत्थर से खोदी हुई सिंहाकृति दबौनी (paper weight) थी। मीङ्ग-ई ने बहुत ही प्रेम से उस उपहार को और उस सुन्दर हाथ का—जिसने उसे दिया—चुम्बन किया। "यदि मैं किसी विषय पर तुम्हे दुःख दूँ तो परमात्मा मुझे सजा दें। विदा, प्रियतमे !" कह कर वह चला आया।

उस दिन सुबह श्रीमान् चैङ्ग के भवन में लौट कर, मीङ्ग-ई ने जीवन मे यही प्रथम झूठ कहा। उसने कहा कि उसकी माँ ने अब उसे प्रत्येक रात को घर आकर रहने के लिये आज्ञा दी है, क्योंकि अब मौसम बहुत सुहावना हो गया है। घर दूर है, पर उसे खुली हवा और स्वास्थ्यकर व्यायाम की भी आवश्यकता है। मीङ्ग-ई ने जो कुछ कहा, उस पर श्रीमान् चैंग ने विश्वास कर लिया और कोई बाधा नही डाली।

मीङ्ग-ई प्रतिदिन सध्या के समय सुन्दरी सोई के मकान में जाता, पहली मिलन रात्रि की तरह वे आनन्दमय रात्रि बिताते : बारी-बारी से गाते; शतरज खेलते; फूल, वृक्ष, बादल, झरने, पक्षी और भौरो पर कवितायें करते। पर सबो मे सोई अपने प्रेमी से बढ जाती। जब वे शतरंज खेलते, वह मीङ्ग-ई का राजा घेर लेती। सोई की कवितायें उससे कही अच्छी होतीं। वे बहुत प्राचीन कवियो पर ही आलोचना करते—प्राचीन गीतों को ही गाते।

वे दोनों प्रेम-तरगों मे बहते रहे और वसन्त और ग्रीष्म ऋतु बीत गई—वर्षा आई।

×   ×   ×

फिर अचानक एक दिन, नगर मे मीङ्ग-ई के पिता से साक्षात् होने पर श्रीमान् चैङ्ग ने पूछा—"अब वर्षा आ गई—ऐसे खराब मौसम मे, आप प्रतिदिन शाम को क्यों अपने लड़के को घर बुलाते हैं? रास्ता

लम्बा है—जब वह सुबह लौटता है, तो बहुत थका हुआ मालूम होता है। ऐसे खराब मौसम मे मेरी कुटीर मे ही रहने को उसे आज्ञा दीजिये।"

मीग-ई के पिता बहुत ही विस्मित होकर बोले—"महाशय जी, आप क्या कह रहे हैं? गर्मियों भर मींग-ई, एक दिन के लिये भी, हम लोगो के घर नहीं आया। मैं डर रहा हूँ, कहीं वह आवारों के साथ जुआ तो नही खेल रहा है! या शायद शराब पीकर दुष्ट स्त्रियों के घर रात्रि तो नहीं क़ाट रहा है!"

पर श्रीमान् चैंग ने कहा—"नहीं! आपका यह डर अमूलक है। उस युवक मे मैंने आज तक कोई ऐब नहीं देखा, और मेरे गाँव में या उसके आस-पास में कहीं भी वेश्याये नही हैं। शायद मींग-ई से किसी युवक की मित्रता हो गई है और उसके साथ रात काटता होगा। शायद इस डर से उसने मुझसे झूठ कहा था कि सम्भवतः मैं रात को कहीं रहने की आज्ञा नहीं दूँगा। जब तक मैं इस रहस्य का पता न पा लूँ तब तक आप उसे कुछ भी न कहिये। आज शाम को मेरा एक नौकर उसका पीछा करेगा और वह कहाँ जाता है, देख आयगा।"

मीङ्ग-ई के पिता—तियेन-पीलो, इस बात पर सहमत हो गये और वायदा किया कि कल सुबह श्रीमान् चैग के भवन मे जाकर उनसे मिलेंगे।

शाम को मींग-ई जैसे ही चैंग के भवन से निकला, वैसे ही अदृष्ट-भाव से एक नौकर ने उसका पीछा किया। पर एक चौराहे पर मींग-ई जाने कहाँ अदृश्य हो गया—मानो पृथ्वी उसे निगल गई। नौकर उसे बहुत तलाश कर घबराया हुआ लौट आया और श्रीमान् चैंग से सब कह सुनाया। चैंग ने फौरन तियेन-पीलो के पास यह खबर भेज दी।

× × ×

अपनी प्रेमिका के कमरे में जाकर मीङ्ग-ई ने देखा, वह रो रही है। यह देख कर वह विस्मित हुआ—उसका हृदय दुःख से भर गया।

सोई उसके गरदन में एक हाथ डाल कर सिसकियाँ भरती हुई बोली—"प्रियतम! अब हम दोनों को सदा के लिये अलग हो जाना पड़ेगा—क्यों, यह मैं तुम से नहीं कह सकती। शुरू से ही मैं जानती थी कि कभी न कभी यह बिछुड़ने का समय आयेगा; अब वह समय आ गया है, यह देख कर मेरा हृदय फटा जा रहा है। आज की रात्रि के पश्चात् हम लोग फिर कभी एक दूसरे से नहीं मिलेंगे, प्रियतम!—और मैं जानती हूँ, तुम जब तक जीवित रहोगे, मुझे नहीं भूलोगे।—मैं यह भी जानती हूँ कि तुम किसी दिन एक महान विद्वान् बनोगे—तुम पर सम्मान और धन की वर्षा होगी—और, कोई सुन्दरी तथा प्रेममयी रमणी मेरा अभाव पूरा करेगी।...अब हम लोग और दुःख की बाते नहीं करेंगे। आओ, इस अन्तिम रजनी को सुख से काटें, जिससे तुम्हे मेरी स्मृति दुःखदायी न हो—जिससे तुम मेरा हँस-मुख चेहरा ही स्मरण कर सको।"

उसने अपनी आँखों से मोती की तरह आँसू पोंछ डाले और शराब, गाने की किताब और सितार मँगवाये, उसने मीग-ई को विच्छेद के बारे में एक भी शब्द नहीं कहने दिया। और स्थिर झील के साथ तुलना कर स्वार्थ, शोक और क्लान्ति के बादलों के घिरने के पूर्व का स्थिर चित्त पर एक प्राचीन गीत गाकर सुनाया। कुछ ही देर में गीत और शराब के आनन्द से वे दोनों दुःख को भूल गये, और मींग-ई को यह अन्तिम घड़ियाँ प्रथम रात्रि से भी अधिक सुखद और स्वर्गिक प्रतीत होने लगी।

पर जब सुबह का पीला सौंदर्य आया, तब उनका विषाद लौट आया। वे रोने लगे। अन्तिम बार सोई अपने प्रेमी के साथ फाटक

तक आई, और उसने मींग-ई को चूम कर, उसके हाथ में एक बहुत ही सुन्दर रोशन-दान और प्राचीन कवियों की पुस्तक दी जो किसी भी महान् कवि की मेज पर रखने योग्य थी। और वे रोते-रोते सदा के लिये विदा हुये।

× × ×

फिर भी मींग-ई यह सोच ही नहीं सका कि यह चिर-विच्छेद है। वह मन ही मन कहने लगा—"नहीं! मैं कल ही उससे मिलूँगा। उसे छोड़ कर मैं जीवित नहीं रह सकता—और यदि मैं उसके पास जाऊँ तो यह सम्भव नहीं है कि वह मुझसे न मिले।" श्रीमान् चैंग के भवन तक रास्ते मे आते-आते वह इसी तरह सोच रहा था।

भवन मे आकर उसने देखा—बराडे मे उसके पिता और स्वामी उसकी प्रतीक्षा मे खडे हैं। उसके कुछ बोलने के पहिले ही तियेन-पीलो ने कहा—

"तुम रात को कहाँ रहते हो?"

उसकी झूठी बात पकडी गई है, यह देख कर, कुछ भी उत्तर न देकर, सिर नीचा किये, पिता के सामने मीग-ई खडा रहा। उसे चुप देख कर तियेन-पीलो ने अपनी हाथ की छडी से उसको बडे जोर से मारा। कुछ पिता के डर से और कुछ कानून के डर से ("यदि कोई पुत्र पिता की आज्ञा न माने तो उसे बॉस से सौ बार मारा जायगा।"), मीग-ई ने अपने प्रेम का सारा इतिहास कह दिया।

मीग-ई की कहानी सुन कर श्रीमान् चैंग चकित होकर बोले—"बेटा!—पीग परिवार से मेरी नातेदारी नही है। तुम जिस स्त्री के बारे मे कह रहे हो, इसके बारे मे मैंने कभी कुछ सुना भी नही और न इस पीग परिवार का नाम ही। पर, यह भी मैं जानता हूँ कि तुम अपने पिता से झूठ नहीं कह रहे हो. इसमे कोई गहरा रहस्य है।"

तब मीग-ई ने सोई के उपहार—दवौनी, रोशन-दान और गीतों

की पुस्तक उन लोगो को दिखायी। श्रीमान् चैंग और तियेन-पीलो उन्हे देख कर विस्मय से अवाक् हो गये। दबौनी और रोशन-दान को देखते ही सहज ही प्रतीत हो सकता है कि वे शताब्दियो से जमीन में गड़ी हुई थीं—उनकी अद्भुत कला भी आजकल के कारीगरों को असाध्य है, और वह पुस्तक ऐसी सुरक्षित रक्खी गई थी कि पॉच शताब्दी पहले की अवश्य रही होगी।

—श्रीमान् चैंग ने तियेन-पीलो से कहा—"चलिये, हम लोग अभी मींग-ई के साथ चल कर देख आवें कि उसने यह अद्भुत चीजे कहॉ पाईं, तब हम लोगों को सब रहस्य मालूम हो जायगा। मेरा जहॉ तक ख्याल है, मींग-ई सच कह रहा है, पर यह सब मेरी समझ के बाहर की बात है।"

वे तीनों उसी क्षण सोई की कुटीर की ओर चल पडे।

× × ×

पर जब वे फूलों के वन मे आये, तो मींग-ई सहसा खडे होकर अस्पष्ट स्वर से चिल्ला पडा। जहॉ सोई का भव्य-कुटीर था, वहॉ बिल्कुल कुछ नही—सब उजाड़ दीख रहा था। वहॉ केवल एक छोटी-सी समाधि थी, जो इतनी पुरानी थी कि जगह-जगह पर टूटी हुई थी। मींग-ई अपनी ऑखो पर हाथ फेरने लगा। उसे भ्रम तो नहीं हो रहा है ?. पर सोई की कुटीर कही नही थी! मींग-ई घबराया हुआ श्रीमान् चैंग और अपने पिता की ओर निर्वाक् चकित-सा देखता रहा।

श्रीमान् चैंग ने कहा—"अब मेरी समझ मे आया। आपके पुत्र को जिस सुन्दरी ने मुग्ध किया था, उसी की समाधि आप यह सामने देख रहे हैं।—हॉ, अब मुझे याद आई, यह सोई-थाओ की समाधि है। यह वही प्रसिद्ध सुन्दरी सोई-थाओ है, जिसके लिये कितना ही अनर्थ हो गया था। वह उस समय के गवर्नर और महान् कवि, काओ-पीन की प्रेमिका थी, कवि ने उसे अपने गीतो की पाण्डुलिपि उपहार

मे दी थी। वह एक असाधारण स्त्री थी—वह सदा के लिये पृथ्वी से लुप्त होने वाली नहीं है। उसकी आत्मा इस निर्जन वन मे अभी तक विचरण कर रही होगी।"

श्रीमान् चैंग चुप हो गये। तीनों पर एक आतंक छा गया। प्रातःकाल का हल्का कुहरा चारों ओर अस्पष्टता लाकर वन के भौतिक सौन्दर्य को डरावनी आकृति दे रहा था। फूलों की उग्र सुगन्ध लिये हुये वायु का एक झोका आया, वृक्ष के पत्ते हिले—मानो उस स्तब्धता मे धीरे से पुकार रहे हों—"सोई-थाओ!"

× × ×

तियेन-पीलो इस घटना से डर गये थे, उन्होंने पुत्र को कोआङ्ग-चु-फु नगर मे भेज दिया। कुछ ही सालो से अपनी विद्या और बुद्धि से मीग-ई ने एक उच्च पद पाया और उसे बहुत सम्मान मिलने लगा। फिर एक प्रसिद्ध व्यक्ति की कन्या के साथ उसका विवाह हुआ, और इस मिलन के फल-स्वरूप कई सर्वगुण सम्पन्न बच्चे हुये। वह सोई को अन्त तक नही भूल सका, पर उसने सोई की बात कभी किसी से नही कहीं।

जापान

स्वामि-भक्ति

लेखक—अज्ञात

अठारहवी शताब्दी के प्रारम्भ में, जापान के हारीमा प्रान्त मे ताकुमी नामक एक राजा रहते थे। किसी आवश्यकीय काम से वहाँ सम्राट का दूत आने वाला था, इसलिये यह निश्चय हुआ था कि ताकुमी और एक दूसरे राजा, कामी-सामा, नियमानुसार उनका स्वागत और आदर-सत्कार करेंगे, और कोतसुकी नामक एक ऊँचा सरकारी अफसर उन्हे स्वागत करने का ढग और शिष्टाचार सिखायेगा। यह सब सीखने के लिये इन दोनों राजाओ को कोतसुकी के भवन में प्रतिदिन जाना पड़ता था। पर कोतसुकी धन का बहुत लोभी था। रिवाज के अनुसार इन दोनों राजाओ ने शिष्टाचार सीखने के लिये जो उपहार दिये थे, उन्हे वह बहुत तुच्छ और अयोग्य समझने लगा। वह सभ्याचार सिखाने लगा, पर अभद्रता से—उन लोगो को बहुत बनाते हुये। ताकुमी कुछ सयत-स्वभाव के थे—वे धैर्य के साथ इस बेइज्जती को सहते गये, पर कामी-सामा ने दिन पर दिन नाराज होकर, एक दिन कोतसुकी को जान से मार डालने का निश्चय किया।

एक रात को कोतसुकी के भवन से अपने भवन मे लौटने पर, कामी-सामा अपने सभासदों को बुला कर बोले—"कोतसुकी मुझे और ताकुमी को बहुत बेइज्जत कर रहा है। यह हरगिज नहीं सहा जा सकता। मै उसे मार डालता, पर मैंने सोचा, अगर मैं ऐसा करूँ तो मेरी जान तो जायगी ही, मेरी सम्पत्ति भी जब्त हो जायगी और मेरा

परिवार और अश्रित-जन तबाह हो जायेगे, यह सोच कर मैं चुप-चाप चला आता हूँ। पर ऐसे दुष्ट का जीवन लोगो के लिये हानिकारक है—कल जाकर मे उसे मार डालूँगा : मैंने पूरा निश्चय कर लिया है, और मैं इसके बारे मे किसी की बात नहीं सुनूँगा।" जैसे-जैसे वे कहते गये उनका मुख क्रोध से अधिकतर लाल होता गया।

कामी-सामा के सभासदों मे एक बहुत ही समझदार था। राजा के चेहरे पर और वाक्यों मे दृढता देख कर वह समझ गया कि अब मना करने पर भी कोई फल न होगा। उसने कहा—"हुजूर की बात कानून है—जो कह रहे हैं, वही होगा। आपका ताबेदार इसके लिये तैयारी करेगा। हुजूर के वहाँ कल जाने पर, अगर कोतसुकी फिर बेअदबी करे तो उसकी मृत्यु होगी।"

यह सुन कर राजा बहुत खुश हुये और अधीरता के साथ दूसरे दिन की प्रतीक्षा करने लगे, जिससे वे अपने शत्रु को मार सकें।

पर वह सभासद घबराया हुआ अपने घर गया और राजा की बातो पर विचार करने लगा। सोचते-सोचते उसे यह ध्यान आया कि कोतसुकी की कजूसी प्रसिद्ध है—राजा के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करने के लिये रिश्वत, वह चाहे जितनी हो, उसे देना कही बेहतर होगा। यह सोच कर, जितनी चाँदी वह इकट्ठी कर पाया, नौकरो के सिर पर लदवा कर, एक घोडे पर सवार होकर कोतसुकी के भवन में जाकर, उसके प्रधान नौकर से कहा—"राजा साहब ने श्रीमान् कोतसुकी जी की सेवा मे यह भेजा है। राजा साहब बहुत कृतज्ञ हैं कि वे बहुत मेहनत कर, राजदूत का स्वागत करने के लिये, अदब-कायदा सिखा रहे हैं। मेरे मारफत उन्होंने बहुत ही तुच्छ यह उपहार भेजा है। आशा है, कोतसुकी जी इसे स्वीकार करेंगे और राजा साहब पर कृपाभाव रक्खेंगे।" यह कह कर उसने एक हजार छटाँक चाँदी कोतसुकी के लिये और सौ छटाँक उनके नौकरो मे बाँटने के लिये दी।

सभासद से बहुत नम्रता के साथ बैठने के लिये कह कर प्रधान नौकर कोतसुकी से कहने के लिये दौड़ा। यह सुन कर कोतसुकी की खुशी की सीमा नही रही। फौरन् सभासद को उसी कमरे मे ले आने के लिये आज्ञा दी। सभासद के कमरे मे आने पर, बडी खातिर से उसे बैठा कर, धन्यवाद देकर कोतसुकी ने कहा कि कल से और भी ध्यान से राजा साहब को अदब-कायदा सिखाया जायगा।

अपने उपाय की सफलता पर बहुत खुश होकर, कोतसुकी से विदा लेकर सभासद घर लौट आया। पर इस सब कार्रवाई का कामी-सामा को कुछ भी पता नहीं था। बदला लेने के लिये अधीरता के साथ वे दूसरे दिन की प्रतीक्षा करते रहे ..

सवेरा हुआ। कामी-सामा अपने दलबल सहित कोतसुकी के भवन में पहुँचे।

जब कोतसुकी उनसे मिला तो उसका व्यवहार बिल्कुल बदल गया था। उसने बहुत खातिर के साथ कामी सामा को बैठा कर, विनय के साथ कहा—"राजा साहब, आप आज बहुत जल्दी आ गये हैं। आपका यह उत्साह तारीफ के काबिल है। आज आपको सभ्याचार की कुछ नई बातें बताऊँगा—सिखाऊँगा। राजा साहब! अपने पहले के व्यवहार के लिये मैं सविनय आपसे क्षमा माँगता हूँ—आशा है, आप क्षमा कर देंगे। स्वभाव से ही मेरी जुबान कुछ कड़ी है, अगर कभी मेरा बर्ताव आपको नागवार मालूम हुआ हो, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं..." और वह इसी तरह की मीठी-मीठी बातें बहुत नम्रता के साथ गिडगिडाता गया।

यह विनीत स्वर और बातें सुन कर कामी-सामा का चित्त नरम पड़ गया और उन्होंने बदला लेने की इच्छा त्याग दी। इस तरह एक चतुर सभासद की बुद्धिमानी से कामी-सामा नाश होने से बच गये।

कुछ देर के बाद ताकुमी आये। ताकुमी ने कुछ भी उपहार नहीं

भेजा था, इससे कोतसुकी मन ही मन चिढ़ रहा था। वह पहले की तरह ताकुमी को बनाने लग गया। पर ताकुमी इस पर ध्यान नही दे रहे थे। वे किसी तरह सभ्याचार सीख कर इस दुष्ट से पीछा छुड़ाना चाहते थे, इसलिये सब सहन करने को तैयार थे।

पर कोतसुकी उन्हे चिढ़ाने पर तुला हुआ था। उसने कहा—"राजा ताकुमी! जरा इधर तो आइये। मैं अपने मोजे का फीता बॉधना भूल गया हूँ। आपको बॉधना आता है या नही, फीता बॉध कर दिखाइये तो..."यह कह कर उसने अपना पैर आगे बढा दिया।

क्रोध से जल कर चुप-चाप ताकुमी ने उसके मोजे का फीता बाँध दिया।

कोतसुकी ने दूसरी ओर मुँह फेर कर कहा—"छिः-छिः! अरे, आपको ठीक ढँग से फीता तक बॉधना नही आता है! कोई भी देखने पर समझ जायगा, आप बिल्कुल गॅवार हैं।—सभ्याचार कुछ भी नही जानते हैं।" यह कह कर वह ताकुमी की ओर देखते हुये बुरी तरह से हँस कर, भीतर के एक कमरे की ओर जाने लगा।

यह सुनकर ताकुमी के धैर्य का अन्त हो गया—उनका क्रोध भभक उठा। ऐसा अपमान सहना असम्भव था। उन्होंने चिल्ला कर कहा—"ठहरिये!"

"क्यो, क्या बात है?" कह कर जैसे ही कोतसुकी घूम कर खडा हुआ, ताकुमी ने तलवार से उसके सिर पर चोट की। पर उसे चोट न लगी, क्योकि उसके सिर पर लोहे की टोपी थी, सिर्फ उसके माथे का चमड़ा कुछ कट गया। वह बडे जोर से भागा। ताकुमी ने उसका पीछा किया और फिर दूसरी बार तलवार से वार किया। इस बार उनका निशाना व्यर्थ गया और तलवार एक खम्भे से टकरा गई। किसी काम से ओशोवी नामक एक कर्मचारी उधर आ रहा था, यह मामला देख कर उसने झपट कर ताकुमी को पकड़ लिया। यह अवसर पाकर कोतसुकी भाग निकला।

फिर बड़ा शोर मचा और लोग दौडे हुये आये। ताकुमी को गिरफ्तार करके उसी भवन के एक कमरे मे रक्खा गया।

कुछ दिनों के बाद लाट साहब के दरबार मे ताकुमी का फैसला हुआ। क्योंकि ताकुमी ने सरकारी अफसर के घर मे उस पर तलवार से वार किया था, इसलिये "हारा-कारी" यानी आत्मा-हत्या करने की सजा सुनाई गई और उनकी सारी सम्पत्ति जब्त होने की आज्ञा हुई। क़ानून ऐसा ही था। ताकुमी को "हारा-कारी" करनी पड़ी और उनकी सब सम्पत्ति जब्त हो गई। उनके परिवार को घर-द्वार छोड कर चला जाना पडा और उनके सभासद और नौकरो को दूसरी जगह नौकरी लेनी पडी—कोई-कोई स्वतन्त्र व्यापार मे लग गये।

ताकुमी के सभासदो मे ओइशी नामक एक सभासद था। उसने और छियालीस नौकरों को बुला कर एक दल का सगठन कर, यह निश्चित किया कि कोतसुकी को मार कर अपने स्वामी, राजा ताकुमी की मृत्यु का बदला लेना चाहिये। ओइशी उस मामले के समय गैरहाजिर था, वह अगर राजा के पास रहता तो ऐसा नही होता। वह बहुत ही बुद्धिमान और चतुर था—वह कोतसुकी को योग्य उपहार भेज कर उसे खुश कर देता। उस समय जितने सभासद भवन मे थे, सबके सब बुद्धिहीन थे—उन्होने स्वामी का नाश किया, घर उजाड दिया।

ओइशी अपने छियालीस साथियों के साथ सलाह करने लगे—कैसे बदला लिया जाय। कौतुसुकी के ससुर एक बडे जागीरदार थे; उसने अपनी शरीर रक्षा के लिये उनसे सौ सैनिक मॅगा लिये। यह सेना रहते हुये बदला लेना असम्भव था। वे किसी तरह इस सेना को हटा कर अपना काम बनाना चाहते थे। कोतसुकी को अगर किसी तरह यह विश्वास हो जाय कि ताकुमी के अनुचर लोगों ने बदला लेने का विचार छोड दिया है, तो वह इस सेना को वापिस भेज देगा। उसके जैसा कंजूस अधिक दिनों तक यह भारी खर्चा अपने सिर पर नहीं रक्खेगा।

यह सोच कर वे सब अलग हो गये और भेष बदल-बदल कर तरह तरह के काम-धधो मे लग गये। उनका नेता, ओइशी, कियोतो नामक नगर के एक नीच मोहल्ले मे मकान लेकर, शराब और वेश्याओ के बीच मे दिन बिताने लगा, जिससे कोतसुकी सोचने लगे कि उसका पतन हो गया है—वह क्या बदला लेगा।

कोतसुकी जानता था कि ताकुमी का अनुचरवर्ग अवश्य बदला लेगा। उसने कई जासूस नियुक्त किये जो कि अनुचरों पर सदा निगाह रखते और उनके कार्यक्रमो की बात सुनता। कोतसुकी को धोखा देने के लिये ओइशी पतित होता रहा। एक दिन ओइशी एक वेश्या के यहाँ खूब शराब पी कर घर आने लगा, पर वह इतना नशे मे था कि उसमे चलने की शक्ति नही रही, वह सड़क ही पर लेट कर सो गया। लोग हँसने लगे—घृणा प्रकट करने लगे। सातसुमा नामक उसके स्वामी के एक रिश्तेदार उसी समय सड़क पर से जा रहे थे, उसे देख-कर बोले—"यह ताकुमी का सभासद ओइशी है न?...हाय, इस आदमी का कैसा पतन हो गया है! स्वामी की मृत्यु का बदला न लेकर यह नीच, नमकहराम, शराब और औरतो मे दिन काट रहा है।...देखो कैसा सड़क पर पडा है! बेईमान जानवर कही का!" यह कह कर उसने ओइशी के मुँह पर थूका और तीन लाते मारी।

जासूस से यह सब सुनकर कोतसुकी को बहुत शान्ति मिली। छः सात महीने से बहुत डर और घबराहट से उसके दिन कट रहे थे। उसे तसल्ली हुई कि अब कोई डर नहीं—वे लोग बदला लेने की फिक्र मे नहीं हैं।

ओइशी को इस तरह व्यभिचारपूर्ण जीवन काटते देख कर, उसकी पत्नी उसके पास जाकर बोली—"मेरे स्वामी! आपने कहा था कि आप शत्रु को धोखा देने के लिये वेश्याओ के साथ रह रहे

हैं। पर दिन पर दिन आप अधिक से अधिक पतित होते जा रहे हैं? इस तरह अपना नाश न कीजिये—जरा सम्हल जाइये।"

ओइशी बोला—"ज्यादा बक-झक न करो—भागो यहाँ से। मै तुम्हारी बाते नही सुनना चाहता। अगर मेरा रहन-सहन तुम्हे बुरा लगता है, तो तुम्हे तलाक दे दूँगा, तुम अपना रास्ता देखना। मैं तो दो-तीन खूबसूरत लड़कियाँ खरीद रहा हूँ—उनके साथ बडे आनन्द से मेरे दिन बीतेंगे। तुम्हारी तरह बूढी औरत को देख कर मुझे घृणा होती है—तुम मेरे सामने से हट जाओ।"

यह कह कर ओइशी बहुत नाराजगी के साथ पत्नी को धक्का देकर मकान से निकालने लगा। पत्नी रोती-रोती विनती करने लगी—"मेरे स्वामी! ऐसा न कहो! बीस साल तक तन-मन से तुम्हारी सेवा की है—तुम को तीन सन्तानें दी हैं, तुम्हारी बीमारी और दुःख मे मैं साथ रही हूँ। तुम इतने निर्दय न बनो। दया करो! दया करो!"

ओइशी ने झल्ला कर कहा—"मैं एक भी नही सुनना चाहता। मैंने निश्चित कर लिया है—तुम चली जाओ, मेरे लड़के भी जब मेरे विरुद्ध हैं तब वे भी तुम्हारे साथ जाये। तुम लोगों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रहा। मुझे और दिक करने के लिये यहाँ न आओ।"

रोती-रोती वह चली आई और बडे लड़के चिकारा से सब बात कही। चिकारा आकर बाप से प्रार्थना करने लगा कि माँ का क़सूर माफ कर दिया जाय। पर ओइशी अटल रहा। अन्त मे दो छोटे बच्चो को लेकर पत्नी अपने मैके चली गई। चिकारा बाप के साथ रहा।

जासूसो ने जाकर कोतसुकी से कहा कि ओइशी ने अपनी पत्नी और पुत्रों को त्याग दिया और दो वेश्याओ को अपने घर मे बैठाया है—वह व्यभिचारपूर्ण जीवन काट रहा है। यह सब सुन कर कोतसुकी को पक्का विश्वास हो गया कि अब ओइशी जैसे आदमी से उसे कोई डर नहीं है—उसके जैसे आदमी मृत मालिक के लिये अपने

जीवन को खतरे में नही डाल सकते। धीरे-धीरे, कई महीनो के बाद, कोतसुकी ने आधी से अधिक सेना अपने ससुर के पास लौटा दी, और चैन और स्वच्छन्दता से रहने लगा। पर कोतसुकी को पता नहीं था कि ओइशी उसे धोखा दे रहा था। ओइशी अपने स्वामी का मृत्यु का बदला लेने के लिये रास्ता बना रहा था,—उसे पत्नी या पुत्रों का ज़रा भी खयाल नहीं था। पत्नी और पुत्रो के लिये क्या वह अपने कर्तव्य से हट जायगा? पत्नी को खुश करने के लिये वह ऐसा कुछ भी काम नही कर सकता था जिससे कर्तव्य मे विघ्न हो या देर हो जाय। ऐसा प्रभुभक्त ससार मे विरला होता है—धन्य है ओइशी को!

इसी तरह व्यभिचारपूर्ण जीवन बिता कर ओइशी शत्रु की आँखों मे धूल झोंकता रहा। उसके दल के अन्य साथी लोगो ने भेष बदल कर—राज, बढई या फेरी वाले बन कर कोतसुकी के भवन के भीतर जाकर मकान का पूरा नकशा ठीक-ठीक जान लिया; कौन कमरा किधर है—किसमे कौन रहता है—आने-जाने का रास्ता, यह सब उन्होंने पता लगा लिया, और यह भी कि कितने नौकर हैं—कौन साहसी और प्रभुभक्त हैं, कौन डरपोक। यह सब खबरें वे ओइशी को भेजते रहे। और जब ओइशी के पास खबर पहुँची कि अब केवल बीस सन्तरी कोतसुकी के पास हैं और कोतसुकी निडर होकर कोई भी पेशबन्दी बिना किये रहता है, तो बदला लेने का दिन निकट आ गया देख कर ओइशी खुश हो गया। तब ओइशी ने अपने दल के सब साथियों को एक नियत दिन और स्थान पर इकट्ठे होने के लिये सूचना भेजी और किसी तरह वह जासूसों की निगाह बचा कर कियोतो नगर से भाग निकला। फिर उन सैंतालीस आदमियों ने मिल कर अपना कार्य-क्रम निश्चित किया और मौके की प्रतीक्षा करते रहे।

दिसम्बर का महीना था—बडे जोरो की ठंड थी। एक रात को बर्फ का तूफान चलने लगा। सारा जगत निद्रित और स्तब्ध था। पर

उन सैंतालीस आदमियो ने ऐसी भयानक रात्रि ही अपने कामो के लिये ठीक समझी। वे सब मिल कर सलाह कर दो दलों में बँट गये। यह निश्चित हुआ कि एक दल ओइशी के नेतृत्व मे कोतसुकी के भवन के सामने के फाटक पर आक्रमण करेगा और दूसरा दल उसके पुत्र चिकारा की अधीनता मे भवन के पिछले हिस्से पर आक्रमण करेगा, पर क्योंकि चिकारा केवल सोलह साल का था इसलिये चुगिमन नामक एक व्यक्ति उसकी खबरदारी करेगा। फिर ओइशी के हुक्म से यह निश्चित किया गया था कि ढोलक की एक आवाज दोनो तरफ से एक साथ आक्रमण करने-की सूचना होगी, और अगर कोई कोतसुकी को मार सके तो तेज सीटी की आवाज करेगा जिससे सब साथियो को मालूम हो जाय, तब वे सब एक जगह इकट्ठे होकर उस सिर को सेगाकुजी के मन्दिर में ले जाकर मृत स्वामी की समाधि पर चढायॅगे! फिर वे सब सरकारी अदालत में जाकर अपनी करतूत कह कर सजा लेंगे। इसके लिये वे प्रतिज्ञाबद्ध थे।

उस रात को उन सैंतालीस आदमियों ने आक्रमण करने के लिये तैयार होकर, एक साथ अन्तिम भोजन किया, क्योकि दूसरे दिन उनकी मृत्यु निश्चित थी। भोजन के बाद ओइशी ने खडे होकर साथियों से कहा—

"आज रात को हम लोग शत्रु के भवन पर आक्रमण करेंगे, उसके अनुचर हम लोगों को रोकेंगे और हमे उन लोगों की हत्या करना पाप है, इसलिये तुम लोगो से मेरी प्रार्थना है कि किसी असहाय व्यक्ति को न मारना।"

उसका कथन समाप्त होने पर उसके साथी लोग तालियाँ पीटने लगे और दोपहर रात्रि बीतने की प्रतीक्षा करते रहे।

जब नियत समय आया तब वे सैंतालीस आदमी निकल पडे। बर्फ का तूफान चल रहा था, उनके मुख पर बर्फ मानो कोडे मार रहा था,

पर उन्हे ध्यान नही था—वे तेजी से बढ़ते गये। अन्त मे वे कोतसुकी के भवन के पास पहुँच कर दो दलों मे विभक्त हो गये और चिकारा तेईस आदमियों के साथ भवन के पिछवाड़े चला गया। तब चार आदमी दीवार पर रस्सी की सीढी लगा कर भीतर के आँगन मे उतर गये। देखते ही उन लोगो को मालूम हो गया कि सब सो रहे हैं। वे चारो फाटक के सिपाहियों के कमरे की ओर बढ़े, फाटक का ताला बन्द था और दोनो सिपाही गाढ़ी नीद मे सो रहे थे। सिपाहियों के चकित होकर जगने के पहले ही उन चारो ने उन्हे बाँध डाला। सिपाहियों के पास फाटक की कुञ्जी नहीं थी। पाँच-छः हथौडे मारते ही फाटक खुल गया। इसी समय चिकारा अपने तेईस साथियों के साथ पीछे का दरवाज़ा तोड़ कर भीतर घुस आया।

फिर ओइशा ने एक आदमी भेज कर पड़ोसियो के घर में कहलाया—"हम लोग राजा ताकुमी के अनुचर हैं और आज रात को कोतसुकी के भवन मे घुस कर अपने स्वामी की मृत्यु का बदला ले रहे हैं। हम लोग कोई चोर-डाकू नही हैं, इसलिये आप लोगो को कोई डर नहीं है। आप लोग निश्चिन्त रहिये।" कोतसुकी की नीचता के कारण सब पड़ोसी उससे घृणा करते थे—उन लोगो ने कोतसुकी की कुछ भी मदद नही। एक और सावधानी की गई थी। भवन से कोई निकल कर बाहर से न सहायता ले आवे, इस ख्याल से ओइशी ने आँगन के चारों कोनों की दीवार पर आठ तीरन्दाज तैनात कर दिये और यह हुक्म दे दिया कि जो कोई भवन से निकले, उसे तीर से मार डालो। आक्रमण का क्रम बना कर, लोगो को ठीक जगह पर खड़ा कर ओइशी ने अपने हाथ से ढोलक पीटी और आक्रमण करने की सूचना दी।

कोतसुकी के दस अनुचर शोर सुन कर जाग पडे, और तलवार हाथ में लिये मालिक की रक्षा के लिये सामने के कमरे मे आ गये।

इसी समय ओइशी अपने साथियो के साथ उसी कमरे मे पहुँचा। दोनो दलो मे घमासान लड़ाई शुरू हो गई। इसी समय चिकारा अपने साथियों के साथ बाग के भीतर से भवन के पिछले कमरों मे जा घुसा। कोतसुकी ने अपनी पत्नी और नौकरानियो के साथ भाग कर एक बन्द दालान मे आश्रय लिया। और इधर बाकी नौकर तलवार लिये मालिक की रक्षा करने के लिये आ पहुँचे। पर ओइशी के दल ने सहज ही मे उन दस अनुचरों को धराशायी कर दिया और पीछे के कमरो मे जाकर चिकारा के दल से मिल गये।

कुछ ही क्षण मे कोतसुकी के अनुचर लोग समझ गये कि दुश्मन को हटाना कठिन है—सिर्फ कुछ देर रोक कर रक्खा जा सकता है। इसलिये उन लोगों ने कोतसुकी के ससुर के पास, जो डेढ़ मील दूर रहते थे, सहायता के लिये दो तरफ से दो आदमी भेजे। पर उन दोनों दूतों को ओइशी के तीरन्दाजों ने, जो आँगन की दीवार पर खड़े थे, मार डाला। सहायता की आशा न देख कर वे जी-जान से लड़ने लगे। तब ओइशी ने चिल्ला कर कहा—"कोतसुकी ही केवल हम लोगों का शत्रु है—भीतर जाकर उसे मृत या जीवित लाओ।"

कोतसुकी के खास कमरे के दरवाजे पर तीन तगड़े सिपाही नगी तलवारें लिये खडे थे। पहले का नाम हेहाची, दूसरे का हन्दैयू और तीसरे का इक्काकु था—यह तीनों सच्चे और ईमानदार थे, तलवार के बडे भारी चलाने वाले थे। वे तीनों इतनी वीरता से लड़ने लगे कि उन तीस आदमियों को पीछे लौट आना पडा। यह देख कर ओइशी दाँत पीस कर चिल्लाया—"यह क्या! क्या तुम लोगो ने स्वामी की मृत्यु का बदला लेने के लिये अपना-अपना जीवन देने की क़सम नहीं खाई है?—और अब तीन आदमियों के सामने से भाग रहे हो!—पीछे हट रहे हो! कायर कहीं के! मालिक के लिये लड़ते-लडते जीवन देने से बढ़ कर पुण्य का काम नहीं है!" फिर अपने लड़के चिकारा

की ओर देखते हुए उसने कहा—"बेटा, जाओ—आगे बढ़ो, अगर वह लोग तुम से ताकतवर हैं तो कट कर मर जाओ ।"

इन शब्दो से जोश पाकर चिकारा ने एक भाला लेकर हन्दैयू पर वार किया, पर वह ठहर नही सका । हन्दैयू छः-सातो को बाग की ओर ढकेलते हुये ले गया, पर आखिर मे पीछे से उसका सिर काट दिया गया । इतने मे सब मिल कर हेहाची और इक्काकु पर गिरे । वे दोनो अधिक देर तक युद्ध नहीं कर सके और मार डाले गये । अब कोतसुकी के अनुचरों से एक भी लड़ाका नहीं बचा था । यह देख कर, खून से लाल तलवार लिये, चिकारा भीतर घुस गया पर कोतसुकी वहाँ नहीं दीखा । वह एक दूसरे कमरे की ओर जा रहा था कि कोतसुकी के जवान पुत्र साईए ने एकाएक आकर उस पर तलवार से वार किया । पर कुछ क्षणों के बाद ही साईए घायल होकर भाग निकला । अब कोतसुकी के सब लडाके अनुचर मर चुके थे या घायल हो गये थे । लड़ाई बन्द हुई । पर कोतसुकी कहीं भी नही दीख रहा था ।

तब ओइशी ने साथियो को कई दलों मे बाँट कर भवन के चारो तरफ ढूँढ़ने भेजा—पर कोतसुकी नही मिला, केवल औरतें और बच्चे रोते हुए दिखाई दिये । वे सैंतालीस आदमी ढूँढ़ते-ढूँढते थक गये । दुश्मन को भाग निकलते देख कर निराशा से वे लोग वही, उसी क्षण आत्म-हत्या करके के लिये तैयार हुए, पर ओइशी के कहने पर, एक बार और तलाश कर लेने तक ठहर गये । ओइशी कोतसुकी के सोने के कमरे मे गया और बिस्तर पर हाथ रख कर चिल्लाया—"बिस्तर गर्म है, मेरे ख्याल मे दुश्मन पास ही कहीं होगा । जरूर वह मकान मे कही छिपा है ।" यह सुन कर सब के सब उत्तेजित होकर तलाश करने लगे । ढूँढते-ढूँढ़ते एक ने देखा, दालान की दीवार की एक तस्वीर के भीतर एक गोलाकार गढ़ा है, उसने उसके अन्दर भाला डाला पर अन्त नहीं मिला । यह देख कर जिउतारो नामक

एक साथी के साथ वह भीतर घुसा । अन्दर जाकर उसने देखा—ऑगन है—ऑगन मे कई छोटी-छोटी कोठरियाँ हैं । उन कोठरियों की ओर निगाह रख कर वह धीरे-धीरे भाला लिये बढा—पर पॉच-छ. क़दम जाते न जाते, दो सिपाही तलवार लिये उन कोठरियो मे से निकल पड़े । वह दोनों से लड़ता रहा, तब तक जिउतारो भी उसकी सहायता के लिये आ पहुँचा । कुछ क्षणो तक युद्ध के बाद दोनो सिपाही घायल होकर गिर पड़े । जिउतारो एक अँधेरी कोठरी के दरवाजे के पास जाकर कमरे के अन्दर भाला घुमाने लगा—अगर कोई छिपा हो तो चोट लगते ही चिल्ला पडेगा । भाला घुमाते-घुमाते उसने देखा सफेद-सा कुछ हिला । उसने उस पर वार किया । एक चीख के साथ कोई उस पर कूद पड़ा । जिउतारो के हाथ से भाला गिर पड़ा । दोनो मे कुश्ती होने लगी और अन्त मे उस आहत आदमी को जिउतारो कोठरी के बाहर खीच लाया । चन्द्रमा के प्रकाश मे उन दोनो ने देखा कि वह साठ साल का एक बूढा है और अमीरों की-सी मखमल की पोशाक पहने है । उन्हे शक हुआ कि यही कोतसुकी होगा । उन लोगो ने नाम पूछा, तो बूढे ने जवाब नहीं दिया । तब जिउतारो ने जोर से सीटी का आवाज की और सब साथी वहीं आकर जमा हुये । ओइशी के हाथ मे एक लालटेन थी । बूढे के चेहरे के पास लालटेन लाकर उसने गौर से देखा—वह कोतसुकी ही था, उसके कोतसुकी होने का और एक सबूत यह था कि उसके माथे पर एक चोट का निशान था, जहाँ ताकुमी की तलवार से घाव हो गया था । जब यह निश्चित हो गया कि, वह कोतसुकी है, तब ओइशी ने घुटने टेक कर बैठ कर बहुत अदब से कहा :—

"हुजूर, हम लोग राजा ताक़ुमी के गुलाम हें । पारसाल मेरे स्वामी से आपका झगड़ा हुआ था और उसी कारण उनको 'हारा-कारी' करनी पडी और उनका खानदान तबाह हो गया । आज रात को हम लोग उनका बदला लेने आये हैं, क्योंकि गुलाम का यही कर्त्तव्य है ।

हुजूर को समझना चाहिए कि हम लोग कुछ भी अन्याय नहीं कर रहे हैं। और अब हुजूर से प्रार्थना है कि आप 'हारा-कारी' करें। आपकी मृत्यु के बाद, आपका सिर लेकर मैं अपने स्वामी राजा ताकुमी की समाधि पर चढाऊँगा।"

कोतसुकी के उच्च पद और बुढापे का ख्याल कर, ओइशी ने कई बार उससे 'हारा-कारी' करने के लिये कहा। पर वह निर्वाक काँपते हुये बैठा रहा। ओइशी ने जब देखा कि उससे वीरोचित मृत्यु स्वीकार करने के लिये कहना व्यर्थ है, तब उसने तलवार के आघात से उसका सिर अलग कर दिया। यह वही तलवार थी जिससे राजा ताकुमी ने 'हारा-कारी' की थी। तब वे सैंतालीस, अपनी सफलता पर खुश होकर एक बाल्टी में कोतसुकी का सिर रख कर जाने के लिये तैयार हुये; जाने के पहले वे भवन की सब बत्तियाँ और आग बुझा गये जिससे किसी तरह आग लग कर पड़ोसियों को नुकसान न पहुँचे।

तकनवा गाँव की ओर, जहाँ सेङ्गाकुजी का मन्दिर है, जाते-जाते दिन निकल आया। लोग अपने-अपने मकानों से निकल कर खून से लथ-पथ इन सैंतालीसो को देखने लगे, सब प्रशंसा करने लगे—उनकी वीरता और सच्चाई पर चकित होने लगे।

ओइशी और उसके साथी प्रतिक्षण प्रतीक्षा कर रहे थे कि कोतसुकी का ससुर अपनी सेना के साथ आकर दामाद का सिर छीन कर ले जायगा। इसके लिये वे हाथ मे तलवार लिये मर मिटने को तैयार थे। ख़ैर, वे सब तकनवा गाँव मे खैरियत से पहुँचे, क्योंकि राजा ताकुमी के एक मित्र, मत्सुदीरा नामक एक प्रतापी राजा ने, जब उन लोगो की रात्रि की घटना सुनी, तो वे बहुत खुश हुये और अपनी सेना द्वारा रक्षा के लिये तैयार हो गये थे।

राजा मत्सुदीरा के प्रासाद के सामने से जब ओइशी और उसके साथी जा रहे थे, तब सुबह के सात बजे थे। राजा मत्सुदीरा को यह

मालूम होने पर वे अपने एक सभासद से बोले—"राजा ताकुमी के अनुचर लोग, अपने स्वामी के दुश्मन को मार कर, हमारे भवन के सामने से जा रहे हैं। उनकी प्रभु-भक्ति प्रशंसा के योग्य है। रात्रि की मेहनत के बाद वह लोग थके और भूखे-प्यासे होंगे। तुम जाकर उन लोगों का निमन्त्रण कर रोटी और एक-एक ग्लास शराब पिलाओ।"

आज्ञा पाकर, सभासद ने सड़क पर आकर ओइशी से कहा—"मैं राजा मत्सुदीरा का एक सभासद हूँ। मेरे मालिक आप लोगों से प्रार्थना कर रहे हैं कि आप लोग थके और भूखे होंगे, आप लोग बराय-मेहरबानी भवन में आकर कुछ नाश्ता कर लें। मेरे मालिक ने आप लोगों को यही कहने के लिये भेजा है।"

"धन्यवाद, महाशय," ओइशी ने कहा—"आपके मालिक की यह बड़ी कृपा है कि हम लोगों को निमन्त्रण दे रहे हैं। हम लोगों को यह सहर्ष स्वीकार है।"

ओइशी और उसके साथियों ने जाकर रोटी खाई और शराब पी। राजा के अनुचर वर्ग ने जमा होकर उन लोगों की तारीफ की।

भोजन के बाद ओइशी ने प्रधान सभासद से कहा—"इस आतिथ्य के लिये हम लोग बहुत कृतज्ञ हैं। यहाँ से सेङ्गकुजी का मन्दिर दूर है—जल्दी जाना है—इसलिये आप लोगों से विदा ले रहा हूँ।"

वे लोग तेजी से चल कर दोपहर तक सेंगाकुजी के मन्दिर में पहुँच गये। मन्दिर के प्रधान पुरोहित आकर उन लोगों को ताकुमी की समाधि पर ले गये।

जब वे स्वामी की समाधि के पास आये तो कुएँ के जल से कोतसुकी का सिर धोकर समाधि पर चढ़ा दिया।

समाधि पर सिर रख कर ओइशी ने मन्दिर के अन्य पुरोहितों को बुला कर प्रार्थना-पाठ करने के लिये कहा। पुरोहित लोग प्रार्थना-पाठ

करने लगे। ओइशी ने पहले धूप बत्ती जलाई, फिर उसके लड़के चिकारा ने और अन्त मे बाकी पैंतालीस ने।

फिर ओइशी ने प्रधान पुरोहित को, अपने पास जितना रुपया था देकर कहा—"हम सैंतालीस लोग जब 'हारा-कारी' कर लें तो अच्छी तरह से हम लोगो की समाधि बना दीजियेगा। आपकी दया पर मेरा विश्वास है। आपको जो कुछ दिया यह बहुत ही तुच्छ है, इतना ही मेरे पास था। अपनी आत्मा की शान्ति के लिये हम आप पर निर्भर हैं। कृपा रखियेगा।"

प्रधान पुरोहित ने आँखों मे आँसू भर कर प्रतिज्ञा की कि उन लोगो की इच्छायें पूरी होंगी।

तब उन सैंतालीसो ने सरकारी अदालत मे जाकर, अपने को समर्पण कर, हत्या करने का दोष स्वीकार किया।

फैसला हो गया। उन लोगों को 'हारा-कारी' करने की सजा दी गई।

वे लोग पहले से मृत्यु के लिये तैयार थे, इसलिये बड़ी वीरता के साथ 'हारा-कारी' यानी आत्म-हत्या की। उनकी मृत्यु-देहों को सेङ्गा-कुजी की मन्दिर मे ले जाकर राजा तासुकी की समाधि के सामने समाधि दी गई। और लोगों ने इन सैंतालीस की कहानी सुनी, तो दूर-दूर से हजारो आदमी समाधियो पर मत्था टेकने के लिये आने लगे।

समाधि पर मत्था टेकने के लिये आने वालों मे सतसुमा भी था—उसने ओइशी की समाधि के सामने साष्टाङ्ग प्रणाम कर कहा—"जब मैंने तुम्हे कियोतो नगर की सड़क पर नशे मे बेहोश पड़ा देखा था, उस समय मुझे मालूम नहीं था कि तुम अपने मालिक के शत्रु से बदला लेने के लिये षड्यन्त्र रचना कर रहे थे, तुम्हे नमकहराम सोच कर मैंने तुम्हारे मुँह पर थूका था और तुम्हे लात मारी थी। अब मैं तुम से क्षमा माँगने के लिये आया हूँ और उस अनुचित व्यवहार के लिये सजा ले रहा हूँ।" यह कह कर सतसुमा अपनी तलवार निकाल कर 'हारा-कारी' करके मर गया। मन्दिर के प्रधान पुरोहित ने उस पर तरस खाकर उन सैंतालीस की समाधि के साथ उसकी समाधि बना दी। सैंतालीस की समाधि के साथ उसकी भी समाधि आज तक मौजूद है!

जापान

बदला

लेखक—अज्ञात

उसका नाम काजी था। वह एक नट था,—नाचना ही उसका पेशा था। रजवाड़ों की महफिलो के सिवा वह और कही नही नाचता था; वह इतना सुन्दर नाचता था कि लोग देखने के लिये मानो पागल रहते।

पौराणिक कहानियो के आधार पर वह अपनी नृत्य-रचना करता था। इस कारण उसे देव और देवी की भाँति अपने को सजाना पडता था—उनकी आकृति के चेहरे (mask) लगाने पड़ते थे।

उसी समय जेङ्गोरा नाम का एक आदमी रहता था। उसका धधा चेहरा बनाने का था। उसकी तरह सुन्दर चेहरा जापान भर मे कोई नहीं बना सकता था।

काजी को जब किसी चेहरे की आवश्यकता होती, उसी कारीगरी से बनवा लेता था। जोङ्गोरा का बनाया हुआ चेहरा लगा कर जब वह नाचने के लिये महफिल में आकर खडा होता, तब लोग चकित होकर उसकी ओर देखते रह जाते। लोगो को मालूम होता मानो पौराणिक काल के मरे-हुए-आदमी सामने आकर खड़े हो गए हैं। जेङ्गोरा के बनाये हुए चेहरों के कारण उनका साज और भी सुन्दर लगता, मानों नाच में जीवन आ जाता।

जेङ्गोरा था तो बहुत अच्छा कारीगर, मगर उसमे एक दोष था—वह बहुत शराबी था। शराब मिलने पर वह और कुछ नहीं चाहता था—काम-धधा सब छोड़-छाड मौज लडाता था।

उसके नशे मे होने के समय अगर कोई काम कराने के लिये आता तो वह उसे भगा देता—मगर काजी पर उसका कुछ प्रेम था। काजी का नाच उसने देखा था। वह मन ही मन उसकी तारीफ करता था—"हाँ काजी एक गुणी आदमी है!—एक कारीगर है!" इसलिये काजी अगर उसे कोई चेहरा बनाने के लिये देता, तो वह किसी तरह शराब की बोतल त्याग कर काम मे लग जाता। काजी के लिये चेहरा बनाते समय उसे शराब के नशे का-सा आनन्द आता था।

मगर एक बार एक त्योहार के अवसर पर बहुत गड़बड़ी हो गई,—जेगोरा किसी तरह शराब नही छोड़ना चाहता था—दिन रात पी रहा था। त्योहार के दिन, राज-भवन मे एक नये ढग का नाच नाचने के इरादे से काजी ने एक चेहरा बनवाने को दिया था, मगर उस बार जेगोरा को जाने क्या हो गया, उसने काम हाथ मे भी नहीं लिया।

दिन पर दिन बीतते जा रहे थे, त्योहार के दिन करीब आने लगे, फिर भी जेगोरा लापरवाही करता रहा। उसकी पत्नी और लड़का उसे बार-बार याद दिलाने लगे, मगर वह शराब के नशे मे ज्यो का त्यो मग्न रहा। आखिर जब त्योहार के सिर्फ दो दिन बाकी रहे, तब काजी खुद आकर उसकी मिन्नत करने लगा।

काजी को देखकर जेगोरा काम करने बैठ गया, मगर उस समय भी उसका हाथ नशे से काँप रहा था। वह अच्छी तरह से औजार नहीं पकड़ सकता था।

खैर, दो दिन के अन्दर उसने किसी तरह चेहरा बना डाला।

त्योहार के दिन शाम को जेगोरा अपने लड़के के साथ चेहरा हाथ मे लिये काजी के मकान मे गया। काजी ने झट उसके हाथ से चेहरा लेकर अपने मुँह पर पहना।

मगर चेहरा आकार में बड़ा बन गया था—इतना बड़ा कि मुँह पर रुकता भी नहीं था, झट नीचे खिसक पडता था।

और समय नहीं था;—उसी रात को वह नाच नाचना था, बगैर चेहरे के नाच नहीं हो सकता था। जेंगोरा के कारण सब गडबड़ हो गया!

कांजी बहुत नाराज हो गया, थर-थर कॉपते हुये उसने एक बार जेंगोरा की ओर देखा, फिर कस कर उसकी छाती मे एक लात मारी। जेंगोरा बेहोश होकर जमीन पर गिर पडा।

जेंगोरा का लड़का वहीं खड़ा था। पिता की यह बेइज्जती देख कर उसका सारा शरीर जलने लगा। मगर वह कर ही क्या सकता था? काजी का देश में बहुत बोल-बाला था। वह चुपचाप रोते हुये बेहोश पिता को कधे पर लाद कर घर चला आया।

बहुत शराब पीने से जेंगोरा का स्वास्थ्य बिल्कुल खराब हो गया था;—उसे फिर होश नहीं आया। जब लड़का उसे घर लेकर पहुँचा तब वह मर चुका था।

छः साल बीत गये। उस समय लोग जेंगोरा का नाम तक भूल चुके थे। अब एक नये कारीगर का नाम मशहूर हो गया। लोग कहते थे—वह बहुत ही सुन्दर चेहरा बनाता है।

बहुत दिनों से काजी एक अच्छे कारीगर की खोज कर रहा था। छः साल पहले उस त्योहार के दिन ठीक तरह से चेहरा न बनने पर उसका वह नाच आज तक नहीं नाचा गया था; इसका उसे बहुत रंज था। इस नये कारीगर की खबर पाकर वह बहुत ख़ुश हो गया। उसने उसी दिन उसी कारीगर को बुला भेजा।

कारीगर के आने पर काजी ने बहुत अच्छी तरह से उसे समझा

दिया कि किस तरह का चेहरा बनाना है। कारीगर ने बहुत ध्यान से सुना और सावधानी के साथ नाप लेकर चला गया।

फिर जब चेहरा बन कर आया, तो काजी चकित हो गया। यह मानो बिल्कुल जेगोरा का बनाया हुआ था। उसने कभी आशा नहीं की थी कि इतना अच्छा चेहरा बनेगा।

वह चेहरा पहन कर काजी नाचने के लिये गया। इतना सुन्दर नाच उसने बहुत दिनो से नही नाचा था। काजी ख़ुशी के साथ बहुत देर तक नाचता रहा, लोग हर्ष-ध्वनि करने लगे—तारीफ की बौछार होने लगी।

फिर उस रात को, जब वह थक कर घर लौटा और मुँह पर से चेहरा उतारने लगा तब चेहरा नही खुला। खींचा-तानी करते-करते उसका मुँह जितना ही फूलने लगा, लकडी का चेहरा उतना ही अधिक कस कर बैठने लगा। वह बहुत घबराया, पागल की भाँति छट-पटाने लगा।

काजी ने हुक्म दिया—"कारीगर को बुला लाओ—वह आकर चेहरा उतार दे।"

कारीगर आकर, सलाम कर, खडा हो गया।

काजी ने हाँफते हुये कहा—"यह चेहरा तो खुलता ही नहीं! जल्दी खोल दो, दम निकला जा रहा है!"

कारीगर ने शान्त स्वर से कहा—"क्या करूँ सरकार! मेरे बाप का बनाया हुआ चेहरा जरा ढीला होगया था, इस कसूर पर आपने उन्हे मार डाला था,—इसीलिये मैं सावधान हो गया हूँ—और ऐसा चेहरा बनाया है जो अपके मुँह पर से कभी न खुले! इतने दिनों से मैं इस इल्म को इसी लिये सीख रहा था।"

यह कह कर कारीगर जोर से हँस पड़ा।

वह भयानक हँसी सुनते-सुनते काजी बेहोश होकर जमीन पर लुढ़क पडा।

जापान

गुमनाम-चिट्ठी

लेखक— अज्ञात

जापानी युवक-युवती मे जब प्रेम हो जाता है, तब वे एक दूसरे से विवाह की इच्छा प्रकट करते हैं—छिपे-छिपे उपहार भेज कर; कोई अगूठी देता है, और कोई एक कामदार छोटा जापानी बॉक्स। उस उपहार के बारे में और कोई नहीं जान पाता, किसी को पता लगने नहीं दिया जाता—और पता चल जाने पर यह बहुत ही लज्जा की बात समझी जाती है।

बहुत दिनों की बात है। टोकियो शहर में 'सामुराई' खानदान के एक सज्जन रहते थे। उनके केवल एक पुत्र था। उसे किताबों के सिवा और कोई शौक़ नहीं था और न किसी बात से मतलब था। दिन-रात किताबों मे ही मग्न रहता था।

उसके पिता को सहसा एक दिन एक गुमनाम पत्र मिला जिसमें लिखा था—"तुम्हारा पुत्र, तुम्हारे फलाँ पड़ोसी की पुत्री के प्रेम में पागल है। मामला बहुत गड़बड़ है। यह दोनों, प्रेमी और प्रेमिका, घर से छिपे-छिपे भागने का विचार कर चुके हैं। सावधान रहना, कहीं तुम्हारे उच्च कुल में कलंक का धब्बा न लगे।"

पत्र पढ़ कर पिता चकित हो गये। उनका लड़का प्रेम में पागल है? इससे अधिक आश्चर्य की बात और क्या हो सकती है? जिसने किताबों से मुँह उठा कर शायद ही किसी लड़की को देखा होगा, वह कैसे प्रेम मे पागल हो गया?

उन्होने सोचा, जब बात ऐसी है तब इस पर ध्यान देना उचित है। वे पत्नी से सलाह पूछने लगे।

सब बाते सुन कर पत्नी बोली—"इसमे आश्चर्य की बात ही क्या है! छिपे-छिपे ही प्रेम हुआ करता है। क्या तुम अपनी बात भूल गये? तुम्हारे प्रेम की बात हम लोगो की शादी के पहले क्या किसी को मालूम थी?"

सिर खुजलाते हुये पति बोले—"हाँ, बात तो सही है।"

तब पत्नी बोली—"हमें लड़के की शादी कभी न कभी करना ही है। जब बात ऐसी है, तो लड़की वाले से बात-चीत पक्की कर लो—"

लड़के के पिता लड़की वाले के यहाँ गये। सब बाते सुन कर लड़की के पिता भी चकित हुये। उनकी कन्या की तरह शर्मीली लड़की जापान मे शायद ही और कोई हो। वही लड़की प्रेम से पागल है, इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। खैर, जब सयोग से एक वर मिल गया है, तब इसे हाथ से नही निकल जाने देना चाहिये। वे विवाह के लिये सहमत हो गये।

यह प्रेम की बात सुन कर लड़की की माँ भी विस्मित होकर बोली—"भीतर ही भीतर तुम्हारी लड़की प्रेम कर रही है, यह मुझे कैसे मालूम हो सकता था? खैर, ठीक ही है। वर का घराना अच्छा है—लड़की सुख से रहेगी।"

छिपे-छिपे शादी का इन्तजाम होने लगा। सहसा एक दिन किताबो से आँखे उठाने पर लड़के ने सुना—एक पड़ोसी की लड़की से गुप्त प्रेम होने के बारे मे लोग जहाँ-तहाँ चर्चा कर रहे हैं। वह चकित होकर बोला—"कौन लड़की? वह कौन है?"

उसके मित्रवर्ग, उसे उस लड़की के पास ले जाकर, मुस्करा कर बोले—"इन्हे पहचान सकते हो?"

लड़के ने कहा—"नही, मैंने तो इन्हे कभी नही देखा!" फिर

जरा ध्यान देकर लड़की को देखने लगा। देखते-देखते उसे मालूम हुआ, मानो किताबो के अक्षरो से भी अधिक आकर्षण लडकी के सारे शरीर से उसे निमन्त्रण दे रहा है।

लड़की कभी किसी की ओर आँखे उठा कर नही देखती, मगर आज उसे बहुत कौतूहल हुआ, जिसके साथ उसके गुप्त प्रेम होने की बात है—वह कौन है? उसने जरा मुँह उठा कर कनखियों से लड़के की ओर देखा, फिर लज्जा से सिर नीचा कर लिया।

लड़का सोच रहा था, अफवाह अगर सच होती तो बुरा नही था। लड़की मन ही मन क्या सोच रही थी, यह वही जानती थी। मित्रवर्ग जोर देने लगे—"अब इकरार तो कर लो!"

लडका बहुत शर्माया, उसने कहा—"जो सच नही, उसे मैं कैसे इकरार करूँ? सच कह रहा हूँ, मैंने इनको कभी नहीं देखा है!"

उसकी इस बात पर किसी ने विश्वास नहीं किया। दिन पर दिन उन लोगो के नाम पर कलक बढता ही चला। इतने में उस लडकी से उसके विवाह का निश्चित होना प्रकट हुआ। यह सुन कर लड़का खुश हुआ। मगर जब लोग कहते, कि यह बात तो पहले ही से मालूम थी, तब लडके को बुरा लगने लगा, उसने सोचा, अगर इस विवाह के लिये राजी हो जाऊँ, तो लोगों को दृढ विश्वास हो जायेगा कि अवश्य गुप्त प्रेम था। उसने कह दिया—"मैं शादी नहीं करूँगा।"

यह सुन कर सब लोग पहिले तो चकित हुये, फिर आपस मे कहने लगे—"अवश्य इसमे कोई भेद है।" वे लड़के से पूछने लगे—"क्यो जी, शादी क्यो नहीं करोगे?"

उसने कहा—"जिससे मेरी जान-पहचान नही उससे क्यों शादी करूँ?"

वे मुस्करा कर बोले—"अच्छा!"

लडका सोचने लगा—यह एक अच्छा झमेला पीछे पड़ा हुआ

है। कुछ देर के लिये लोग चैन से भी नहीं बैठने देते। उसका चित्त इन झझटों से दूर, एकान्त मे जाने के लिये छट-पटाता रहता।

जब मामला खूब गड़बड़ हो चुका था, तब सहसा एक दिन यह खबर मिली कि वह गुमनाम-पत्र बिल्कुल मजाक था—उसकी कोई बात सच नही थी।

यह सुनकर लड़का बहुत खुश हुआ, मगर इस परिहास की बात पर भी लोग विश्वास करने को तैयार नही हुये। वे कहने लगे—"यह भी कभी सम्भव है?"

तब लड़के ने मन ही मन जाने क्या सोचकर सब को बुलाकर कहा—"अगर आप लोग किसी तरह विश्वास करना न चाहे, तो मैं सबके सामने खडे होकर कहता हूॅ, मैं शादी नही करूॅगा—यह सम्बन्ध तोड़ दिया जाय।"

अन्त मे सम्बन्ध तोड़ दिया गया और सब जगह खबर फैल गई कि शादी नही होगी। तब लोगो का सन्देह मिटा। कुछ ही दिनों मे यह बाते होना बन्द हो गईं—लोग भूल गये।

लड़के ने देखा—बस यही मौका है, अब किसी को पता नहीं लगेगा,—वह अपनी हाथ की अॅगूठी गुमनाम-पत्र वाली लड़की के पास भेजकर, कम्पित हृदय से प्रतीक्षा करने लगा। कुछ देर के बाद मखमल मे लिपटी हुई एक सोने की डिबिया मे लड़की के हाथ की अॅगूठी उसके पास आ गई।

पुजारिन

लेखक—लेफ़केडिश्रो हर्न

बहुत समय हुआ, एक युवक जापानी चित्रकार किओटो नगर पैदल से योदो जा रहा था। पथ बहुत ही सुनसान था, सम्पूर्ण रास्ता पर्वतीय प्रान्त से चलना पडता था। उस समय अधिकाश सड़कें इतने खतरों से भरी रहती थीं कि जापान मे एक कहावत चल पड़ी थी कि—"लाड़ले पुत्र को शिक्षित करना चाहो तो उसे भ्रमण करने भेजो।" लेकिन उस समय सडके चाहे जैसी रही हों, देश की शक्ल इस समय की सी ही थी। इस समय की तरह बड़े-बडे 'सिडार', चीड़ और बाँस के जगल थे, पुआल के छप्पर वाले छोटे-छोटे झोपडे थे, चावल के खेतों मे इस समय की भाँति पुआल की टोपी पहिनकर किसान कीचड मे खडे-खडे काम करते थे। सडको के किनारे जगलों मे, इस समय की तरह बडी-बड़ी बुद्ध मूर्त्तियों की प्रशान्त मुस्कान दीखती थी और नदी के किनारे, नगे ग्रामीण बच्चे इसी भाँति नाचते थे।

पर यह चित्रकार लाडला बालक नहीं था। उसने इतनी कम उम्र मे ही अनेक देशों का भ्रमण किया था और वह पैदल दूर-दूर तक चलने के सब कष्टों का अच्छी तरह अभ्यस्त था। लेकिन इस बार सफर मे निकल कर, वह एक शाम को एक ऐसी जगह मे आ पहुँचा जहाँ रात को आश्रय या भोजन मिलने की कोई सम्भावना नही दीख पड़ी। यहाँ घना जगल था, कहीं भी मनुष्यों के रहने का चिन्ह नहीं था। युवक समझ गया कि रास्ते को छोटा करने की चेष्टा करके वह गलत रास्ते मे आ पड़ा है।

वह अँधेरी रात्रि थी, चारों ओर के चीड़ के जंगल की छाया ने अँधेरे को और भी घना कर दिया था। जगल के भीतर हवा की मर्मर ध्वनि के सिवाय और कोई शब्द सुनाई नहीं दे रहा था। चित्रकार क्लान्त देह से चलने लगा, इस आशा से कि शायद कोई नदी दीख पडे। नदी के किनारे चलने पर वह किसी गाँव मे पहुँच सकेगा। रास्ते में उसे एक सँकरी नदी मिली, पर कुछ दूर जाकर यह दीखा कि वह झरने मे परिणत होकर पहाड़ के नीचे गिर रही है। युवक को मजबूरन लौटना पड़ा। चारो ओर अच्छी तरह देखने के लिये वह पहाड़ी की चोटी पर चढ गया—शायद वहाँ से मनुष्य के रहने का कोई निशान दीख पडे। पर चारो ओर ऊँचे-ऊँचे पर्वतों के सिवाय और कुछ भी नही देख पाया।

जब उसने निश्चय कर लिया कि वह रात उसे खुले आसमान के नीचे बितानी पड़ेगी, तब सहसा पहाड़ी के एक किनारे, नीचे की ओर एक क्षीण प्रकाश उसकी दृष्टि में आया। शायद किसी मनुष्य की कुटिया से वह प्रकाश आ रहा है, यह सोच कर युवक ने शीघ्रता से उस ओर उतरना शुरू किया और कुछ दूर जाने के पश्चात् एक छोटे कुटीर के सामने जाकर खड़ा हुआ। कुटीर का द्वार बन्द था, पर द्वार की एक दरार मे से वह प्रकाश आकर बाहर फैल रहा था। युवक ने आहिस्ते-आहिस्ते द्वार खटखटाया।

प्रथम खटखटाहट का कोई उत्तर नही आया। युवक मजबूर होकर पुकारने लगा और द्वार खटखटाने लगा। अन्त मे भीतर से किसी स्त्री के स्वर ने प्रश्न किया कि आगन्तुक को क्या चाहिये। वह स्वर बहुत ही मीठा था और युवक को यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि वह स्त्री राजधानी की शुद्ध भाषा में बोल रही है। उसने उत्तर मे कहा कि वह एक विद्यार्थी है, योदो जाने का रास्ता भूल गया है। वह रात में जरा से भोजन और सोने की जगह की प्रार्थना कर

रहा है। और अगर यहाँ यह पाना एकदम असम्भव हो, तो निकट किसी गाँव का रास्ता बताया जाय। उसके पास रुपये हैं, वह पथ-प्रदर्शक को मेहनताना भी दे सकता है।

भीतर से उस स्त्री ने उससे और भी कई सवाल पूछे। उस स्त्री को आश्चर्य हो रहा था कि कैसे कोई पथिक ऐसी जगह में आ सकता है। शायद युवक का सरल उत्तर सुन कर मकान-मालकिन का सन्देह मिटा, उसने कहा, "आप ठहरिये, मैं द्वार खोल देती हूँ—इस भयानक रात्रि मे आपके लिये कोई गाँव ढूँढ़ निकालना असम्भव है।"

कुछ क्षणों के बाद ही द्वार खुल गया और एक कागज की लालटेन हाथ मे लिये, एक स्त्री द्वार के सामने आ खड़ी हुई। उसने लालटेन को इस प्रकार ऊँचा कर के पकड़ा था कि जिससे सब प्रकाश युवक के चेहरे पर गिरे और अपना चेहरा अँधेरे मे रह जाय। चुप-चाप कुछ क्षणो तक युवक की ओर देखकर स्त्री ने कहा, "आप ठहरिये, मैं जल लेकर अभी आ रही हूँ।" और फ़ौरन भीतर से जल और तौलिया लाकर उसने युवक को पैरों की धूल धोने के लिये अनुरोध किया। युवक ने अपनी जूतियाँ उतार कर पैर धो लिये और फिर मकान-मालकिन के साथ कुटीर मे प्रवेश किया। एक ही कमरा था, केवल पिछवाड़े की तरफ एक छोटा-सा रसोई घर था। युवती ने उसे बैठने के लिये आसन बिछा दिया और हाथ-पैर गरम करने के लिये अँगीठी ले आई।

अब चित्रकार ने ध्यान से मकान-मालकिन की ओर देखा। उसका आश्चर्यजनक सौन्दर्य देखकर युवक एकदम चकित हो गया। युवती उम्र मे उससे दो-चार साल बड़ी हो सकती थी, पर वह उस समय भी पूर्णयौवना थी। उसकी ओर एक बार देखते ही मालूम हो जाता था कि वह किसान कन्या नहीं थी। युवती ने बहुतही मधुर स्वर से कहा, "मैं यहाँ अकेली रहती हूँ और यहाँ किसी को भी

निमन्त्रित नहीं करती हूँ। पर इस अँधेरी रात्रि मे पथ चलने की चेष्टा करने पर आप खतरे मे पड़ जायँगे। कुछ दूर पर कुछेक किसानो के घर हैं, पर किसी के न दिखाने पर आप कभी भी वहाँ नही पहुँच सकेंगे। यहीं सुबह तक रहिये। आपको सोने के लिये बिस्तर दे सकूँगी और कुछ भोजन भी दूँगी, क्योंकि आपको बहुत भूख लगी होगी। मेरे पास चावल और थोड़ी-सी सब्जी के सिवाय और कुछ भी नहीं है—आप बुरा न मानिये।"

उस समय युवक भूख से बेचैन था, जो भी मिल जाय, उसी से उसे पूर्ण संतोष था। युवती ने रसोई-घर मे जाकर चूल्हा सुलगाया और थोड़े समय मे ही चावल और शाक बना कर ले आई और बहुत यत्न से परोसा। युवक जब तक भोजन करता रहा, तब तक वह करीबन चुप ही बैठा रही। जब युवक ने कई बार सवाल करके 'हाँ' या 'नहीं' के सिवाय कोई जवाब नही पाया, तो वह अप्रतिभ होकर चुप रह गया।

वह बैठे-बैठे चारों ओर देखने लगा। कमरा बहुतही साफ-सुथरा था, और जिन बरतनों मे उसे भोजन परोसा गया था, वे भी चमक रहे थे। कमरे मे कीमती असबाब कुछ भी नहीं था, पर जो दो-चार चीजे थीं वे बहुत सुन्दर थीं। दीवार मे कपडे और चीजें रखने के लिये जो आलमारियाँ थी, उनके सामने के पर्दे सफेद कागज के थे। पर उन कागजों पर बहुत ही सुन्दरता से फूल, पत्ते, पर्वत, नदी, आकाश और तारो की तस्वीरे अंकित थीं। कमरे के एक कोने में एक नीची वेदी थी, उस पर एक 'व्युत्सुदान' था। उसके लाख के दो छोटे कामदार द्वार खुले हुये थे, भीतर एक स्मृति-चिन्ह दीख रहा था, दोनो किनारों पर फूल की ढेरी रक्खी थी और सामने एक दीप जल रहा था। उस वेदी के ऊपर दीवार पर एक अपूर्व सुन्दर चित्र

लटक रहा था ; वह चित्र दया देवी का था, उनके मस्तक पर चन्द्रकला, मुकुट की भाँति शोभायमान थी।

युवक का भोजन समाप्त होने पर युवती बोली—"मैं आपको सुखद शय्या नहीं दे सकूँगी और मच्छरदानी भी कागज की बनी है, फिर भी इन दोनो को स्वीकार करके आप आराम कीजिये। शय्या मेरी ही है, पर आज रात को मुझे अनेक काम करने हैं, सोने के लिये मुझे समय ही नहीं मिलेगा।"

युवक समझ गया कि यह अपूर्व सुन्दर युवती किसी अज्ञात कारण से इस जगल मे अकेली रहती है। वह अतिथि को अपनी इच्छा से अपनी शय्या दे रही है, रात को काम रहने की बात बहाना ही है। युवक ने गहरा एतराज प्रकट करके कहा कि युवती को इतना स्वार्थ त्याग करने की कोई आवश्यकता नही है, उसके लिये भूमि पर एक चटाई बिछा देने पर वह आराम से सो सकेगा, और दो-चार मच्छरो के काटने पर उसकी कोई हानि नहीं होगी। पर युवती बड़ी बहिन की तरह जिद् करने लगी, युवक को उसकी बात माननी ही पडेगी। वास्तव मे उसे रात मे काम करना है और शीघ्र से शीघ्र वह काम करने के लिए फ़ुरसत चाहती है। युवक को मजबूरन उसका अनुरोध स्वीकार कर लेना पड़ा। केवल एक ही कमरा था। युवती ने पलँग पर बिस्तर बिछा कर, मच्छरदानी टाँग दी और एक लकड़ी का तकिया लगा दिया। फिर एक पतली लकड़ी के तख्तों से बना एक पर्दा लाकर वेदी के सामने रख कर आड कर दी। युवक समझ गया कि युवती अब अकेली रहना चाहती है। इच्छा न रहने पर भी उसे सोने के लिये जाना पड़ा। युवती को वह इतनी तकलीफ देने को बाध्य हो गया है—यह सोच कर उसका चित्त भारी हो गया।

लेकिन चित्त भारी रहने पर भी वह कुछ ही समय मे सो गया, बिस्तर पर उसे इतना आराम मिल रहा था। पर कुछ घंटो के बाद

वह सहसा चौंक कर जाग पड़ा। एक बहुतही अद्भुत शब्द हो रहा था। वह मनुष्य के पैरों का शब्द था, लेकिन चलने-फिरने से जैसा शब्द होता है वैसा नहीं। उत्तेजित होकर, यदि कोई तेजी से कदम फेंकता है, तो जिस प्रकार का शब्द होता है, यह भी उसी प्रकार का था। युवक को शका हुई—शायद कोई चोर आ गया है। वह शका अपने लिये नहीं थी, क्योंकि उसके निकट ऐसा कुछ भी नहीं था जो चोर चोरी कर सकता था। पर दयालु युवती के लिये उसे शका होने लगी। कागज की मच्छरदानी के दोनो तरफ जालीदार खिड़की-सी बनी थी, युवक ने उसके भीतर से देखने की चेष्टा की; पर बीच मे लम्बा लकड़ी का पर्दा रहने से उधर क्या हो रहा था, यह वह देख नहीं पाया। उसने एक बार सोचा कि वह चिल्ला पड़े, पर फिर सोचा कि बात क्या है, यह न जान कर अपनी उपस्थिति प्रकट करने से कोई फायदा नहीं होगा। लगातार एक-सा वह शब्द हो रहा था, मानो क्रमशः और अधिक रहस्यमय होता जाता हो। युवक ने निश्चय किया कि वह युवती की रक्षा करने की चेष्टा करेगा, चाहे इससे उसे जीवन ही देना पड़े। वह कागज की मच्छरदानी उठा कर पलग के नीचे उतर पड़ा। फिर आहिस्ते-आहिस्ते कदम बढ़ा कर लकड़ी के पर्दे की आड़ से देखने लगा। उसने जो दृश्य देखा, उससे वह बेहद चकित हो गया।

उप वेदी के सामने चमकीली मँहगी पोशाक पहिन कर वह युवती अकेली नाच रही थी। उसकी पोशाक मन्दिर की नर्त्तकी की पोशाक थी। युवक ने कभी भी किसी नर्त्तकी को इतनी कीमती पोशाक पहिनते नहीं देखा था। ऐसी सुन्दर पोशाक से सज्जित युवती अलौकिक सौन्दर्य-मयी लग रही थी, किन्तु युवक को उसके नृत्य ने मानो उसके सौन्दर्य की अपेक्षा अधिक विह्वल कर दिया। प्रथम कुछेक क्षण उसके मन में एक भय का भाव जागृत हो उठा। यह युवती कौन है? भूत-प्रेत

तो नहीं है ? पर दया देवी का चित्र, और बुद्ध की पूजा-वेदी के सामने युवती नाच रही थी—इन दोनों बातों ने युवक का सन्देह दूर कर दिया, और ऐसे सन्देह कर डालने के लिये वह बहुत लज्जा का अनुभव करने लगा। युवती नहीं चाहती थी कि उसका नृत्य कोई देख ले—युवक यह समझ गया। वह युवती का अतिथि था, उसे फौरन मच्छरदानी के भीतर लौट जाना चाहिये, पर वह मानो सम्मोहित-सा हो गया था। युवक विस्मय के साथ अनुभव करने लगा कि उसने इससे पहिले ऐसा अपूर्व नृत्य कभी भी नहीं देखा था। वह जितना ही देखने लगा, उतनी ही युवती की नृत्य-लीला उसे मोहित करने लगी। सहसा युवती रुक गई और नर्त्तकी की पोशाक उतारने के लिये मुडते ही युवक को देख कर चौंक उठी।

युवक अपनी त्रुटि के लिये क्षमा माँगने लगा। उसने बताया कि क़दमों के शब्द से उसकी नींद टूट जाने पर वह शकित होकर उठ पड़ा था। वह शंका अपने लिये नहीं, उस एकान्त वनवासी युवती के लिये ही थी। उसने जो दृश्य देखा, उसे कहना भी वह नहीं भूला। उसने कहा—"आप मेरा कौतूहल माफ कीजिये, पर मैं जानना चाहता हूँ कि आप कौन हैं और कैसे आपने यह आश्चर्यजनक नृत्य सीखा है। मैंने राजधानी की सब प्रसिद्ध नर्त्तकियो का नृत्य देखा है, लेकिन उनमे से एक भी आपकी तरह नाच नहीं कर सकती है। आपकी ओर दृष्टि पड़ने के बाद मैं अपनी दृष्टि हटा नहीं सका।"

पहिले युवती बहुतही क्रोधित हो रही थी, पर युवक की बाते सुनते-सुनते क्रमशः उसके चेहरे का भाव परिवर्त्तित हो गया। मुस्करा कर वह युवक के सामने बैठ गई। फिर बोली—"मैं आप पर नाराज नहीं हुई हूँ। पर आपने मेरा नृत्य देख लिया है, इसके लिये मैं दुखित हूँ। मुझे अकेली उस तरह नाचते देख कर आपने शायद मुझे पागल समझ लिया होगा, इसीलिये अब आपको अपना परिचय देना ही पड़ेगा।"

युवती ने अपना किस्सा कहना शुरू किया। युवक को अब स्मरण हुआ कि उसने अपनी किशोरावस्था मे इस युवती का नाम सुना था। तब वह राजधानी की सर्वश्रेष्ठ नर्त्तकी थी, उसके पैरों पर राजा की दौलत लुढकती थी, उसके सौन्दर्य की भी तुलना नही थी। लेकिन सहसा एक दिन सबो की ममता त्याग करके वह जाने कहाँ अदृश्य हो गई, किसी को भी पता नही चला। उसके साथ एक और युवक भी गायब हो गया, वह उसका प्रेमी था। युवक के निकट धन-दौलत कुछ भी नहीं थी, युवती के निकट जो कुछ था, उसी पर निर्भर करके वे पहाड़ पर कुटीर बना कर सुख से रहने लगे। दोनो एक दूसरे के सिवाय कुछ भी नही जानते थे। युवक युवती को तन-मन से प्रेम करता था। उसका नृत्य देखना ही युवक के जीवन का सबसे बड़ा आनन्द था। संध्या होते ही वह अपना कोई प्रिय राग बजाने लगता और युवती उस राग की ताल पर नाचती थी। लेकिन सहसा जाडे के मौसम से अस्वस्थ होकर युवक मर गया, उसकी प्रेमिका की तन-मन की सेवा भी उसकी रक्षा नहीं कर सकी। तब से उसकी स्मृति का अवलम्बन करके उसकी पूजा कर युवती जीवित है। दिन में वह उसके स्मृति-चिन्ह के सामने फूल और दीप की डाली सजाती है, और रात को उसके सामने पहिले की भाँति नाचती है। क्लान्त अतिथि को जगाने की उसे कोई इच्छा नहीं थी। लेकिन बहुत धीरे-धीरे कदम रखने पर भी उसने युवक चित्रकार की नींद भग कर दी है, इसके लिये युवती ने क्षमा माँगी।

इसके पश्चात् युवती चाय बना कर ले आई। युवक ने उसके साथ बैठ कर चाय पी। फिर युवती के अनुरोध से बाध्य होकर वह शय्या पर जाकर लेट गया और कुछ ही देर मे फिर सो गया। सुबह जाग कर उसे भूख लगी। युवती ने उसके लिये भोजन बना कर रक्खा था। भोजन रात की तरह ही अति साधारण था। भूख रहने पर भी युवक को

भर-पेट खाने मे सकोच होने लगा, उसने सोचा शायद युवती ने अपने लिये कुछ भी नही रक्खा है। जाने के समय वह युवती को भोजन की कीमत के रूप मे कुछ रुपये देने लगा। वह बोली—"मैंने आपको जो भोजन दिया है, वह इतना साधारण और सामान्य है कि उसका कोई मूल्य ही नहीं है, और मैंने पैसे की आशा से दिया भी नहीं था, आतिथ्य धर्म की रक्षा करने के लिये ही दिया था। आपको यहाँ जो असुविधाये और कमी हुई हैं, वह भूल कर अगर आप मेरी सेवा का आग्रह ही स्मरण रक्खे तो मैं धन्य होऊँगी।"

युवक ने फिर और एक बार रुपये देने की चेष्टा की, किन्तु बार-बार इस विषय मे जिद्द करने से युवती दुखित हो रही है, यह देख कर वह विरत हो गया, और केवल शब्दों से यथासभव अपनी कृतज्ञता प्रकट करके, उससे विदा लेकर वह चल पड़ा। उसका चित्त मानो यहीं अटक गया था, उसके पैर बढना नही चाहते थे, क्योकि युवती के सौन्दर्य और गुणों ने उसे अत्यधिक मोहित कर दिया था। उसे किस रास्ते से जाना चाहिये, युवती ने यह उसे अच्छी तरह बता दिया, और जब तक वह दीखता रहा तब तक वह अपने द्वार पर खड़ी रही। घटे भर चलने के पश्चात्, युवक एक परिचित सडक पर आ गया। तब सहसा उसे स्मरण हुआ कि युवती को वह अपना नाम नहीं बता आया है। फिर उसने सोचा—"कहने से क्या फायदा होता ? शायद चिरजीवन मैं ऐसा ही गरीब रहूँगा ?"

अनेक वर्ष बीत गये हैं। कितने ही नियम-कानून परिवर्तित हो गये हैं, चित्रकार भी इस समय वृद्ध हो गये हैं, लेकिन वे केवल बूढ़े ही नहीं हुये, उन्हे बहुत यश और सम्मान भी मिला है। उनके आश्चर्यजनक चित्रांकण से मोहित होकर अनेक कला-प्रेमी धनियों ने उन्हे वे मॉगे बहुत-सी धन-सम्पदा दी है। चित्रकार अब एक धनी व्यक्ति हैं; राजधानी के एक सुन्दर भवन मे वे रहते हैं। जापान के

दूर-दूर के प्रान्तों से विभिन्न [illegible] चित्रकार आकर उनसे शिक्षा ले रहे हैं। वे उनके पास रहते हैं, और सब तरह से उनकी सेवा करते हैं। चित्रकार की प्रसिद्धि सर्वत्र फैल गई है।

एक दिन एक वृद्धा उनके भवन के सामने आई और उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। नौकर-चाकरों ने उसकी हीन पोशाक और दीन शक्ल सूरत देख कर उसे एक साधारण भिखारिन समझ लिया और बहुत रूखे भाव से उसके मिलने का कारण पूछा। बुढ़िया ने कहा, "मैं क्यों आई हूँ, यह मैं केवल तुम्हारे मालिक से कह सकती हूँ।" नौकरो ने सोचा कि यह बूढी पागल है, इसलिये 'चित्रकार यहाँ नही हैं, कब लौटेंगे यह पता नहीं है,' कह कर उसे भगा दिया।

पर वह वृद्धा प्रतिदिन आने लगी। सप्ताह पर सप्ताह बीत गये, फिर भी वह नियमित रूप से आती रही। नौकर-चाकर उसे प्रतिदिन ही एक न एक बहाना कर के भगा देते थे—'आज चित्रकार अस्वस्थ हैं,' या 'आज वे मित्र के घर दावत खाने गये हैं।' फिर भी वृद्धा रोज आती, एक फटे कपड़े मे लिपटी गठरी उसके साथ रहती।

चित्रकार के नौकर-चाकरों ने अन्त मे थक कर विचारा कि मालिक से इसके बारे मे कहना ही ठीक होगा। उन्होंने उनके निकट जाकर कहा, "बाहर द्वार पर एक बुढ़िया प्रतीक्षा कर रही है, देखने मे भिखारिन-सी लगती है। वह करीबन दो महीने से रोज आ रही है और आने का कारण आपके सिवाय और किसी से कहना नहीं चाहती है। हम लोग उसे पगली समझ कर भगा देते हैं। फिर भी वह रोज आती है, यह देख कर उसके विषय मे आपको जताया। कृपा करके बताइये कि हम लोग क्या करें।"

चित्रकार ने विरक्त होकर कहा, "क्यों तुम लोगों ने पहिले यह बात मुझे नहीं बताई?" यह कह कर स्वय बाहर जाकर बहुत ही सम्मान के भाव से उन्होंने वृद्धा का स्वागत किया। वे स्वय कभी बहुत ही गरीब

थे, यह बात वे भूले नहीं थे। उन्होंने वृद्धा से पूछा कि उसे क्या चाहिये।

वृद्धा ने बताया कि उसे भोजन या धन की कोई आवश्यकता नहीं है, चित्रकार के निकट उसकी केवल यह प्रार्थना है कि वे उसके लिये एक चित्र अंकित कर दें। चित्रकार कुछ चकित हो गये। खैर, उन्होंने वृद्धा को घर के भीतर प्रवेश करने के लिये कहा। वह उनके पीछे-पीछे आई और कमरे में घुटने टेक कर बैठकर अपने साथ की गठरी खोलना शुरू किया। खुलने के पश्चात् चित्रकार ने देखा कि भीतर एक पुरानी नर्त्तकी की पोशाक है, वह इस समय फट गई है और बेरंग हो गई है, पर देखते ही लगता है कि कभी वह बहुत ही उज्ज्वल और सुन्दर थी।

जब वृद्धा एक-एक करके पोशाक का अंश निकाल रही थी, तब चित्रकार के चित्त में एक आन्दोलन हो रहा था। वे मानो कुछ स्मरण करने की चेष्टा कर रहे थे, पर कर नहीं पा रहे थे। सहसा उनको सब बातें याद पड़ गईं। उन्होंने मानस-चक्षु के सामने वह पर्वत पर की छोटी-सी कुटिया देखी, जहाँ उन्हें इतना आदर और अभ्यर्थना मिली थी। वह छोटी कोठरी, वह कागज की मच्छरदानी, वह पूजा की वेदी, गहरी रात्रि में युवती का वह एकाकी नृत्य, सब उनके मानस-चक्षु के सामने तैर उठा। उन्होंने चकित होकर वृद्धा के सामने साष्टांग-प्रणाम करके कहा, "मैं जो आपको एक क्षण के लिये भी भूल गया था, मेरा वह अपराध आप क्षमा कीजिये। लेकिन करीबन चालीस साल पहले आप से मेरी भेंट हुई थी, इसीलिये ऐसी भूल संभव हुई है। अब मैंने आपको अच्छी तरह पहिचान लिया है। आपने अपने घर में मुझे बहुत आदर के साथ जगह दी थी, अपनी शय्या तक आपने मेरे लिये छोड़ दी थी। मैंने आपका नृत्य देखा था, और आपका किस्सा भी सुना था। मैं आपका नाम नहीं भूला हूँ।"

उनकी बातो से वृद्धा बहुत ही विस्मित और सकुचित हो उठी। वह पहिले कुछ भी उत्तर नही दे सकी, क्योंकि बुढ़ापे और गरीबी के दुःख में उसकी स्मृति-शक्ति क्षीण हो गई थी। पर चित्रकार के कोमल स्वर से और भी अनेक बातें कहने पर, और उसके पूर्व वासस्थान का वर्णन करने पर, उसे भी विगत दिनो की सब बातें याद आ गई और उसने सजल आँखों से कहा, "परमात्मा मुझे पथ दिखा कर यहाँ लाये हैं। किन्तु जब आपकी पवित्र पद-धूल मेरी कुटिया मे पड़ी थी, तब मैं ऐसी नहीं थी। प्रभु बुद्ध की कृपा से केवल आपने ही मुझे पहि-चाना है।"

फिर वह अपने दुखो के क़िस्से कहने लगी। चित्रकार के चले जाने के बाद ही उसकी परिस्थिति बहुत बुरी हो गई और उसे बाध्य होकर कुटीर को बेच कर राजधानी मे आना पड़ा। राजधानी मे लोग उसका नाम तक भूल गये थे। अपने कुटीर को छोड़ आने मे उसे बहुत ही व्यथा हुई थी, लेकिन बुढ़ापे और दुर्बलता के कारण जब उसने वेदी के सामने नाचने की क्षमता भी खो दी, तब उसके चित्त मे वेदना की सीमा नही रही। प्रियतम की आत्मा से मानो उसका नया विच्छेद हो गया। वह अब नर्त्तकी की पोशाक मे और नृत्य के हाव-भाव मे अपना एक चित्र अंकित कराना चाहती है, वह उसे वेदी के सामने लटका कर रक्खेगी। अपनी यह इच्छा पूर्ण होने के लिये वह लगातार प्रार्थना कर रही है। वह किसी साधारण चित्रकार के निकट न जाकर इसलिये राज-चित्रकार के निकट आई है कि उसका चित्र बहुत सुन्दर बने। वह अपनी नाचने की पोशाक भी साथ मे इसलिये लाई है कि वे उसकी सहायता से चित्र को अंकित कर सकेंगे।

चित्रकार ने उसकी बातें सुन कर मुस्कराते हुये कहा, "आप जैसा चित्र चाहती हैं, मैं बहुत आनन्द के साथ वैसा ही चित्र बना दूँगा। आज मैं व्यस्त हूँ, आज ही मुझे एक काम समाप्त करना है। अगर

आप कल आये, तो मैं अपनी शक्ति के अनुसार यत्न करके वह चित्र अंकित करना शुरू कर दूँगा।"

वृद्धा ने कहा, "पर एक आवश्यकीय बात आपसे कहना चाहिये, लेकिन कहने मे मुझे सकोच हो रहा है। मैं आपकी मेहनत की कोई कीमत नहीं दे सकूँगी, क्योंकि इस नाचने की पोशाक के अलावा मेरे पास कुछ भी नही है। मैं केवल इसे ही आपको दे सकती हूँ। यह इस समय फट गई है और बेरग हो गई है, यद्यपि यह किसी समय बहुत ही कीमती थी। फिर भी आशा करती हूँ, महाशय कृपा करके इसे स्वीकार करेंगे, क्योंकि पुरानी चीज के तौर पर इसकी एक कीमत है। आजकल की नर्त्तकियाँ इस तरह की पोशाक अब नहीं पहिनती हैं।"

चित्रकार ने कहा, "इस विषय मे आपको कुछ भी सोचने की आवश्यकता नही है। मैं अपना कर्ज कुछ अदा कर सकूँगा, इससे ही मैं अत्यन्त सुखी हूँ। मैं कल अवश्य ही आपका चित्र अंकित करना शुरू कर दूँगा।"

वृद्धा ने तीन बार उनके सामने झुक कर प्रणाम करके कहा, "आप मुझे क्षमा कीजिये, मुझे और भी कुछ कहना है। मैं यह नही चाहती कि आप इस समय मुझे जिस तरह देख रहे हैं, उसी तरह मेरा चित्र अंकित करे। आपने मुझे पहिले जैसा देखा था, मैं उसी शक्ल मे अपना चित्र अंकित कराना चाहती हूँ।"

चित्रकार ने कहा "मुझे याद है—आप पहिले अपूर्व सुन्दरी थीं।"

वृद्धा ने धन्यवाद के तौर पर चित्रकार को और एक बार नमस्ते की, फिर कहा, "तो मैंने जिन सब बातो के लिये प्रार्थना की थी, वे सभी पा जाऊँगी। आपको जब मेरी पहिले की शक्ल याद है, तो कृपा करके मेरा चित्र उसी तरह अंकित कीजिये। दया करके आप मेरा यौवन और सौन्दर्य लौटा दीजिये, तभी मैं उस परलोकवासी

आत्मा को आनन्द दे सकूँगी।"उसके लिये ही मैं यह भीख माँग रही हूँ। वे आपके अंकित चित्र देख कर मेरी सब त्रुटियाँ क्षमा करेंगे।"

चित्रकार ने उसे आश्वासन देकर कहा, "आप वेफिक्र रहिये। कल आइये। मैं आपको सुन्दर युवती- नर्त्तकी के रूप मे अंकित कर दूँगा। अपने देश के सर्वश्रेष्ठ धनी का चित्र अंकित करने के समय मैं जितना ध्यान देता हूँ, जितना यत्न करता हूँ, मैं इस चित्र को उससे भी अधिक यत्न और ध्यान से अंकित करूँगा। आप रत्ती भर भी दुविधा न करके कल आइये।"

वृद्धा दूसरे दिन निर्दिष्ट समय पर आई और श्वेत कोमल रेशम पर चित्रकार ने चित्र अंकित करना शुरू किया। उसके छात्रगण वृद्धा की जो मूर्त्ति देख रहे थे, चित्र मे वह मूर्त्ति नहीं खिल उठी। चित्र में जिसकी आकृति बनी, वह पद्मिणी की भाँति उज्ज्वल नयना थी, उसकी देह की बनावट पल्लविनी लता की भाँति थी, सुनहली पोशाक मे वह अप्सरा की तरह मोहिनी थी। चित्रकार की जादू भरी तूलिका के स्पर्श से उसका विलुप्त सौन्दर्य और यौवन फिर लौट आया था। वह चित्र समाप्त होने पर चित्रकार ने उस पर अपना नाम लिखा और मोटे रेशम पर चित्र को चिपका कर ऊपर और नीचे 'सीडार' लकड़ी और हाथी का दाँत लगा दिया। टाँगने के लिये उसमे रेशम की रस्सी लगाना भी वे नही भूले। फिर एक सफेद लकड़ी के बक्स मे रख कर चित्रकार ने वृद्धा को उपहार दिया। उसे कुछ धन देने की भी उनकी इच्छा थी, पर अनेक अनुरोध करने पर भी वृद्धा धन लेने को राजी नहीं हुई। वह सजल आँखों से केवल कहने लगी, "आप विश्वास कीजिये, धन की मुझे कोई आवश्यकता नही है। केवल इस चित्र के लिये ही मैंने अब तक प्रभु के निकट प्रार्थना की है। मेरी प्रार्थना पूरी हुई है, इस जीवन मे और मेरी कोई कामना-वासना नहीं है। इस प्रकार निष्काम-चित्त से यदि मैं मर सकूँ,

तो निर्वाण पाना मेरे लिये सहज होगा। मैं केवल यह सोच कर दुःखित हो रही हूँ कि इस फटी पोशाक के सिवाय आपको देने लायक मेरे पास कुछ भी नहीं है। आप कृपा करके इसे लीजिये। मै प्रभु के निकट प्रार्थना करूँगी कि आपको जीवन के अन्त तक सुखी रक्खे। आपने जो दया की है उसकी तुलना नही है।"

चित्रकार ने मुस्कराकर कहा, "मैं तो प्रशंसा के योग्य कुछ भी नहीं कर रहा हूँ। अगर आपको मेरे इस पोशाक के लेने मे सतोष हो, तो मैं इसे लिये लेता हूँ। इससे पिछले दिनों की अनेक मधुर स्मृतियाँ मेरे चित्त में फिर जागृत होगी। आप कहाँ रहती हैं यह मुझसे कहिये। चित्र दीवार पर लटकाये जाने पर मैं जाकर देख सकूँगा।" चित्रकार के यह बात पूछने के भीतर एक उद्देश्य था। वृद्धा के घर का पता मालूम होने पर वे उसकी सहायता कर सकते थे।

पर वृद्धा ने किसी प्रकार भी अपने घर का पता नहीं बताया। बार-बार क्षमा प्रार्थना करके केवल उसने कहा कि उसका घर बहुत ही दीन और हीन है, चित्रकार की तरह माननीय व्यक्ति का वहाँ जाना ठीक नहीं है। फिर उन्हे भाँति-भाँति से और धन्यवाद देकर वृद्धा चित्र को लेकर चली गई।

चित्रकार ने अपने एक छात्र को बुला कर कहा, "तुम उसका पीछा करो, और वह कहाँ रहती है, यह आकर मुझे बताओ। तुम इस तरह जाओ कि बुढ़िया को पता न लगे।" छात्र फौरन चल पड़ा।

बहुत देर के बाद लौट आकर उसने कहा, "महाशय, मै उस स्त्री का पीछा करते हुये शहर के बाहर नदी के किनारे जा पहुँचा। जहाँ अपराधियों का वध किया जाता है, उसी के निकट एक बहुत ही टूटी-फूटी झोपड़ी मे वह बुढिया रहती है। वह बहुत ही भयानक और गन्दी जगह है—भूत-प्रेतों के रहने योग्य है।"

चित्रकार ने कहा, "चाहे वह जगह कैसी ही हो, तुम कल मुझे

वहाँ ले चलना, क्योंकि मेरे जीवित रहते उस स्त्री को भोजन और वस्त्र का अभाव न रहे, इसकी चिन्ता मुझे करनी है।"

सबको चकित होता देख कर चित्रकार ने युवती नर्त्तकी का किस्सा सुनाया। तब सब समझ गये कि उनका आचरण कुछ भी आश्चर्य-जनक नहीं है।

उसके दूसरे दिन सूर्योदय के कुछ पहिले, चित्रकार और उनके छात्रगण शहर के बाहर नदी के किनारे उस भयावह जगह मे जा पहुँचे। यह समाज से निकाले हुये लोगों के रहने की जगह थी।

कुटीर का द्वार बन्द देखकर, उन्होने कई बार द्वार खटखटाया। कोई उत्तर न आने पर द्वार धक्का देते ही खुल गया। उन्होंने भीतर प्रवेश करने का ही विचार किया। ठीक उसी क्षण चित्रकार के चित्त मे बहुत पहले का कुटीर मे प्रवेश करने का वह दृश्य स्पष्ट हो उठा।

उन्होंने भीतर प्रवेश करके देखा कि वृद्धा की चिथड़ो से ढँकी देह भूमि पर पड़ी है। लकड़ी के एक ताक पर उनका पहिले का देखा हुआ 'व्युत्सुदान' विराजमान है, उसके भीतर वह स्मृति-चिह्न अब भी विद्यमान है। पहिले की भाँति इस समय भी उसके सामने दिया जल रहा है। लेकिन दया देवी की तस्वीर नही है, उसके बदले मे चित्रकार के द्वारा चित्रित नर्त्तकी का चित्र दीवार पर टँगा है। कमरे मे और कोई कहने योग्य चीज नहीं थी, केवल एक सन्यासिनी का कपड़ा, एक लाठी और एक भिक्षा माँगने की कटोरी थी।

चित्रकार ने दो-तीन बार नर्त्तकी का नाम लेकर पुकारा, पर कोई जवाब नहीं मिला।

तब वे समझ गये कि वृद्धा जीवित नहीं है। उसकी ओर ध्यान से देख कर उन्हे लगा कि वृद्धा के चेहरे पर मानो पहिले के सौन्दर्य और यौवन का आभास लौट आया है, चेहरे पर से बुढापे और गरीबी की रेखाये मानो मिट गई हैं। यह उनकी अपेक्षा कही बडे चित्रकार की तूलिका के द्वारा घटित हुआ है, सोच कर उन्होने अपना मस्तक नीचा कर लिया।

जीवित रहने की प्यास

लेखक—यूजेन मरे

रेमो लूल एक विद्वान् का पुत्र था, वह स्वय भी विद्वान् था। वह मार्गारीट नाम की एक बालिका से बचपन से प्रेम करता था। अब मार्गारीट से उसका विवाह निश्चित हो गया था। मार्गारीट भी उससे हृदय से प्रेम करती थी और उसकी विद्वत्ता पर बहुत गर्वित थी। यद्यपि मार्गारीट धर्मशास्त्र का क ख ग भी नही जानती थी, फिर भी रेमो अपनी प्रेमिका के अनुपम सौंदर्य पर गर्व अनुभव करता था। वास्तव मे, वैसी सुन्दर युवती पेरिस की गली-कूँचों मे कदाचित् ही दीखती थी।

दुर्भाग्य से रेमो केवल धर्म-शास्त्र का पण्डित ही नही था, इसके सिवाय वह उप-रसायनविद् तथा जादूगर भी था; और मन्त्रौषधि आदि अलौकिक भैषज्य तत्वों का ज्ञाता भी था। एक शब्द मे, मानो सारे महा-रहस्य की कुञ्जी उसके हाथों मे आ गई थी। वह अब 'तत्व-ज्ञानी के पत्थर' के आविष्कार मे और अमर जीवन पाने के लिये 'अमृत-अर्क' के आविष्कार मे लगा हुआ था। मार्गारीट के चाचा और शिक्षक जेनेअर किसी गिरजे मे पुरोहित थे। वे रेमो के इन सब असाध्य-कार्यों की चेष्टा को निरा पागलपन कह कर उपहास करते थे।

एक दिन प्रात:काल रेमो इन अलौकिक रहस्यों से घटित एक नव प्रकाशित पुस्तक को ऊँचे स्वर से पढ रहा था। मार्गारीट के चाचा उसे सुन कर आग बबूला हो उठे और उन्होंने उस जादूगर के साथ कोई भी सम्बन्ध न रखने का निश्चय किया; और घर लौट कर मार्गारीट से

कहा—"तुम अब रेमो के भरोसे मे न रहो। अब उससे मिलना-जुलना एकदम बन्द कर दो!"

मार्गारीट ने कहा—"केवल एक बार उससे मिलने की आज्ञा चाहती हूँ, चाचा!"

पादरी ने पहले उसकी बात पर कोई ध्यान नही दिया, किन्तु मार्गारीट की गहरी व्यग्रता देख कर अन्त में सम्मति दी। दोनों मे अन्तिम साक्षात् हुआ।

मार्गारीट ने सोचा था कि, रेमो का हृदय तो उसके हाथ में आ चुका है, उसके एक बार कहते ही वह अपना शास्त्र, विज्ञान और जादूगरी सब उसके पैरों पर त्याग देगा। इसीलिये उसने निःसन्देह चित्त से कहा—"प्रियतम, यह शास्त्र और विज्ञान तुम्हे छोड़ना पड़ेगा, नहीं तो हम लोग सुखी नही हो सकेंगे।"

रेमो ने कहा—"ज्ञान के बिना सुख कहाँ है?"

मार्गारीट ने सिर झुका लिया, वह कुछ भी नही समझ सकी। उसने फिर कहा—"सुखी होने के लिए ज्ञान की क्या आवश्यकता है?—ज्ञान लाभ कर के तुम्हे फायदा ही क्या है?"

रेमो बोला—"क्या तुम नहीं जानती हो कि मैंने एक महान् कार्य में हाथ लगाया है?"

सरला किशोरी बोली—"मैं इतना ही जानती हूँ कि मेरे चाचा उन विषयों पर दिलचस्पी नहीं लेते हैं और कुछ भी नही जानते हैं। न जान कर भी वे सुखी हैं,—परमात्मा उन्हे दीर्घ जीवन देंगे।"

रेमो ने कहा—"हुं! दीर्घ जीवन! एक दिन अगर मरना ही है तो दीर्घ जीवन से सुख क्या है?"

"लेकिन मुझे लगता है कि..."

"तुम्हे लगता है, तुम्हे लगता है...मै यम के साथ लड़ूँगा, मृत्यु को दुनिया से दूर भगा दूँगा, जीवन को स्थायी करूँगा, मेरा यही सकल्प है।"

मार्गारीट एकटक उसकी ओर देखती रही। वह उसे पागल समझने मे दुविधा करने लगी, क्योंकि वह उससे प्रेम करती थी।

तब रेमो उत्तेजित हो उठा; विज्ञान के साथ उसका कैसा घोर सग्राम चल रहा हैं, दीप-प्रकाश के सामने उसने कितनी ही अनिद्रित राते बिताई है, प्रकृति का रहस्य उन्मुक्त करने के लिए वह कब से चेष्टा कर रहा है, यह सब वह कहने लग गया।

मार्गारीट बोली—"हम लोगों का विवाह ?"

"इसके लिए क्या हम लोग प्रतीक्षा नही कर सकेंगे ?—हमारे सामने तो अनन्त जीवन पडा हुआ है।"

मार्गारीट ने जरा मुस्करा कर, आकाश की ओर अँगुली दिखाते हुये विश्वास के साथ कहा—"वहीं न ?"

रेमो दृढ विश्वास के साथ बोला—"नहीं, इसी दुनिया मे।"

तब वह सरला किशोरी इतना ही समझी कि उसके जीवन का सुख सदा के लिये समाप्त हो गया है। वह रोने लगी। फिर बोली—"अच्छा तो कहो, अब क्या करना है।"

रेमो ने कहा—"शपथ करो, मेरे सिवाय तुम और किसी की भी नहीं होगी।"

"अच्छा, मैं शपथ कर रही हूॅ।"

"मेरे लिये प्रतीक्षा करती रहोगी ?"

"हॉ।"

"जीवन भर ?"

"हॉ, कम से कम अनेक वर्षों तक।"

"अब मैं एकान्त मे जाकर रहने लगूँगा; एक कमरे मे बन्द रहूँगा—अव शायद मुझे अनेक वर्षों तक भट्टी के सामने बैठे रहना पड़ेगा। पर मैं यह निश्चित कह सकता हूँ कि कभी न कभी मेरी

परीक्षा अवश्य सफल होगी । तब मैं तुम्हारे निकट आऊँगा और तब हम दोनों अनन्त सुखी होंगे ।"

इस बात से मार्गारीट के नेत्रों से झरते आँसुओं मे मानो जरा-सी मुस्कान की छाया नाच उठी ।

"कौन जानता है कि वह दिन कब आयेगा, तब तक कदाचित् हम लोगों के सुख का यौवन चला जायगा ।"

"पागल की तरह क्या कह रही हो ! जीवन स्थायी होने पर, यौवन भी स्थायी होगा ।"

"अच्छा, तो जाओ । मैं तुम्हारी ये 'सब ज्ञान की बातें नहीं समझती । मैं केवल इतना ही समझ रही हूँ कि मेरी तक़दीर फूट गई है । ख़ैर, तुम जल्दी लौट आना । और चाहे शीघ्र जाओ, या देर से; यह तुम जान रखना कि मैं तुम्हारी हूँ—मैं सदा तुम्हारी ही रहूँगी !"

(२)

तब से दोनों मे विच्छेद हो गया—और साक्षात् नहीं हुआ.. कम से कम बहुत अरसे तक । पूर्णरूप से विज्ञान का अनुशीलन करने के लिए, और परीक्षा की आवश्यकीय भाँति-भाँति की चीजें सग्रह करने के लिये रेमो 'ने पृथ्वी के एक ओर से दूसरी ओर का भ्रमण किया । फिर पेरिस मे लौट आकर एक निर्जन गली में एक छोटा-सा मकान किराये पर लेकर रहने लगा; और उसके एक कमरे में परीक्षागार बना कर, ढेर के ढेर पुराने ग्रन्थों, पार्चमेंट कागज और वैज्ञानिक परीक्षा के सामान आदि से दिन और रात घिरे रह कर, वह अक्लान्त-भाव से परीक्षा मे निमग्न रहा । उसकी एक नौकरानी थी, वह अपनी इच्छानुसार उसकी भूख-प्यास का इन्तजाम करती थी । वह केवल बन्द द्वार खटखटा कर प्रतीक्षा करती—वह कमरे में प्रवेश नहीं करती थी । इस प्रकार उसने अनेक-अनेक वर्षों तक निर्जनता में समय बिताया, उसे पता नहीं था कि कितने वर्ष बीत गये—उसे अपनी उम्र का भी कोई पता नहीं था ।

इस अद्भुत जीवन मे, कितना सग्राम, कितना भ्रम और कितनी निराशाये हुई थीं, यह कौन बता सकता है ?

किन्तु एक दिन उसकी मनोकामना पूर्ण हुई—परिश्रम सफल हुआ,—अन्त में उसने अमर-जीवन के उस दुर्लभ 'अमृतअर्क' का आविष्कार किया।

अब वह इतना निःसन्देह हो गया था कि उसने अपनी देह पर उसकी परीक्षा करने मे सकोच नहीं किया। इससे पहिले उसने केवल जानवरो पर ही परीक्षा की थी, पर किसी प्रकार की भी सफलता नहीं मिली थी। वह जभी जीवन का आह्वान करता था, तभी मृत्यु आ पहुँचती थी। किन्तु अब कोई सन्देह नहीं रहा। जीवन की उत्पत्ति कहाँ है और निवृत्ति कहाँ—अब उसने इसका रहस्य खोज निकाला था। अब वह मृत्यु पर विजय पा गया था।

उस आविष्कृत 'अमृत-अर्क' को पीते ही, उसने अपनी देह में नई शक्ति, उत्तेजना और उद्यम का साफ-साफ अनुभव किया, क्योंकि बहुत दिनो से उसका शरीर क्लान्त हो पड़ा था; वह इतना दुर्बल हो पडा था कि रह-रह कर उसका मस्तक कधे पर ढुलक जाता था। किन्तु अब नया गर्म रक्त उसकी नसों मे बहुत तेजी से बहने लगा। वह बहुत उल्लास के साथ चिल्ला उठा—"विज्ञान की जय हो!" पर उल्लास मे वह इतना अधीर हो पडा था, कि वह 'अमृत-अर्क' की शीशी हाथ से फिसल कर भूमि पर गिर कर टूट गई! तब वह उन्मत्त की भाँति भग्नावशिष्ट शोशी की ओर भागा हुआ गया और निकट की जलती भट्टी के नीली दमक मे देखा कि उस टूटी शीशी के एक कोने मे केवल एक बूँद अर्क चमक रहा है।

"एक बूँद—केवल एक बूँद! मार्गारीट, यह बूँद तुम्हारे लिये रही। अब दुनिया मर जाय, इससे कुछ भी क्षति नहीं है। हम दोनों के लिये तो अनन्त जीवन सचित रहा।" यह कर कह घर से बाहर निकल

पड़ा और विक्षिप्त चित्त से सड़के पार करके शहर के भीतर से होकर मार्गारीट के चाचा—उस गिर्जा के वृद्ध पुरोहित के घर तक दौड़ा हुआ गया।

उनकी खोज करने पर वहाँ के लोगों ने कहा कि तीस वर्ष पहले उनकी मृत्यु हो गई है। अच्छा, लेकिन मार्गारीट !.. उसका पता मिलने मे भी बहुत विलम्ब हुआ, क्योकि उस मुहल्ले मे मार्गारीट को कोई भी नही जानता था। केवल एक वृद्धा ने कहा कि वह मार्गारीट नाम की एक युवती को पहले जानती थी, अब उसके मन मे एक धुँधली स्मृति मात्र है। वह वृद्धा उसके साथ उसकी खोज मे जाने को तैयार हुई। इस वृद्धा की सहायता न पाने पर वह कभी भी मार्गारीट के निकट नहीं पहुँच पाता।

वह वृद्धा के बताने पर एक सड़क पर कुछ दूर तक चल कर एक छोटे दोमजिला घर के सामने रुक गया। उसने काँपते हुये उस मकान का द्वार खटखटाया। द्वार खुला ही था। मार्गारीट का नाम पुकारने पर भीतर से किसी ने उत्तर दिया—"यहाँ नही जी !"

रेमो घर मे प्रवेश करके उत्कठित भाव से चारों ओर देखता हुआ फिर पुकारने लगा—"मार्गारीट जेनेब्रर ! मर्गारीट जेनेब्रर !..."

एक पीली, सूखी और सिकुड़ी चमड़ी की दुर्बल वृद्धा एक बड़ी आराम कुर्सी पर बैठी हुई थी—काँपती हुई अति कठिनई से उठ कर बोली—"मार्गारीट जेनेब्रर तो शायद मैं ही हूँ !"

"तुम ! . बुढ़िया, क्या तुम पागल हो गई हो ? मैं मार्गारीट को ढूँढ रहा हूँ;—वह सुन्दर है, वह युवती है, उसके बाल सुनहले हैं; उसके ओंठ लाल-लाल हैं !"

फिर दीवार पर टँगा बड़ी-बड़ी आँखों वाली एक युवती का चित्र देख कर वह कह उठा—"यही है मेरी मार्गारीट, उससे ही मैं प्रेम करता हूँ, और उसी ने शपथ की थी कि वह मेरे लिये प्रतीक्षा करेगी।"

मार्गारीट ने पहिले चित्र पर फिर रेमो पर एक विषाद भरी दृष्टि फेंकी, फिर उसके चेहरे पर एक दुख भरी मुस्कान की रेखा अंकित हो गई। उसने कहा—"मैं वही हूँ; मैंने तुमको धोखा नही दिया, मैं तब से तुम्हारे लिये प्रतीक्षा कर रही थी—पर तुम लगातार देर करने लगे... तुम्हारे आने के पहिले ही, निर्दय और दुष्ट काल ने आकर, यह देखो, मेरे उस सुन्दर चेहरे पर अमिट चिन्ह छोड दिया है।"

"तुम्हीं मार्गारीट हो ? तुम्हारी यह दशा है ?"

वृद्धा के चेहरे पर उस समय भी विषाद की वह मुस्कान विलीन नहीं हुई थी।

"लेकिन रेमो, तुम क्या सोचते हो कि तुम्हे पहिले जैसा देखा था, तुम अब भी वैसे ही हो ? अपने चेहरे को एक बार दर्पण मे देखो तो सही, मेरे मित्र !" यह कह कर मार्गारीट उसका हाथ पकड कर एक दर्पण के सामने ले गई। रेमो दर्पण मे मुँह देख कर, चिल्ला उठा। उसे लगा कि वह पूर्ण-यौवन मे सो गया था, अब शिथिल बुढापे मे जागा है। कहा—"यह मानसिक श्रम का फल है।"

"नही मित्र, यह समय का धर्म है।"

"अच्छा, यह तो कहो कि हमारे अन्तिम साक्षात् के बाद। कितने वर्ष बीत गये हैं।"

"आधी शताब्दी।"

रेमो दोनों हाथो से सिर थाम कर एक कुर्सी पर बैठ गया।

"अच्छा ! आधी शताब्दी ?—क्या यह कभी सभव है ?"

एक क्षण के लिये उसके चित्त मे पश्चात्ताप आ गया—हृदय का सब सुख चला गया। किन्तु क्षण भर के बाद वह सहसा उठ कर खड़ा हो गया—उसकी आँखे चमक उठीं। उसने कहा—"जिसे अनन्त काल तक जीवित रहना है, उसके निकट आधी शताब्दी क्या है ?" यह कह कर उसने अपनी अँगुली से एक सोने की अँगूठी खींच

निकाली,—उसके खाने मे एक बूँद 'अमृत-अर्क' रक्खा हुआ था। अँगूठी को मार्गारीट के हाथ मे देकर दृढ विश्वास के साथ उसने कहा—"पी लो, पी लो, मैं तुम्हे अमर कर दे रहा हूँ।"

मार्गारीट ने अँगूठी को एक तरफ रख कर, छाती पर की कुर्त्ती फाड़ कर अपनी सूखी और भद्दी छाती को दिखाया। रेमो सिहर उठा। मर्गारीट ने कहा—"परमात्मा प्रत्येक वसन्त काल मे प्रकृति को किस प्रकार नये यौवन मे सजाते हैं, यह परमात्मा ही जानते हैं। तुम्हारी तरह विद्वत्ता मुझ में नहीं है, पर मैं निर्बोध भी नही हूँ। यह शरीर तो हाड़-मास का बना है, कभी न कभी इसका नाश होगा ही, हम लोगों की आत्मा ही अमर है—परमात्मा ने मनुष्य की आत्मा में ही अनन्त जीवन का सचार किया है! इस विषय पर मेरे चाचा जो कुछ कहते थे, सो सही है। मित्र, तुमने व्यर्थ समय नष्ट किया है!"

"खैर, तब भाड़ में जाय!—यदि तुम पहिले यह कहती तो ."

यह कह कर रेमो ने अँगूठी को पैर से कुचल दिया।

वह 'अमृत-अर्क' की बूँद वाष्पाकार हो वायु में विलीन हो गई और सृष्टि, स्थिति और प्रलय के रहस्यमय मूल-बीज मे जीवन-शक्ति वापस करके फिर विश्व-पदार्थ में विलीन हो गई।

(३)

एक वर्ष के बाद रेमो ने सुना कि मार्गारीट की मृत्यु हुई है। वह बहुत श्रद्धा से अर्थी के साथ अन्तिम निवास तक गया। फिर वह निःसग, प्रेमहीन, मित्रहीन, शिकारी के द्वारा पकड़े हुये पशु की भाँति तग पिंजड़े मे मानो चक्कर काटने लगा। जीवन मे कोई सुख नहीं है, कोई आशा नहीं है, दूर दिगन्त मे कोई भी लक्ष्य नही है—इस तरह वह जीवन काटने लगा।

उसके सामने, पीछे, अगल-बगल, चारों तरफ ही शून्यता थी।

उसकी जीर्ण देह समय-तुषार से भारी होती जा रही थी, उसका

चित्त मरुभूमि मे परिणत हो गया था,—उसकी चिन्ता मे सरसता नहीं थी - उज्ज्वलता नही थी। उसका हृदय घायल हो गया था। उसकी अन्तरात्मा निरुत्साह और उदास हो गई थी—कहीं तिनका भर भी आश्रय नहीं पा रही थी।

उसके सामने अनन्त जीवन फैला हुआ था,—एक पर एक दिन आ जा रहे थे, उनका विराम नहीं था, अवसान नहीं था।

अब कौन उसके हृदय मे शक्ति देगा?—कौन उसे सान्त्वना देगा? किसके लिये इन सारे कष्टो को सहन करेगा? अब उसे जीवन की क्या आवश्यकता है?

इस अँधेरे से घिरे जीवन की भीषण शून्यता के बीच, उसने मृत्यु का आह्वान किया; किन्तु उसके निराश हृदय के आह्वान से मृत्यु ने उत्तर नही दिया।

जो मृत्यु दुर्बल का आतक है और सबल का आश्रय-स्थल है, जिस मृत्यु का द्वार कभी न कभी मनुष्यो के निकट खुल जाता है, जहाँ जाकर मनुष्य के सारे दुःख और कष्ट दूर हो जाते हैं और जिसकी दूसरी ओर शान्ति और प्रेम का चमकता राज्य है—वही मृत्यु उसके आह्वान से नहीं आई।

अब वह एक अनसुने नये दुःख का रहस्य जान सका, क्योंकि उसका दु ख साधारण मनुष्य का-सा दु.ख नही था।

वह किसी प्रकार के आत्म-विनोद मे भूला रहे, यह भी उपाय नहीं था। उसने लोगों से मेल-जोल करने जाकर देखा कि वे बच्चों के से तुच्छ विषयों मे मग्न हैं। उसके निकट सभी बच्चे थे, और वह भी और सब लोगों के निकट 'बूढे पागल' के सिवाय और कुछ नहीं था। जब वह विज्ञान की बाते कहता, तब लोग पीछे घूम कर खडे हो जाते। उनको लगता कि वह किसी दूसरी दुनिया का है। वे

कहते—"वृद्ध ! तुम्हारे समय का अन्त हो गया है; अब दूसरो को जगह देकर भाग निकलो !"

एक दिन वृद्ध रेमो विद्रोही होकर, विज्ञान की महानता पर व्याख्यान देने लग गया, और उसके सुबूत के रूप में अपनी उम्र और अनुभव का उल्लेख किया। उस दिन सारे शहर के लोगो को एक भारी विनोद का प्रसग मिल गया। पुलीस ने उसे पकड कर ले जाकर पागलखाने मे बन्द कर दिया। कुछ दिनों के बाद निरीक्षण मे रख कर शान्त पागल समझ कर फिर छोड़ दिया।

पर मुक्ति पाकर भी वह क्या करेगा ? उसने फिर परीक्षागार मे कार्य शुरू कर दिया। वह बारह वर्ष तक अब 'अमृत-अर्क' नही—'अमृत-अर्क' के विपरीत विष के आविष्कार मे लग गया। उसने हजारों प्रकार के विष बनाये; उनमे से कोई विलम्ब में फलदायक था, और कोई फौरन् असर करने वाला था। वे सब जहर खूनियो और डाक्टरों के काम मे आने लगे, पर उस पर कोई भी असर नहीं होता। उसने सोचा—"अब मैं देख रहा हूँ कि जिससे मनुष्य मरता है वह विष वैसा मारक नहीं है; वही विष मारक है जिससे मनुष्य जीवित रहता है।"

वह अपने पर उन विषों की परीक्षा करके घोर पीड़ा का शिकार होने लगा, क्योंकि यद्यपि उसके शरीर ने मृत्यु के पजे से छुटकारा पाया था, पर इस कारण पीड़ाओं से छुटकारा नहीं पाया था। तकलीफ के मारे उसकी देह टेढी-मेढ़ी हो जाती थी; उसका आर्त्तनाद लोग दूर से सुन पाते। किन्तु प्रत्येक बार किसी प्रकार सकट-क्षण पार होकर उसका जीवन-यत्र फिर मानो तेजी से चलना शुरू कर देता। अन्त में वह निराश हो गया।

एक विज्ञानाचार्य के विषय मे उसने पहिले सुना था। अब स्वयं

कोई उपाय न देख पाकर, उससे उनके पास जाने की इच्छा की। तब वे वृद्ध विज्ञानाचार्य रोग-शय्या मे पडे हुये थे।

रेमो ने अपना नाम बता कर उनके घर मे प्रवेश किया। आगन्तुक के मुख पर मनुष्य का स्वाभाविक चिह्न और हाव-भाव न देख पाकर घर की स्त्रियों और बच्चो को डर लगा। रेमो ने विज्ञानाचार्य से कहा—"मेरा उद्धार कीजिये!"

"तुम क्या चाहते हो?"

"मरना चाहता हूँ।"

विज्ञानाचार्य ने उत्तर दिया—"कल आना, तडके ही आना; क्योंकि मैं तुमसे अधिक भाग्यवान् हूँ, मेरा जीवन शेष हो गया है—मृत्यु मेरे बहुत निकट मे है।"

"इसके लिये क्या आप दुःखित नहीं हैं?"

"मेरा कार्य समाप्त हो गया है।"

दूसरे दिन रेमो ने जाकर देखा कि वृद्ध विज्ञानाचार्य को मृत्यु ने आ घेरा है—वे पीड़ा से कातर हैं, फिर भी शय्या पर उठ कर बैठ कर कहा—"रेमो, कल से मैंने बहुत सोचा है, अनेक आलोचनाये की हैं, किन्तु तुम्हारे निकट यह मानने मे बाध्य हो रहा हूँ, कि मैं कुछ भी निश्चय नहीं कर सका। विधाता की मर्जी है कि तुम्हे अनन्त जीवन भोगना पडेगा. किन्तु निराश मत होओ, मेरी बात अन्त तक सुन लो।

'जो कार्य एक मनुष्य द्वारा नहीं होता है, कई मनुष्यों के द्वारा वह समाप्त हो सकता है। विज्ञान एक के लिये नहीं है, एक पुश्त के लिये नहीं है, एक युग के लिये भी नही है, विज्ञान सारी मनुष्य मंडली की सम्पत्ति है। मेरे सारे ग्रथों को पढने पर सत्य का एक अंश मात्र पा सकोगे। मैंने साधारण लोगों की भलाई के लिये ही चेष्टा की थी इसलिये कुछ सफल भी हो सका हूँ। तुम मेरे समय के पहिले के लिखित ग्रन्थो को पढो,—मेरी मृत्य के बाद जो सब पस्तके प्रकाशित होंगी

उन्हे भी पढ़ना। और तुम भी स्वय अविराम विज्ञान का अनुशीलन करते रहो; कदाचित् तुम भी सौभाग्य से साधारण लोगों का कार्य आगे बढ़ा दे सकोगे। तब उसी समय तुम्हारे निकट सत्य—परम सत्य—प्रकट होगा, उसी समय तुम अनन्त शान्ति पा सकोगे।"

रेमो ने कहा—"क्या आप का विचार है कि मैं अब तक चुपचाप बैठा रहा ? मैंने भी इसके लिये बहुत श्रम किया है।"

"हाँ, तुमने अपने लिये श्रम किया है; वह श्रम जन-साधारण के काम नहीं आया था, इसीलिये निष्फल हुआ था। दूसरों के लिये यदि तुम श्रम करते, तो तुम अपने काम का उचित मूल्य पा जाते।" यह कहते-कहते उन विज्ञानाचार्य की मृत्यु हो गई; उनके स्वजन जो उनसे स्नेह करते थे, जो इस अन्तिम समय मे उनको घेर कर खड़े थे, वे रोने लगे। उसके सम-सामयिक व्यक्तिगण जो उन पर श्रद्धा करते थे, वे भी उनको स्मरण करके आँसू बहाने लगे।

यहाँ रेमो को कुछ सान्त्वना अवश्य मिली, फिर भी उद्विग्न चित्त से घर लौट आया।

अब भी उसे दीर्घ काल तक कष्ट भोगना पडेगा। पर अब उसे कुछ आशा मिली थी, विज्ञानाचार्य की ज्ञानपूर्ण बातों पर उसकी श्रद्धा हुई थी। वह अब अन्तिम क्षण के लिये विश्वास के साथ प्रतीक्षा करने लगा।

किन्तु उस क्षण में अभी बहुत देर है—अब भी उसे दीर्घ समय तक कार्य करना पड़ेगा। सार्वभौमिक-विज्ञान मे अब उसने अपनी सारी चेष्टा लगा दी। पहिले के आचार्यों ने विज्ञान-क्षेत्र मे जो बीज बोया था, अपनी अक्लान्त चेष्टा के फल से, किसी शुभ क्षण में, वह बीज अंकुरित हुआ। तब वह कह उठा—"अँधेरा दूर हटा है, प्रकाश

दीख पड़ा है।" इतने दिनों के पश्चात् जीवन के पुरस्कार के रूप में उसने मृत्यु पाई।

वह अपनी क़ब्र के पत्थर पर ये बातें खोद देने के लिये कह गया था :—

"प्रकाश जिस प्रकार अँधकार को—विज्ञान उसी प्रकार अशुभ को दूर हटाता है। रहस्य के द्वारा नहीं, परन्तु अर्जित-विज्ञान के द्वारा ही ईश्वर मनुष्य के निकट आत्म प्रकटन करते हैं। अन्त से आत्मा अपने दुनियावी सम्बन्ध से, अज्ञान से, भ्रान्त विश्वासों से मुक्त होकर उस महान् विश्व की महा-समष्टि मे प्रवेश करती है—जिसका आदि और अन्त नहीं है।"

फ्रांस

अश्रु-संगीत

लेखकः—अज्ञात

गाँव के एक कोने मे नासपाती एक का पेड़ था; बसन्त काल में फूलों से वह बिल्कुल लद जाता—मानो एक विशाल फूलों का छत्र हो। सड़क की दूसरी तरफ़ एक सम्पन्न किसान का घर था। उस घर का प्रवेश द्वार पत्थर का बना था। उस किसान की एक कन्या थी—उसका नाम था पेरीन।

उसी पेरीन के साथ मेरी शादी होने की बात पक्की हो गई।

× × ×

वह सोलह साल की थी। उसके गालो पर मानो कितने ही गुलाब खिले रहते। उसी तरह नासपाती के पेड़ पर भी असख्य फूल खिले रहते। इसी नासपाती के पेड़ के नीचे मैंने उससे कहा—"पेरीन! पेरीन!...हम लोगों की शादी कब होगी?"

इस वाक्य से उसका सिर से पैर तक प्रत्येक अङ्ग मानो हास्यमय हो गया! उसके वह रेशमी बाल, जो हवा से खेल रहे थे—उसके लकड़ी के जूते पहने हुये वह दोनों पैर—उसके वह दोनों हाथ, जिनसे वह एक डाली झुका कर फूल सूँघ रही थी—उसका वह विमल शुभ्र-ललाट—उसके मोती से सफेद दाँत—सभी मानो मुस्कान से भर गये।

मैं उससे बहुत प्रेम करता था। वह बोली—"अगर सम्राट तुम्हे फ़ौज मे न ले, तो फसल कटने के समय हम लोगो की शादी होगी।"

× × ×

सम्राट की सेना-संग्रह करने का समय आ गया। ईश्वर की कृपा पाने के लिये गिर्जाघर में मैंने एक मोमबत्ती जलाई, क्योंकि पेरीन को छोड़ कर मुझे कहीं दूर देशों मे न जाना पड़े, इस आशका से मेरा चित्त बहुत अधीर हो रहा था। ईश्वर की जय हो! सेना की लिस्ट मे मेरा नाम नही निकला। जॉ नामक एक युवक, जो दूर की रिश्तेदारी में मेरा भाई था, उसका नाम निकला। मैंने देखा, वह रो रहा है और यह कह रहा है—"अब मेरी अभागिनी माॅ की क्या हालत होगी?"

× × ×

"शान्त हो जाओ, जॉ, तुम रोओ मत; देखो—मेरे माॅ-बाप नहीं हैं, तुम्हारे बदले मे मैं युद्ध मे जाऊॅगा।" मेरी इस बात पर वह सहसा विश्वास नहीं कर सका। उसी समय पेरीन नासपाती के पेड़ के नीचे आई—उसकी दोनो आॅखे आॅसुओ से भरी हुई थी। मैंने इसके पहले कभी भी उसे रोते नही देखा था। उसके चेहरे की मुस्कान से उसका रोदन और भी सुन्दर हो गया था।

वह मुझसे बोली—"तुमने बड़ा अच्छा काम किया है—तुम बहुत दयालु हो, पियेर! तुम जाओ, जब तक तुम नहीं लौटोगे, मैं तुम्हारे लिये प्रतीक्षा करूॅगी।"

× × ×

रणभेरी बज उठी, सेनाध्यक्ष हुक्म देने लगे—"दाहिने, बायें,—दाहिने, बाये!—बढ़ो—चलो।" वाहे गाॅव तक हम लोग चले। मन ही मन कहा—"पियेर! दिल मजबूत करो, सामने दुश्मन है!" अब एक लम्बी फैली हुई आग की लाइन देख पाया। पाॅच सौ तोपे एक साथ गर्ज रही थीं, उनके धुएँ से मेरी साॅस मानो रुकी जा रही थी और जमीन पर के खून से मेरे पैर फिसल रहे थे। मुझे डर लगा, मैंने एक बार पीछे घूम कर देखा।

× × ×

मेरे पीछे फ्रास और वह गाँव था; और उस नासपाती के पेड़ के सारे फूल अब फलो मे परिणत हो गये थे। मैंने अपनी आँखे बन्द कर लीं। आँखे बन्द करके देखा, मानो पेरीन मेरे लिये ईश्वर से प्रार्थना कर रही है। ईश्वर की जय हो! अब मेरे मन मे सहसा आया।—"आगे बढो, आगे बढ़ो!—दाहिने, बाये!—गोली छोडो—सगीन उठाओ!"..."शाबाश! शाबाश! यह रॅगरूट सैनिक तो बडी दक्षता दिखा रहा है!.. तुम्हारा क्या नाम है, बेटे?"—"महाराज! मेरा नाम पियेर है।"—"पियेर! मैंने तुम्हे ब्रिगेडियर कर दिया।"

× × ×

पेरीन, पेरीन!—मैं अब ब्रिगेडियर हूॅ? युद्ध की जय हो! युद्ध का दिन तो उत्सव का दिन है! युद्ध-यात्रा मे चलना तो बहुत ही सहज है, कदम पर कदम फेंक कर चले चलो. बस!..."दाहिने, बाये! पियेर! इस बार भी तुम सब के आगे हो?"—अच्छा, एक कप्तान का झब्बा तुम जमीन पर से उठा लो।" झब्बे लगे हुये कितने ही मरे हुये कप्तान जमीन पर लुढ़क रहे थे—एक झब्बा उठा कर मैंने अपने कन्धे पर पहन लिया।

× × ×

"महाराज! मुझ पर आपकी बड़ी कृपा है।"

"बढ़ो!—मॉस्को (रूस की राजधानी) तक चलो!" पर और अधिक दूर नहीं जाना था, जहॉ तक दृष्टि जाती, बर्फ ही बर्फ था—यात्रा का पथ बराबर मृत देहों से चिह्नित था; इस तरफ नदी थी, उस पार दुश्मन की सेना; दोनों किनारों पर हजारों मृतकों का ढेर!—"पुल बनाने के लिये पहली नाव तैराने को कौन तैयार है?"—"सदा तुम्हीं कप्तान?"

इस बार सम्राट ने मुझे 'नाइट' की पदवी दी।

× × ×

ईश्वर की जय हो ! पेरीन, पेरीन ! अब मेरे लिये तुम गर्व कर सकोगी। युद्ध का अन्त हुआ है, मैं छुट्टी पा गया। अब हम लोगों की शादी का इन्तजाम करो—गिर्जाघर का घंटा बजाने को कहो ! पथ बहुत लम्बा है, पर आशा शीघ्रगामी है। वह दीख रहा है—उस उच्च भूमि के पीछे हमारा स्वदेश है।

अरे वही तो हम लोगों के गिर्जाघर की चोटी है ! ऐसा लग रहा मानो गिर्जाघर का घंटा बज रहा है !

×　　　　×　　　　×

यह सच है कि घंटा बज रहा है—पर वह नासपाती का पेड़ कहाँ है ? यही तो फूल खिलने का महीना है, पर कहाँ, वह फूल से भरा पेड़ तो नहीं देख पा रहा हूँ ! पहले तो वह दूर से ही दीख पड़ता था। कहाँ, अब तो वह पेड़ नहीं है ! मेरा कैशोर का मित्र वह पेड, किसने उसे काट डाला ? मानो उसके वे उज्ज्वल फूल खिले थे, पर उसकी कटी हुई डालियाँ अभी तक घास पर बिखरी पड़ी हैं।

×　　　　×　　　　×

"गिर्जा का घंटा क्यों बज रहा है, माथु ?"

—"एक शादी होगी, कप्तान साहब।"

—माथु मुझे नहीं पहचान सका था।

एक शादी !—ठीक कहा है। गिर्जाघर की सीढ़ी पर विवाह के लिये दुल्हा-दुलहिन चढ रहे थे—अहा ! मेरी पेरीन अभी तक वैसी ही हास्यमयी लावण्यमयी है। पेरीन ही दुलहिन है, और दूल्हा मेरा वही भाई जॉ।

मेरे चारों तरफ लोग कह रहे थे—"दोनों एक दूसरे से बहुत प्रेम करते हैं।"

मैंने पूछा—"अब पियेर की क्या हालत होगी ?"

"पियेर ?—कौन पियेर ?"—जवाब मिला। वे लोग मुझे भूल ही गये थे।

×　　　　×　　　　×

मैं उसी क्षण जाकर गिर्जाघर के फ़र्श पर घुटने टेक कर बैठ गया। पेरीन की भलाई के लिये ईश्वर से प्रार्थना की—जॉ की भलाई के लिये ईश्वर से प्रार्थना की। मैं उन दोनो से बहुत प्रेम करता था। गिर्जाघर मे शादी खतम होने पर बाहर आया, और एक नासपाती का फूल तोड़ लिया—वह एक मुरझाया और सूखा हुआ फूल था। फिर मैं सीधा पेरिस के रास्ते पर चलने लगा—पीछे घूम कर भी नही देखा। ईश्वर की जय हो! वे दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं, सुखी होगे।

× × ×

"अरे आओ पियेर! तुम लौट आये!"

"हॉ महाराज!"

"तुम्हारी उम्र केवल बाइस साल की है और इसके भीतर ही तुम 'कर्नल' हो गये! तुम चाहो तो, एक उच्च घराने की लड़की के साथ तुम्हारी शादी करा दूॅ।"

पियेर ने नासपाती की टूटी डाली से जो फूल तोड़ लिया था, उसी सूखे और मृत फूल को हृदय से बाहर निकाला।—"महाराज! इस फूल की तरह मेरे हृदय की हालत है। मेरी कामना केवल यह है कि मैं 'सेनाग्र रक्षक दल' मे नियुक्त होकर धर्मयुद्ध मे वीर की तरह मरूॅ।"

× × ×

पियेर 'सेनाग्र रक्षक दल' मे नियुक्त हुआ।

× × ×

गॉव के एक कोने मे, विजय के दिन घायल, बाइस साल की अवस्था के एक कर्नल की समाधि है। नाम के बदले पत्थर पर केवल यही एक वाक्य लिखा है :—

ईश्वर की जय हो!

फ्रांस

घंटा

लेखक : गाय द मोपासाँ

दरिद्र होने पर भी, अंगहीन पगु होने पर भी, कभी उसके दिन अच्छे बीते थे। पन्द्रह वर्ष की अवस्था मे, एक बडी सड़क पर एक बग्घी के पहिये के नीचे दब कर उसके दोनों पैर टूट गये। तब से, दो लाठी दोनो बगलो के नीचे दबा कर, कधो को कान तक उठाये, वह उन लाठियों पर भार देकर भूमि पर रगड़ता हुआ चलता था। लगता था कि दो कधो के बीच उसका सिर मानो दो पहाड़ों मे डूबा है।

परित्यक्त बच्चे को गॉव के पुरोहित एक नाली मे पा गये थे। उसका नाम रक्खा गया—निखोलेस तुस्यॉ। लिखने-पढ़ने की ओर उसका ध्यान नहीं गया—और उसे भला पढ़ाता कौन? जब उसके पैर टूट गये, तब गॉव के रोटी वाले ने उसे कई गिलास ब्राण्डी पिला दी थी—तब से वह फिर पगु बन गया; लोगों की हॅसी की चीज हो गया। तब से वह आवारा है। भीख मॉगने के सिवाय वह कुछ नहीं जानता।

इसी बीच एक धनी स्त्री ने, अपने भवन से लगे हुये मुर्गी खाने की बगल मे, ताख के ढग की बनी भूसे से भरी कोठरी मे उसे रहने के लिये जगह दी थी। उसे सन्देह नहीं था कि घोर दुर्भिक्ष में भी उसे वहॉ से सदा एक टुकड़ी रोटी खाने को और एक गिलास 'सिडार' शराब पीने को मिलेगी। कभी-कभी वह बूढी मालकिन, ऊपर जीने पर से, या अपने कमरे की खिड़की से दो-चार पैसे भी उसकी ओर फेंक देती थी। अब उसकी मृत्यु हो गई थी।

गाव के लोग उसे कदाचित् ही कुछ देते थे; उससे उनका अति परिचय हो गया था। वे उसे चालीस वर्षों से देखते आ रहे थे—दो लाठियों पर भार देकर अपनी कुत्सित अगहीन देह को खींचते हुये एक द्वार से दूसरे द्वार पर भीख माग रहा है। वह और कहीं भी नहीं जाना चाहता था, क्योंकि वह स्वदेश के इस कोने के सिवाय और कोई जगह जानता ही नहीं था। वह दो-चार घरों में ही जाता था, उसने भिक्षा-भ्रमण की एक सीमा निश्चित कर ली थी; वह कभी भी उस अभ्यस्त सीमा का उल्लघन नहीं करता था।

"और दूसरे गांवों मे क्यों नहीं जाता? जब देखो तभी सिर पर सवार है!"

वह कोई उत्तर नहीं देता; वह वहां से चला जाता। एक अनजान स्थान के धुंधले भय से, दरिद्र की-सी नाना प्रकार की कल्पित आशकाओं से वह अभिभूत हो पड़ता। कोई नया चेहरा देखने पर, या एक साथ अधिक पुलीसमैनों को देखने पर वह भागने की चेष्टा करता था। वह जब दूर से एक झाड़ी, या पत्थरों की एक ढेरी धूप में चमकता देख पाता, तब उसकी देह मे एक असाधारण तीव्रता आ जाती, शिकारी का भगाया हुआ जीव जिस प्रकार एक छिपने की जगह की ओर जी-जान से भागता है, वह उसी भांति शीघ्रता से भाग कर, झाड़ी या पत्थरों की ढेरी की आड मे आश्रय लेता; वहाँ वह अपनी लाठियों के साथ भूमि पर लोट जाता। उसकी मैली पोशाक मिट्टी के रग मे मिल जाती। इसी तरह वह लोगों की दृष्टि से अदृश्य होता।

उसका कोई आश्रय-स्थान नहीं था; उसकी एक कुटिया भी नहीं थी, जरा सी घिरी हुई जगह भी नहीं थी। वह गर्मियों मे जहाँ-तहा सो जाता था और जाड़े मे किसी खलिहान मे या किसी अस्त-बल मे बहुत निपुणता से घुस जाता और अपने ऊपर लोगों की दृष्टि पड़ने के पहिले ही भाग जाता। किसी घर मे प्रवेश करने के लिये

कहाँ गड्ढा या छेद है, यह उसे अच्छी तरह मालूम था। लाठियों के व्यवहार से उसकी बाहों मे आश्चर्यजनक शक्ति आ गई थी, वह केवल अपने हाथ की कलाई की शक्ति से खलिहान मे घास की गड्डी के ऊपर तक चढ़ जाता था। भीख माँग ला कर, वह कभी-कभी वहाँ चार-पाँच दिनों तक रहता था।

मनुष्यों के बीच बनैले पशु की भाँति वह जीवन व्यतीत करता था; किसी को भी नहीं जानता था, किसी से भी स्नेह नहीं करता था। किसान उसकी उपेक्षा करते थे, अपने मन मे उस पर एक दबी दुश्मनी रक्खे हुये थे। वे उसे 'घटा' कहते थे। जिस प्रकार घटा दो खूँटियों पर लटका रहता है, वह भी उसी प्रकार दो लाठियो के बीच लटका रहता था, इसीलिये उन्होंने यह नाम रक्खा था।

दो दिनों से उसने भोजन नहीं पाया था। किसी ने भी उसे कुछ भी नहीं दिया था। उसे देखते ही अपने द्वार पर खडे किसान दूर से ही चिल्ला उठते थे—"भाग यहाँ से! तुझे तीन दिन एक-एक टुकड़ी रोटी दी है!"

तब वह शीघ्रता से अपनी लाठियों को घुमा कर दूसरे घर जाता—वहाँ भी वह इसी प्रकार की अभ्यर्थना पाता।

एक घर से दूसरे घर के लोगों को सुना कर स्त्रियाँ कहती—"नहीं जी, भला हमेशा इस आवारागिर्द को खिलाया जा सकता है!" पर प्रतिदिन उस आवारागिर्द को कुछ भोजन तो करना ही है!

वह अपने परिचित दो-तीन गाँवों से गुजर गया;—उसे कहीं भी एक पैसा भी नहीं मिला—एक टुकडी बासी रोटी भी नही मिली। अब केवल एक गाँव में जाना और बाकी था। वह थक गया था,—अब उसमे रगड़ते हुये चलने की शक्ति नही थी। उसकी जेबे खाली थीं—पेट भी खाली था।

फिर भी वह चलने लगा। वह दिसम्बर का महीना था;

शीतल वायु मैदान भर मे दौड़-धूप मचा रही थी; पत्तेहीन नग्न डालों में से सों-सों शब्द निकल रहा था। बादलों के भारी-भारी टुकडे धुँधले आकाश-पथ पर दौडे हुये चले जा रहे थे—यह नहीं जानते थे कि कहाँ जा रहे हैं। पगु भिखारी कठिनाई से दोनो लाठियों पर एक दूसरे पर भार देकर बहुत धीरे-धीरे चलने लगा।

वह बीच-बीच में सड़क की नाली पर कुछ क्षणों के लिये सुस्ता लेता। उसका चित्त चिन्तातुर था—वह भूख से छटपटा रहा था। उसके दिमाग़ मे केवल एक ही बात थी—"भोजन"; पर किस तरह भोजन मिलेगा, यह वह नहीं जानता था।

इसी तरह वह तीन घटे तक इसी सड़क पर चलता रहा, फिर गाँव के पेड़-पौधे उसकी दृष्टि में आ गये—तब वह और तेजी से चलने लगा।

पहिले ही एक किसान से उसकी भेंट हुई; उसके निकट भीख माँगते ही वह कह उठा :—

"फिर तू आया है ? क्या तूने अभी तक अपनी पुरानी बदमाशी नहीं छोड़ी है ? तेरे पजे से छुटकारा पाना एक समस्या की बात हो गई है!"

'घटा' और वहाँ खडा नहीं रहा—वह दूर चला गया। प्रत्येक द्वार से उसे तिरस्कार मिलने लगा; सभी ने उसे कुछ भी न देकर भगा दिया। फिर वह धीरज के साथ सीधा चलता ही गया।

फिर वह मैदानो मे से होता हुआ एक बस्ती की ओर गया। वर्षा से ज़मीन भीग कर कीचड़ हो गई थी। वह कीचड पर से चलने लगा। किन्तु वह इतना दुर्बल हो गया था कि कीचड़ मे से वह लाठियाँ उठा नही पा रहा था। वह सब तरफ से भगाया जाने लगा। और फिर यह दिन बहुत ठंड और उदास ढग का था; ऐसे दिनों में चित्त स्वभाव

से ही संकुचित हो जाता है, सहज ही क्रोध आ जाता है, उदासी के अधकार में चित्त ढँक जाता है—ऐसे दिन मे दान करने के लिये हाथ नहीं खुलता है, चित्त किसी प्रकार की सहायता नही करना चाहता है।

अपने परिचित सब घरो मे जब जाना समाप्त हो गया; तब वह किसान शिके के आँगन की एक बगल में, एक नाली के कोने पर बैठ गया। उसने अपनी ऊँची लाठियो को दोनो बगलो के नीचे से जमीन पर फेंक दिया और भूख की पीड़ा से बहुत ही कातर होकर देर तक चुप-चाप बैठा रहा।

वह यहाँ न जाने किस चीज की आशा से बैठा रहा। हम सब के चित्त में इस प्रकार की एक अनिर्दिष्ट धुँधली आशा करीबन सब समय ही रहती है!

वह इस आँगन के एक कोने मे करारी ठडी हवा मे बैठ कर एक रहस्यमय अनजान सहायता की आशा करता रहा। हम लोग परमात्मा या मनुष्य के निकट से इस प्रकार की सहायता पाने की आशा अक्सर करते हैं, फिर भी हम लोग नहीं सोचते हैं कि सहायता कैसे मिलेगी, क्यों मिलेगी, किससे मिलेगी। वहाँ एक झुण्ड मुर्गी के बच्चे भोजन की खोज मे भूमि पर झुक कर फुदक रहे थे, एक अनाज या कीडा देख पाने पर चोंच से उठा ले रहे थे।

'घटा' कुछ भी न सोचता हुआ केवल उनकी ओर देख रहा था। लेकिन कुछ देर के बाद उसके दिमाग मे एक बात आई। 'दिमाग में आई' न कह कर कहना चाहिये—एक बात उसके पेट मे अनुभूत हुई—"एक मुर्गी के बच्चे को अगर आग में जला कर खा लूँ?"

यह बात उसके दिमाग में एक बार के लिये भी नही आई कि

यह कार्य करने पर चोरी का अपराध लगता है। वह हाथ के निकट एक पत्थर का टुकड़ा पा गया और उसने उस पत्थर से एक मुर्गी के बच्चे को मारा। वह मुर्गी पख फड़-फडा कर वही पड़ी रही। और सब भाग गये। फिर 'घटा' दोनों लाठियो को बगल के नीचे दबा कर, अपना शिकार उठा लेने के लिये 'खट् खट्' करके चलने लगा।

वह जैसे ही लाल चोटी वाली काली मुर्गी के निकट आया, उसकी पीठ पर एक बड़े जोर का धक्का लगा। उस धक्के से उसकी दोनों लाठियाँ बगल से खिसक पड़ीं, और वह पाँच गज दूर तक लुढकता चला गया। किसान शिके ने क्रोध से आग बबूला होकर उस चोर पर वार किया और उसकी पंगु देह पर लात, घूँसे और तमाचे मारता ही रहा। उसी समय चरवाहे भी आ पडे। वे भी 'घटा' को अच्छी तरह पीटने लगे। वे जब उसे मार मार कार थक गये, तब वे उसे भूमि पर से उठा कर खलिहान मे ले गये और बन्द कर दिया। फिर थाने में खबर भेज दी गई।

'घटा' अध-मरा, भूख की पीड़ा से कातर, भूमि पर पड़ रहा। शाम हो गई, फिर रात्रि आई और फिर सूरज निकल आया। उसने कुछ भी नही खाया था।

करीब दोपहर के समय पुलीसमैनों ने आकर बहुत सावधानी से द्वार खोला। उन्होंने सोचा था कि चोर लडाई-झगडा मचायेगा; क्योंकि किसान शिके ने कहला भेजा था कि इस भिखमगे ने उस पर वार किया था और बहुत कठिनाई से वह अपने को बचा पाया था।

जमादार चिल्लाया—"अबे! उठ!"

लेकिन 'घटा' हिल नही पा रहा था; उसने लाठी पर भार देकर उठने की चेष्टा की, पर उठ नहीं सका। उन्होने सोचा कि यह उसका

छल है। चोर-बदमाश अक्सर ऐसा ही करते हैं। यह सोच कर उन्होंने निर्दयता के साथ उठा कर उसे लाठियों पर खडा कर दिया।

'घंटा' भय से विह्वल हो गया। शिकारी के सामने शिकार जिस प्रकार डरता है—बिल्ली के सामने चूहा जिस प्रकार डरता है—यह उसी तरह का भय था। तब वह शरीर की सारी शक्ति लगा कर कठिनाई से खड़ा रह गया।

जमादार कह उठा—"चल वे, चल!"

'घंटा' चलने लगा। किसान लोग अपने घरो के द्वार या खेत पर खडे होकर देखने लगे। स्त्रियाँ घूँसा दिखाने लगीं। पुरुष मजाक करने लगे, गालियाँ देने लगे—"अब बच्चू पकडे गये हैं! साला चोर, हरामखोर!"

वह दो पुलीसमैनो के बीच चला गया। चलने की शक्ति न रहने पर भी वह जबर्दस्ती से अपने को रगड़ता ले चला। सध्या तक उसे इसी प्रकार रगड़ता हुआ चलना है। वह कुछ भी नहीं जानता था कि उसका क्या होगा, वह इतना भय से विह्वल हो पड़ा था कि वह कुछ भी नही समझ पा रहा था।

सडक पर उससे जिन लोगों से भेंट हुई, वे थोड़ी देर के लिये ठहर कर उसे देखते रहे। किसानों ने धीमे स्वर मे कहा—"एक चोर है!"

रात्रि हो जाने पर वे जिले के शहर मे आ पहुँचे। 'घटा' कभी भी इतनी दूर नहीं आया था। वह सोच भी नहीं सका कि क्या हो रहा है या क्या हो सकता है। ये सब भयानक अनदेखी चीजें, ये सब चेहरे, ये सब नई सड़कें और मकान देख कर वह बेहद डर गया।

उसकी जबान से एक भी बात नहीं निकली, क्योंकि, उसको कुछ भी कहने को नहीं था, वह और कुछ भी नही समझ पा रहा था। इसके

सिवाय इतने वर्षों से किसी से भी न बोलने-चालने के कारण, उसने अपनी जबान का व्यवहार खो दिया था। उसके दिमाग में ऐसा शोर मचा हुआ था कि दो-चार शब्द जोड़ कर कुछ कहने की उसमे शक्ति ही नही रही।

शहर की जेल मे उसे बन्द कर के रक्खा गया। पुलीसमैनों ने एक बार के लिये भी नहीं सोचा कि उसे कुछ भोजन की आवश्यकता है। उसे उसी तरह छोड़ कर वे चले आये।

दूसरे दिन सुबह जब वे 'घंटा' का इजहार लेने के लिये आये, तब उन्होंने देखा कि, घटा' जमीन पर मरा पड़ा है। एक ने कहा—"मर गया ? कितने आश्चर्य की बात है !"

फ्रांस

उसकी भूल हुई थी

लेखक—वेसेलिओ

तुम्ही कहो, भूल किससे नही होती है ? इस जगत में हम लोग भूलों से घिरे हुये हैं, भूल आवश्यक है, भूल ही समाज की बुनियाद है, भूल चित्त को कोमल करती है, भूल हम लोगो के आत्मानुराग को कम कर देती है। जो सदा ही ठीक कार्य करता है, वह असह्य है। मनुष्य की सभी भूले क्षमा कर दी जा सकती हैं, केवल दूसरे के निकट विरक्ति-जनक हो उठना—इस भूल की क्षमा नहीं है। यदि हम लोग दूसरे की विरक्ति का कारण होते हैं, तो हमे अपने घर में अकेले बैठे रहना चाहिये। पर मैं तो असल बात से दूर हटता जा रहा हूँ।

अब मिस्टर मोदर के क़िस्से पर आ जॉय। युवक मोदर बहुत ही अभागा था, यद्यपि वह बहुत बुद्धिमान था; उसका हृदय कोमल था और उसका स्वभाव मीठा था। पर ये तीनो बाते भूल हैं और इन तीनों भूलो से और भी अनेक भूले हो जाना स्वाभाविक है।

पाठ समाप्त करके जब उसने प्रथम समाज मे प्रवेश किया, तभी से वह ठीक कार्य करने की चेष्टा करता था। तुम देख पाओगे कि इसका अन्तिम परिणाम क्या है। सयोग से एक राज-सभासद और उनकी पत्नी से उसका परिचय और घनिष्टता हो गई। पत्नी को लगा कि मोदर बुद्धिमान है, क्योकि उसकी देह की बनावट सुन्दर है। पति को लगा कि उसकी बुद्धि बहुत थोडी है, क्योकि उनके विचारो से मेल नही होता था।

मोदर की तेज बुद्धि के लिये, वह महिला उस पर कुछ स्नेह दिखाने लगी; पर मोदर उससे प्रेम न करने के कारण अपने पर महिला के इस यत्न का मतलब ही नहीं समझ सका। पति ने अपनी नव-प्रकाशित युद्ध सम्बन्धी एक पुस्तक पढ़ कर राय प्रकट करने के लिये उससे अनुरोध किया। मोदर ने पुस्तक पढ कर बहुत सरलता के साथ कहा कि लेखक युद्ध की अपेक्षा सुलह का कार्य अधिक सुगमता से कर सकेंगे।

इसी समय एक सेना-दल के सेनाध्यक्ष का पद खाली हुआ। तब एक नालायक मार्किस को—उस युद्ध सम्बन्धी पुस्तक के लेखक को एक प्रतिभाशाली लेखक बताने पर और लेखक की पत्नी बहुत ही सुन्दर है, इसी भाव से उन महिला से बात-चीत और व्यवहार करने के कारण—वह नौकरी मिल गई। मार्किस कर्नल के पद पर नियुक्त हो गया। मोदर सच्चा आदमी था। सच्चा होना ही उसकी भारी भूल हुई थी। इस घटना से मोदर का सारा कार्यक्रम उलट-पुलट गया। उसने धन कमाने की इच्छा छोड़ कर, पेरिस में चुप-चाप बैठ-कर लोगों से मित्रता करने का निश्चय कर लिया। यह कितनी भूल थी! उसने सोचा कि युवक आलसिप् उसका एक घनिष्ठ मित्र है। आलसिप् बहुत सुन्दर था। उसके चेहरे पर सज्जनता की छाप थी, उसके विचार पक्के और सस्कृत थे।

एक दिन वह उदास चेहरे से मोदर के निकट आया। यह देख कर मोदर को दुःख हुआ। पर जिनकी बुद्धि अच्छी है, हृदय भी अच्छा है, उनकी तरह बेवकूफ और कोई नही। आलसिप् ने कहा कि उसने एक सौ पाउण्ड का एक नोट खो दिया है। मोदर ने उससे कोई लिखित रसीद न लेकर ही वह रुपया कर्ज दे दिया। उसने सोचा कि इस तरह उसकी मित्रता भी शायद पक्की हो गई। यह एक भूल

थी। वह मित्र फिर कभी भी मोदर से नही मिला। फिर उसने कई साहित्यिकों से मित्रता की।

उन्होंने सोचा कि मोदर के द्वारा अपने रचित नाटकों की जाँच करा लेंगे। मोदर को केवल एक सज्जन का नाटक पसन्द आ गया था। मोदर ने उस नाटक से कई अनावश्यक अंशों की काट-छाँट कर दी और लेखक से कहा कि दृश्यों मे एक स्वाभाविक सम्बन्ध रहना चाहिये; एक दृश्य से दूसरा दृश्य आप से आप स्वाभाविकता से निकल आना चाहिये, पात्रों की भूमिका अच्छी होवे; वार्तालाप मे केवल चमकीली नीति की बातें रहना ठीक नहीं है—बात-चीत मे एक जीवन रहना चाहिये, चरित्रों मे केवल स्थूल ढंग की ठोस विपरीतता दिखाना ही काफी नहीं होगा—बल्कि चरित्रो में फर्क दिखाना चाहिये। लेखक ने मोदर की सलाह के अनुसार अपने नाटक का सशोधन किया। अन्त मे उसने देखा कि मोदर एक कुपरामर्श देने वाला है। अभिनेताओं ने कहा कि इस नाटक का अभिनय नही हो सकता।

मोदर ने दिक होकर सलाह देना बन्द कर दिया। उस लेखक ने, मोदर ने पहिले जिसे सहायता दी थी, और एक नाटक लिख डाला। कई विच्छिन्न दृश्यों को जोड़-जाड़ कर यह नाटक रचित हुआ था। इस नाटक के अभिनय करने को मना करने का मोदर को साहस नहीं हुआ। उसने फिर भूल कर डाली। अभिनय के समय दर्शकों ने बुरी समालोचना के साथ शोर-गुल मचा कर नाटक का अन्त कर दिया। मोदर बड़े चक्कर मे पड़ गया। सलाह देने पर भी भूल करता है। शहर के नाटक-लेखकों से उसने सब सम्बन्ध तोड़ दिया। वह अब पण्डितों से मिलने-जुलने लगा। नाटक-लेखकों की बात-चीत जैसी सुस्त और बेनोक होती है, इनकी भी वैसी थी। जब इनको कुछ कहना होता है तभी वे बात करते हैं। अधिकतर

चुप रहते हैं। मोदर का धीरज टूट गया। उसने उनकी संगत छोड़ कर कुछ युवतियो का सग ले लिया। यह उसकी और एक भूल थी। मोदर ने देखा कि रात-दिन उनके दिमाग मे एक ही बात घूम रही है—वे उस एक ही बात को लिये रहती हैं—इसी एक बात पर उनकी सारी रसिकता है। मोदर समझ सका कि उनसे मेल-जोल करना एक भारी भूल हुई थी। मोदर के किसी विषय पर बहस करने पर वे युवतियाँ सोचती, यह शख्स बिल्कुल अनुभवहीन और बेवकूफ है; और फिर किसी बात मे रसिकता लाने की चेष्टा करने पर वे सोचतीं: यह मनुष्य असभ्य है।

बहुत बुद्धिमान होने पर भी, वह नहीं समझ सकता था कि किस पक्ष को लेना ठीक होगा। अब वह समझ रहा था कि एक गलत रास्ता लेने पर भी उतनी क्षति नहीं होती है—जितनी क्षति एक अनुभवहीन की तरह एक अच्छा रास्ता लेने पर होती है। इससे पहिले एक 'सेनाध्यक्ष' होने की चेष्टा की थी, पर वह सफल नहीं हो सका। फिर उसने मित्रता करने की कोशिश की, उससे वह धोखा खा गया। नाट्यकार, पण्डित और स्त्रियो से उसने मेल-जोल किया; नाट्यकार और पण्डितों की सगत विरक्तिजनक प्रतीत हुई। फिर स्त्रियों को उसकी सगत विरक्तिजनक हो उठी।

जो पुरुष और स्त्रियाँ एक दूसरे से प्रेम करते हैं, ऐसे पुरुष और स्त्रियो की प्रशसा एक सज्जन कर रहे थे—यह सुन कर उसने सोचा कि किसी से प्रेम करने लगना बड़ी बुद्धिमानी का कार्य है। सो उसने प्रेम करने का निश्चय कर लिया। वास्तव मे प्रेम क्या वस्तु है, यह न जानने के कारण ही उसने ऐसा सोच लिया था। प्रेम करने का निश्चय करके कभी भी प्रेम नहीं किया जा सकता। वह अपनी परिचित युवतियो के गुणो का निरीक्षण करने लग गया। जो सब से गुणवती

है, उसी से प्रेम करने के विचार से वह प्रत्येक के गुण और सौन्दर्य परखने लगा। उसने सोचा कि कन्दर्प एक ऐसा देवता है—जिससे कारोबार चलाया जा सकता है।

ये सब परीक्षाएँ और पर्यवेक्षण व्यर्थ हुये, जबरन प्रेम करने की चेष्टा असफल रही। सब अर्थहीन हो गया। तब अचानक एक दिन वह बिना सोचे-विचारे एकाएक एक बहुत ही कुत्सित और ख्याली स्त्री के प्रेम मे मुग्ध हो गया। उसने सोचा था कि उसका निर्वाचन बहुत अच्छा हुआ था। अन्त मे देखा कि वह बिल्कुल सुन्दर नहीं है। इससे वह खुश ही हुआ। उसने सोचा कि अच्छा है, उसका कोई प्रतिद्वद्वी नहीं रहेगा। यह उसकी भूल थी। वह नहीं जानता था कि, स्त्री चाहे जितनी कुत्सित हो, पुरुष का चित्त आकर्षित करने की चेष्टा उसकी उतनी ही अधिक होती है। उसके रग-ढग मे, उसकी दृष्टि और कटाक्ष में, उसकी छोटी-मोटी बात मे—सभी में एक गहरा मतलब छिपा रहता है। एक किसान जिस प्रकार घोर कष्ट से एक अनउपजाऊ जमीन से अनाज पैदा करने की चेष्टा करता है, उसी प्रकार वे अपने कुत्सित चेहरे पर सौन्दर्य खिलाने की चेष्टा करती हैं। स्त्री के अपने आप से पुरुष पर प्रेम दिखाने पर पुरुष का गर्व प्रज्वलित हो उठता है। तब पुरुष गर्व के मोह से अन्धा हो जाता है और स्त्री की बदसूरती उसकी दृष्टि मे नहीं पड़ती है।

मोदर ने यह सत्य धक्का खाकर सीखा था। उसने देखा कि प्रतिद्वन्द्वी उसे घेरे हुये हैं। उसके चित्त मे चचलता आ गई। यही उसकी भूल थी। इस भूल से वह और एक बड़ी भूल में आ गिरा। उसने विवाह कर लिया। वह अपनी पत्नी से बहुत अच्छा व्यवहार करने लगा। यह उसकी भूल थी। उसकी पत्नी ने उसके स्वभाव की मधुरता को दुर्बलता समझा, और उस पर बेहद प्रभुत्व

करने लग गई। मोदर ने झगडा करने की चेष्टा की। यह उसकी भूल थी। झगड़े की भूल से वह और एक भूल पर आ गया—वह है पुनर्मिलन। इस पुनर्मिलन मे, उसके दो बच्चे हुये—यानी दो भूलों का जन्म हुआ। फिर वह विधुर हो गया। यह ठीक हुआ था। पर इससे भी उसने और एक भूल कर डाली। वह शोक से कातर होकर अपनी जमींदारी मे जाकर रहने लगा।

उसने गाँव मे जाकर देखा कि एक धनवान बड़े घमण्ड से वहाँ रहता है। वह अपने पड़ोसियों से कभी भी नहीं मिलता-जुलता। मोदर को लगा कि यह उसकी भूल है। वह जिस प्रकार घमण्ड दिखा रहा था, मोदर उसी प्रकार नम्रता से लोगों से मिलने-जुलने लगा। यह उसकी एक भूल थी। उसका घर सज्जनो की बैठक हो गई, उसे एक क्षण के लिये भी विश्राम का अवसर नही मिलता। वह अपने घमण्डी पड़ोसी से ईर्ष्या करने लगा। लोगों के द्वारा घिरे रहने की भूल की अपेक्षा उसे लोगों को डराने की भूल अधिक अच्छी जॅची। एक जमीन के स्वामित्व पर उसके नाम अदालत मे एक नालिश दायर हुई। उसने इस समय इस अन्याय और झूठ का प्रतिवाद न करके अपना स्वत्व त्याग करना ही अच्छा समझा। उसने एक सज्जन की तरह सब सहन कर लिया, और दूसरे पक्ष को भोजन मे निमन्त्रण करके नुकसान सहन करके भी एक सुलह कर ली! पड़ोसियों ने सोचा कि धन कमाने का यह एक अच्छा तरीका आ गया। उसके छोटे-बड़े सब पडोसियों ने उसे सीधा-सादा देख कर, जमीनों का काल्पनिक स्वामित्व बता कर अदालत मे नालिशे दायर कर दीं। इस तरह एक मुकदमे से छुटकारा पाने के लिये मोदर को दस मुकदमों मे फॅसना पड़ा।

दिक होकर उसने अपनी सारी जमींदारी बेच डाली। यह उसकी भूल थी। अब वह अपनी पूँजी किसमें लगाये, यह सब सोच ही नहीं

पा रहा था। एक सज्जन ने पास के एक बड़े शहर की एक संगीत-शाला बनाने के कार्य में उसे अपनी पूँजी लगा देने की सलाह दी। डिरेक्टर आदमी अच्छा था। उसने संगीतज्ञ होने के लिये वकालत शुरू कर दी थी। वकील का हाव-भाव बहुत मनोरम होने पर भी एक वर्ष के भीतर उस संगीतशाला का दिवाला निकल गया। इससे मोदर का सर्वस्व चला गया। तब उसने दुनिया की मोह-ममता त्याग कर मठ में जाकर संन्यास ले लिया। फिर उसने सन्यास जीवन से थक कर मृत्यु की गोद में सदा के लिये विश्राम ले लिया। यह उसकी अन्तिम भूल थी। पर बात यह है कि शुरू में उसका जन्म लेना ही एक भारी भूल हुई थी।

पुतई

लेखक—अनातोले फ्रान्स

मॅशिये वेरजेरे बोले—"बचपन मे हमारे घर की छोटी-सी फुलवारी ने दुनिया भर का भय और विस्मय हम लोगो के लिये इकट्ठा कर रक्खा था।"

सिलाई के काम से आँखे न उठाये मुस्कराती हुई जोए बोलीं—"तुम्हे पुतई की याद है?"

"याद है?—वाह! बचपन के परिचित सब लोगों मे पुतई ही तो सब से अधिक याद है। उसके चेहरे की बनावट या उसके चरित्र की छोटी-सी बात भी मैं नहीं भूली हूँ। उसका सिर लम्बा था—"

तब श्रीमती जोए बोली—"नीचा ललाट था।"

फिर भाई और बहिन बनावटी गम्भीरता से रटी हुई बात की तरह कहते गये :—

"आँखे धॅसी हुई थीं।"

"चोर की सी दृष्टि थी।"

"कनपटी पर कौआ की टॉग की तरह तीन लकीरे थीं।"

"गलपटी लाल और चमकती हुई थी।"

"कान खुरखुरे थे।"

"चेहरा भावहीन था।"

"हाथ हरदम हिलते रहते थे—और इससे ही उसकी मति प्रकट होती थी।"

"कुछ झुक कर चलता था—दुबली, इकहरी शक्ल का था।"

"फिर भी उसकी देह मे बड़ी ताकत थी।"

"दो अँगुलियों के बीच दबाकर रुपया तोड़ सकता था।"

"बहुत बड़ा अगूँठा था।"

"हकला कर बोलता।"

"पतला स्वर था।"

सहसा मॅशिये बेरजेरे कह उठे—"बहिन! उसके पीले बाल और नन्हीं सी दाढ़ी की बात तो हम लोग भूल ही गये। ठहरो, हम लोग फिर से शुरू करे।"

पलीन विस्मय से यह आवृत्ति सुनती रही। उसने अपने पिता और बुआ से पूछा कि क्यों वे इस गद्य को रट रक्खे हैं, और क्यों उन्होंने मन्त्र की भाँति इसकी आवृत्ति की।

गम्भीर भाव से पिता ने कहा—

"पलीन, तुमने अभी जो कुछ सुना, यह बेरजेरे परिवार का 'पुराण' है। तुम्हे यह क़िस्सा सुन रखना चाहिये, जिससे मेरे और तुम्हारी बुआ के साथ ही साथ यह लुप्त न हो जाय।"

पलीन बोली—"तुम लोगों की बाते मेरी समझ मे नही आ रही हैं।"

"क्योकि, तुम पुतई को नहीं जानती हो। सुनो,—बचपन मे तुम्हारे पिता और बुआ पुतई से अधिक और किसी भी आदमी को नही जानते थे।"

पलीन कह उठी—"पर यह पुतई था कौन?"

पिता और बुआ पलीन की बात का जवाब न देकर ही एक साथ हँस पड़े। पलीन विस्मित होकर एक बार पिता की ओर, एक बार बुआ की ओर बारी-बारी से देखती रही। वह समझ नहीं सकी कि वे क्यों हँस रहे हैं,—उसे यह सब बुरा लगा। वह बोली—"कहो न बाबूजी,

यह पुतई था कौन ? तुमने तो अभी कहा कि मुझे सुन रखने की आवश्यकता है।"

"पुतई बाग़ का माली था। वह सेण्ट ओमेर कस्बा का एक किसान का बेटा था। फूल बेचता था। पर ग्राहकों को खुश न रख पाने के कारण उसका धधा नही चल मका। फिर वह लोगों के घर मजदूरी करने लग गया। पर मालिको को उसके काम से सन्तोष नहीं होता था।"

यह सुन कर श्रीमती जोए को और ज्यादा हँसी आ गई। बोलीं—"क्या तुम्हे याद है, भाई, जब पिता स्याही दान, कलम या कैंची ढूँढ़ नहीं पाते थे, तब कहते थे 'कहीं पुतई न उठा ले गया हो'।"

मॅशिये बेरजेरे ने कहा—"हाँ, पुतई की नेकनामी वैसी अच्छी नही थी।"

पलीन बोली—"बस इतना ही ?"

"नहीं बेटी, और भी है! पुतई का इतिहास कुछ पेचदार है। हम लोग उसे अच्छी तरह जानते थे, हम लोगों का वह बहुत घनिष्ठ हो उठा था—"

उनकी बात पूरी होने के पहिले ही जोए कह उठीं—"लेकिन उसका कोई अस्तित्व ही नहीं था।"

मॅशिये बेरजेरे तिरस्कार भरी दृष्टि से जोए की ओर देखते हुये बोले—"क्या कहती हो, जोए ? पुतई का अस्तित्व नहीं था ? ऐसी बात तुम भला कह सकती हो ? पुतई का अस्तित्व नही है, यह कहने के पहिले क्या तुमने, अस्तित्व कितने प्रकार के हैं, यह बात सोची है ? नहीं जोए, पुतई था,—यद्यपि उसका अस्तित्व कुछ अनोखा था।"

निराश होकर पलीन बोली—"तुम लोगों की बाते मुझे तो गूढ़ लग रही हैं—मैं तो कुछ भी नहीं समझ रही हूँ।"

"नही बेटी, सब क़िस्सा सुनने पर तुम्हे गूढ़ नही लगेगा। सुनो,—

पूरी उम्र लेकर पुतई ने जन्म लिया था। मैं उस समय एक छोटा बालक था और तुम्हारी बुआ एक छोटी बालिका थी। हम लोग सेण्ट-ओमेर कस्बे के एक प्रान्त मे एक छोटे से मकान मे रहते थे। उस समय माँ और पिता ने कामों से अवसर लेकर शान्ति से कुछ दिन काटने के लिये वह मकान लिया था। कुछ समय के बाद ही उनसे श्रीमती करनोई का परिचय हुआ। वे उम्र मे बूढी थीं, परिचय के बाद उनसे हम लोगों का एक रिश्ता भी निकल आया—दूर के रिश्ते मे वे मेरी माँ की एक दादी थी। कस्बे से बारह मील दूर मॅप्लेसी गाँव मे वे रहती थी। पर रिश्ता निकल आने से माँ और पिता बहुत मुसीबत मे पड़ गये। हर रविवार को वह बूढी, माँ और पिता को भोजन करने के लिये निमंत्रित करती। प्रति रविवार बारह मील जा कर भोजन के निमन्त्रण मे शामिल होना कितनी कठिन बात है, यह तुम समझ ही सकती हो। लेकिन बूढी अपनी जिद किसी तरह भी नहीं छोड़ती थी। वह कहती कि रविवार के दिन रिश्तेदारो का एक साथ भोजन करना ही प्राचीन नियम है, असभ्य और नीच ही यह प्राचीन नियम नही मानता है। पिता की दशा बुरी हो उठी। पर बूढी ध्यान नहीं देतीं। माँ कुछ सहन कर लेती थी। पिता की तरह उन्हे भी कष्ट होता था, पर फिर भी वे अपने चेहरे पर मुस्कान ही प्रकट करती थी।"

जोए बोलीं -"स्त्रियाँ कष्ट सहने के लिये ही दुनिया मे आती हैं।"

बेरजेरे कहने लगे—"प्रत्येक जीव ही यहाँ कष्ट सहने के लिये आता है, बहिन! . खैर, इस भयानक निमन्त्रण से पीछा छुड़ाने के लिये माँ और पिता ने कितनी ही चेष्टा की। पर प्रति रविवार की शाम को श्रीमती करनोई की बग्घी उनको ले जाने के लिये आ ही जाती। वे बूढी के घर जाने के लिये मजबूर हो जाते। यह बँधा नियम खुले विद्रोह के सिवाय और किसी भी प्रकार टूटने वाला नहीं था। पिता

ने विद्रोह किया। उन्होने प्रतिज्ञा की कि श्रीमती करनोई के घर और भोजन करने नहीं जायँगे। पर निमन्त्रण मे न जाने का बहाना ढूँढ़ने का भार उन्होंने माँ पर सौप दिया; लेकिन माँ इस काम के लिये बिल्कुल ही योग्य न थी। किसी प्रकार का बहाना करना उनके लिये असम्भव था। जोए, तुम्हे शायद याद हो कि एक दिन भोजन करने बैठ कर माँ ने कहा—'सौभाग्य से जोए को खाँसी हुई है, कुछ दिनों तक मॅप्लेसीं में जाना नहीं पडेगा।' पर कुछ दिनों के बाद ही तुम अच्छी हो गई।

फिर एक दिन श्रीमती करनोई ने आ कर माँ से कहा—"बेटी, अगले रविवार को मॅप्लसीं मे शाम को भोजन करने का निमन्त्रण रहा।"

पर पिता ने माँ से कह दिया था कि चाहे जैसे हो एक बहाना निकाल कर इस निमन्त्रण से पीछा छुड़ाना ही है। तब माँ ने बहुत मुसीबत मे पड़ कर एक असम्भव-सा बहाना कर दिया—"बहुत दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि इस रविवार को घर छोड कर कहीं जाना असम्भव है। उस दिन माली के काम करने के लिये आने की बात है।"

माँ की बात सुन कर श्रीमती करनोई ने बैठक की काँच की खिड़की से बाग की ओर आँखे घुमाई। फुलवारी के पेड़ों पर बहुत दिनो से कैंची न लगने से एक छोटा-मोटा जगल हो गया था।

सहसा माँ की आँखे भी फुलवारी पर जा पड़ीं। ऊँची-ऊँची घास और जगली पौधे से भरी उस थोडी-सी जगह—जिसका नाम उन्होंने 'फुलवारी' बताया है—की ओर देखते ही बहाना झूठ-सा लगेगा, यह सोचकर वे डर गई।

बूढी बोली—"सोमवार या मंगलवार को माली नहीं आ सकता है? रविवार के दिन काम करना ठीक नही है। हफ्ते मे और किसी दिन क्या उसे अवसर नहीं है?"

मैं सदा से देखता आ रहा हूँ कि जो सब से असम्भव है वह अक्सर बाधा नहीं पाता है; विपक्ष हार मान लेता है। जैसी आशा की गई थी, श्रीमती करनोई ने वैसी जिद नहीं की। कुर्सी से उठ कर उन्होंने पूछा—'तुम्हारे माली का क्या नाम है, वेटी ?'

माँ ने झट कह दिया—"पुतई।"

पुतई का नाम-करण हो गया—इसलिये, उसका अस्तित्व भी हो गया।

बूढी कहने लगी—"पुतई! पुतई! मैंने कहीं सुना है। पुतई? पुतई! अरे मैं तो उसे अच्छी तरह जानती हूँ—लेकिन फिर भी वह मानो याद नहीं पड रहा है। वह कहाँ रहता है? वह दिन में काम करने के लिये निकलता है? जरूरत पड़ने पर वह जिस घर में काम करता है वहाँ उसे कह देना पड़ता है।—आः—हाँ ठीक है, अरे वह तो एक निकम्मा, आवारा, बदमाश है!" फिर जरा गम्भीरता से बुढ़िया बोली—"उससे सावधान रहना, वेटी।"

उसके बाद से पुतई का एक चरित्र भी बन गया।

(२)

इसी समय मॅशिये गोवे और मॅशिये जाँ मार्त्तों आ गये। मॅशिये बेरजेरे ने बात-चीत का विषय उन लोगों से कहा—

"एक दिन मेरी माँ ने जिस आदमी को बना कर अपने सेण्ट-ओमेर के घर मे माली के काम में बहाल किया था, हम लोग उसी के विषय मे बातें कर रहे हैं। माँ ने उसका एक नाम रख दिया, और साथ ही साथ उसका काम भी शुरू हो गया।"

मॅशिये गोवे ने चश्मे का काँच पोछते हुये कहा—"क्षमा कीजिये, महाशय! क्या आप फिर से कहने का कष्ट करेंगे?"

"अवश्य।" मॅशिये बेरजेरे ने कहा "उस नाम का कोई माली नहीं था। उस माली का अस्तित्व ही नहीं था। मेरी माँ बोली—

'माली के आने की बात है!' और उस माली का जन्म हुआ और उसका काम भी शुरू हो गया।"

मॅशिये गोवे ने पूछा—"किन्तु, प्रोफेसर साहब, अगर उसका अस्तित्व ही नहीं था तो उसने काम कैसे किया?"

"एक प्रकार से, उसका अस्तित्व था।"

व्यग के स्वर मे मॅशिये गोवे कह पड़े—"तो यों कहिये कि कल्पना मे उसका अस्तित्व था।"

बेरजेरे बोले—"काल्पनिक अस्तित्व का क्या कोई मूल्य नहीं है? पौराणिक-कथा के सृष्ट चरित्र क्या मनुष्य पर प्रभाव नही डालते हैं? सोचने पर आप समझ जायँगे कि वास्तविक नही—काल्पनिक चरित्र ही हम लोगों के मन पर स्थायी और सब से अधिक प्रभाव फैलाते हैं। सब समय सब देशों मे ही पुतई की तरह काल्पनिक चरित्र ने जाति को स्नेह और घृणा, आशा और त्रास मे अनुप्राणित किया है; इन्हीं लोगों को पूजा मिली है—इन्हीं लोगों ने कानून और शिष्टाचार बनाया है। मॅशिये गोवे, एक बार भिन्न-भिन्न पुराण के विषय मे सोचिये। पुतई भी एक पौराणिक चरित्र है; यद्यपि बहुत अस्पष्ट और बहुत ही साधारण है। अभागे पुतई को कलाकर और कवि घृणा कर सकते हैं, क्योंकि उसमे आँखे चकाचौंध हो जाने लायक चटक और रहस्य नहीं है। बहुत ही साधारण एक आदमी के खयाल से उसका जन्म हुआ है। वह एक थोड़ा पढ़ा-लिखा मनुष्य का बनाया जीव है। जिस रगीन कल्पना से उपन्यास बनता है, पुतई के स्रष्टा मे वह कल्पना-शक्ति नहीं थी।...अब आप लोगों के निकट शायद पुतई का चरित्र साफ हो उठा है?"

जॉ मार्त्तो कह उठे—"अवश्य।"

बेरजेरे ने कहा—"उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम भाग मे सेण्ट-

ओमेर कस्बे में उसका जन्म हुआ था। कई शताब्दी पहिले आडन के जंगल मे जन्म लेने पर किस्सों मे वह जगह पा जाता।"

जॉ मार्त्तो ने पूछा—"तब क्या पुतई भूत था?"

वेरजेरे बोले—"किसी किसी विषय मे उसकी कुछ शैतानी थी, पर सब कामो मे नही। मुझे लगता है कि पुतई पर न्याय नही किया गया है। श्रीमती करनोई ने सोचा कि मेरी माँ तो बिलकुल ही धनी नहीं हैं, इसीलिये अधिक मजदूरी दे नहीं सकतीं। अपने माली के बदले मे श्रीमती करनोई अगर पुतई को अपनी फुलवारी के काम मे लगाये तो अच्छा हो। धन की तो कोई कमी नहीं है, पर कमी न होने से क्या होता है? खर्च भी तो बहुत है। इधर पौधे कैंची से काटने का समय आ रहा है। श्रीमती करनोई सोचने लगी—'वेरेजेरे-मालकिन गरीब है, इसलिये कम मजदूरी देती है, मैं धनी हूँ, मैं और भी कम दूँगी, क्योंकि यह तो रिवाज ही है कि गरीबों से धनी कम मजदूरी देते हैं।' फिर श्रीमती करनोई ने मानस-चक्षु से देखा कि उनके पौधे कट कर नाना आकार के हो गये हैं पर बहुत ही सस्ते मे। उन्होंने मन ही मन कहा—'मुझे अपने काम मे पुतई को लगाना ही है। मैं उसे किसी तरह भी आवारे की तरह चोरी करते-फिरने नहीं दूँगी। उसे माली के काम पर रखने पर मुझे तो कोई नुक़सान है ही नहीं बल्कि लाभ है। कभी कभी उस्तादों से अस्थाई मज़दूर अच्छा काम करते हैं।'

एक दिन उन्होंने मेरी माँ को लिखा—'बेटी, पुतई को मेरे पास भेज दो, मॅम्लेसीं में उसे काम में लगा दूँगी।'

माँ राजी हो गई। हो सकने पर बहुत आग्रह के साथ वे पुतई को भेज देतीं; पर वह तो असम्भव था।

श्रीमती करनोई पुतई की बाट जोहने लगी—पर व्यर्थ ही। श्रीमती करनोई बडी जिद्दिन थीं, एक बार जिस विषय पर जिद करतीं उसका अन्त बिना देखे नहीं छोड़ती थीं। माँ से फिर जब उनकी भेट हुई, तब

फिर उन्होंने पुतई की बात पूछ कर कहा—"क्या तुमने उससे यह नहीं कहा कि मैं उसकी प्रतीक्षा मे काम बन्द करके बैठी हूँ ?"

माँ ने कहा—"कहा तो था, पर वह बहुत ही लापरवाह है—"

बूढी सिर हिला कर बोली—"ओः ! वैसे आदमियों का स्वभाव मुझे मालूम है। मैं तुम्हारे पुतई को अच्छी तरह जान गई हूँ। पर मॅस्लेसी मे काम नही करना चाहता है; ऐसा पागल मजदूर तो मैंने कभी नहीं देखा ! वहाँ के सब लोग मेरा मकान जानते हैं। पुतई की मुझे सख्त जरूरत है। बेटी ! वह कहाँ रहता है यह तो मुझसे कह दो,—मैं उसे ढूँढ़ निकालूँगी।"

माँ ने कहा—"वह कहाँ रहता है, यह तो मुझे मालूम नहीं है। उससे और मेरी भेट नहीं हुई थी। शायद वह कहीं छिपा है।"

माँ इससे और सच्ची बात नही कह सकती थीं। फिर भी श्रीमती करनोई ने माँ की बात पर विश्वास नही किया। उन्होने सोचा कि कहीं पुतई की मजदूरी बढ न जाय, इस डर से माँ ने उनको पुतई का पता नहीं बताया। उन्होंने मन ही मन माँ को बहुत ही स्वार्थी समझा।

कुछ समय के बाद उनको पता चला कि माँ ने उनको धोखा नही दिया था। उन्होने देखा कि वास्तव मे ही पुतई नहीं मिल रहा है। पर श्रीमती करनोई निराश होने वाली स्त्री नहीं थीं—वे उसकी खोज और भी उत्साह से करने लगीं। उनके जितने परिचित, आत्मीय, मित्र, पड़ोसी, नौकर-चाकर, दूकानदार थे सब से उन्होंने पुतई की बात पूछी। उनमे से केवल दो-तीन आदमियों ने कहा कि उन्होंने कभी पुतई का नाम नही सुना है। बाकी सब आदमियों को लगा कि उन्होने पुतई को कहीं न कही देखा जरूर है। महाराजिन बोली—"मैंने नाम सुना है पर उसका चेहरा याद नहीं पड रहा है।" कान खुजलाते हुये 'सड़क नापने वाले' ने कहा—'पुतई ? मैं उसे जानता हूँ, पर उसे दिखा नही दे सकता।" सब से सही खबर रजिस्ट्रार मॅशिये

ब्लेज से मिली। उन्होने कहा कि पिछली साल १९ से २३ अक्टूबर तक उन्होंने पुतई को लकड़ी काटने के लिये बहाल किया था।

एक दिन सुबह के समय श्रीमती करनोई ने हाँफते हुये पिता के कमरे मे प्रवेश करके कहा—"मैंने अभी-अभी तुम्हारे पुतई को देखा। सच, सच, उसे अभी देखा। वह मॅशिये तर्चा के मकान की दीवार से सट कर रेंगता हुआ जा रहा था। वह बहुत तेजी से जा रहा था, इसलिये आखिर वह आँखों से ओझल हो ही गया। क्या वही पुतई है? जरूर वही पुतई है—इसमे भूल नही हो सकती। उसकी उम्र पचास के करीब है, इकहरी शक्ल है, जरा झुक कर चलता है, आवारे की तरह दृष्टि है, बदन पर एक मैला कुर्ता है।"

पिता ने धीरे-धीरे कहा—"हाँ, पुतई की शक्ल कुछ वैसी ही तो है।"

श्रीमती करनोई बोली—"मैंने तो पहिले ही कह दिया। फिर मैंने उसे एकाएक पुकारा—'पुतई!'—उसने पीछे घूम कर देखा। जासूस भी आदमी का पीछा लेकर, जिस नाम के आदमी का पीछा किया है वह आदमी वास्तव मे उसी नाम का है या नही यह निश्चय करने के लिये, इसी तरह एकाएक पीछे से नाम पुकार उठता है।—क्या तुमसे मैंने नही कहा कि यह पुतई के सिवाय और कोई नहीं हो सकता? मैंने यथार्थ आदमी का पीछा किया था। पर वह बहुत बुरी शक्ल का है। तुम लोगों ने उसे काम पर रख कर ठीक नहीं किया। मैं किसी आदमी को देखते ही उसका चरित्र समझ सकता हूँ। यद्यपि मैंने उसकी पिछली तरफ ही देखा है—मैं शपथ लेकर कह सकती हूँ कि वह अवश्य ही चोर है- या खूनी है। उसके खुरखुरे कान हैं। यह बिलकुल अव्यर्थ चिह्न है।"

पिता ने पूछा—"उसके कान खुरखुरे हैं, क्या आपने यह भी देखा है?"

"कुछ भी मेरी दृष्टि से नही छूटता है, बेटा!—अगर तुम अपने बाल-बच्चो के साथ कत्ल न होना चाहो, तो पुतई को घर मे घुसने न देना। और सुनो, जल्दी ही मकान की सब तालियाँ बदल डालो।"

इसके कुछ दिनो के बाद श्रीमती करनोई के रसोई-घर से तीन ककड़ी चोरी गई। जब चोर किसी तरह भी नही पकड़ा गया, तब श्रीमती करनोई का पुतई पर सन्देह हुआ। मॅग्लेसीं मे पुलीस बुलाई गई। उन्होंने आकर जो सबूत सग्रह किया, उससे पुतई पर श्रीमती करनोई का सन्देह स्थापित हो गया। यद्यपि उस समय मॅप्लेसी के आस-पास अनेक चोरियाँ हो रही थीं, लेकिन श्रीमती करनोई के घर की चोरी एक ही आदमी से हुई थी—और वह आदमी चोरी मे उस्ताद है।—उस आदमी ने और कोई चीज नही छुई—भीगी जमीन पर अपने पैरो के निशान तक नही छोड़ गया। पुतई के सिवाय और ऐसा किसी से नहीं हो सकता। पुलिस के हवलदार की भी यही राय थी। वह पुतई की सब करतूते जानता है। वह बहुत दिनो से उसे पकड़ने की फिराक मे है।

दूसरे दिन 'सेण्ट-ओमेर समाचार' नाम के अखबार मे 'श्रीमती करनोई की तीन ककड़ी' शीर्षक एक लेख छपा। समाचार के 'विशेष-सम्वाददाता' ने घूम-घूम कर जो खबर सग्रह की थी उसमे पुतई की शक्ल का वर्णन भी था।—'उसका नीचा ललाट है, आँखे धँसी हुई हैं; कनपटी पर कौआ के टाँग की तरह तीन लकीरे हैं, गलपटी लाल और चमकती हुई है, खुरखुरे कान हैं। पुतई दुबला है, झुक कर चलता है, देखने मे दुर्बल है, पर वास्तव मे बहुत ही ताकतवर है। दो अँगुलियो के बीच रुपया दबा कर तोड़ सकता है।' अन्त मे सम्पादक ने अपनी राय प्रकट की—'हम लोगों को यह सन्देह करने का यथेष्ट कारण है कि असाधारण चालाकी से शहर और आस-पास के गाँवों मे जो सब चोरियाँ हो रही हैं, उनसे पुतई का घनिष्ट सम्बन्ध है।'

अब लोग केवल पुतई की ही चर्चा करने लग गये! एक दिन अफ़वाह फैली कि पुतई गिरफ्तार हुआ है और हवालात में बन्द है। पर शीघ्र ही प्रकट हुआ कि पुतई समझ कर जिसे गिरफ़्तार किया गया था वह पुतई नहीं था—वह फेरी वाला रिगोबर्ट है। उसके विरुद्ध कोई सबूत न पाकर उसे कुछ समय हवालात में रख कर छोड़ दिया गया है। पुतई का कोई पता नहीं मिला।

श्रीमती करनोई के घर फिर एक चोरी हो गई—वह पहिले से भी बढ़कर चोरी थी! उनके रसोई-घर से तीन चाँदी के चम्मच चोरी गये!

श्रीमती करनोई को विश्वास हो गया कि यह पुतई का काम है। वे सोने के कमरे में सब द्वार लोहे की साँकल से बाँध कर रात भर जाग्रत रहने लगीं।

(२)

रात्रि के क़रीब दस बजे के समय पलीन सोने चली गई तब श्रीमती जोए अपने भाई से बोलीं—"श्रीमती करनोई की महाराज्ञिन को पुतई फुसला कर ले गया था—यह बात तो तुमने नहीं कही?"

मँशिये बेरजेरे बोले—"मैं कहने ही जा रहा था। यह न कहने पर क़िस्से की असल बात ही छूट जायगी।.. पुलिस पुतई की खोज करते-करते परेशान हो गई; पर वह कहीं मिला ही नहीं। प्रत्येक आदमी पुतई की तलाश में लग गया। कपटियों का अब बोलबाला हो गया। सेण्ट-ओमेर या उसके आस-पास में ऐसे लोगों की संख्या कम तो नहीं थी! इसी कारण इस समय से अनेक लोग पुतई को बिलकुल एक ही समय में मैदान, सड़क, बाजार और जंगल में देख पाने लगे। इससे उसके स्वभाव का और एक गुण प्रकट होने लगा—वह क्षण भर में एक जगह से दूसरी जगह भी जा सकता है—यह अफ़वाह फैलने लगी। जहाँ जिसे देखने की कोई संभावना नहीं है वहाँ अगर

वह आदमी निगाह में पड़ जाय, तो वैसे आदमी के नाम से सब काँप उठते हैं। सेण्ट-ओमेर मे पुतई एक त्रास हो उठा।

श्रीमती करनोई को पूरा विश्वास था कि पुतई ने ही उनकी ककड़ी और चम्मच की चोरी की है, इसलिये पुतई के आक्रमण से बचने के लिये अपने मकान को उन्होने एक किला बना डाला। द्वार, चटखनी, तालियाँ, साँकल सब पर उनकी रत्ती भर भी निर्भरता नही रही। पुतई बड़ा चालाक जो है—ताली लगे द्वार के भीतर वह अनायास ही प्रवेश कर सकता है।

बिलकुल इसी समय घर की एक घटना से उनका डर और भी बढ़ गया। किसी ने श्रीमती करनोई की महाराजिन को फुसला लिया था! अन्त तक महाराजिन अपने पाप का बोझ गुप्त नहीं रख सकी। पर जिसने उसका सत्यानाश किया, उसका नाम उसने नहीं बताया।

श्रीमती जोए कह उठीं—"महाराजिन का नाम था गुडोली।"

मॅशिये बेरजेरे बोले—"हाँ उसका नाम गुडोली ही था। सब को यह ख्याल था कि उसकी ठोड़ी के नीचे की पतली लम्बी दाढी ही गुडोली को पुरुष के प्रेम से बचाकर कुमारी रहने देगी। लेकिन परमात्मा का यह अव्यर्थ मर्म भी उसे नहीं बचा सका!

श्रीमती करनोई जोर देने लगीं कि गुडोली उस पुरुष का नाम बता दे जो उसका ऐसा सत्यानाश करके भाग गया। गुडोली केवल रोने लगी, पर एक भी बात नहीं कही। श्रीमती करनोई ने बड़ी धमकी दी, कितनी ही विनती की, पर सब व्यर्थ हुआ।

उन्होंने बहुत दिनो तक इस रहस्य को जानने की भर सक चेष्टा की। पड़ोसी, दूकानदार, माली, म्युनिसिपेलटी के जमादार, पुलीस आदि लोगो से पूछ-ताछ की। लेकिन अपराधी का कोई भी पता नहीं मिला।

सब जगह हार कर उन्होने फिर गुडोली को दबाया। पर फिर भी

गुडोली चुप रही। एकाएक सब बाते श्रीमती करनोई को याद आ गईं। रोमाचित होकर बोली—"यह पुतई की करतूत है—अवश्य ही यह पुतई की करतूत है !"

किन्तु महाराजिन केवल रोने लगी—कुछ भी नहीं बोली।

"अवश्य ही यह पुतई की करतूत है। ओः मैं कितनी मूर्ख हूँ; यह बात अब तक मेरे मन मे क्यो नही आई ! यह अवश्य ही पुतई की करतूत है। अरे अभागी—हॉ तू बड़ी अभागी है !"

इसके बाद सब को विश्वास हो गया कि महाराजिन के बच्चे का बाप पुतई ही है। सेण्ट-ओमेर के जज से मजदूर तक के निकट महाराजिन और उसका अवैध बच्चा परिचित हो गया। पुतई ने ही गुडोली को फुसलाया था, इस खबर से सारा कस्बा विस्मय, मजाक और पुतई की प्रशसा से भर गया।

अफवाह फैली कि स्त्रियो को फुसलाने मे वह बेजोड़ है।—ग्यारह हजार स्त्रियो का नाश उसने ही किया है !! पॅविक का वह लूला-लड़का—उसका बाप तो पुतई ही है। सब गप्पियों ने गम्भीरता से कहा—'पुतई एक शैतान है !'

यद्यपि अब सारे क़स्बे भर मे पुतई प्रसिद्ध हो गया था, पर हम लोगों के घर से उसका घनिष्ट सम्बन्ध था। वह हम लोगों के द्वार के पास से चला जाता। लोग कहते और हम भाई-बहिन को विश्वास था कि कभी-कभी पुतई हमारे घर मे घुस आता था। कभी भी अपने सामने नहीं देखा; पर उसकी छाया, उसका स्वर और उसके पैरो के निशान से हम लोग बहुत परिचित थे। कितने ही दिन सध्या के समय हम लोगों को लगा कि मानो सड़क के चौराहे पर उसकी छाया दीख पड़ी। उसके विषय में हम दोनों भाई-बहिन की धारणा प्रति-दिन ही बदलती रहती थी। लोग अगर उसे क्रूर और बदमाश समझते थे, तो हम लोग उसे बच्चों की तरह सरल और भोला समझते थे। दिन पर

दिन वह हम लोगों की कल्पना में रगीन हो उठने लगा। यह सच है कि वह रात को अस्तबल मे घुस करके घोडे की दुम बॉध नहीं रखता था, पर वह भॉति-भॉति की शरारत करता था। मेरी बहिन की स्त्री-गुड़िया के चेहरे पर स्याही से मोछ अकित कर देता था; सोने को जाने के पहिले सुन पाता कि हम लोगों के पलॅग की मच्छरदानी के भीतर घुस कर वह फिस-फिसा रहा है; छत पर बिल्लियो से झगड़ रहा है; कुत्तों के साथ भौक रहा है, सडक पर शराबियों के गाने की नकल कर रहा है।

पिता का स्वभाव कुछ दार्शनिक-सा था। मनुष्य जाति को वे बहुत कृपा की दृष्टि से देखते थे। वे मनुष्य को बिल्कुल ही समझदार नहीं समझते थे। पर मनुष्य की गलती अधिक न होने पर, वे आनन्द उपभोग करते। पुतई के विषय में लोगों की धारणा मनुष्य-जाति की सब प्रकार की धारणाओं का एक छोटा सस्करण है—सोच कर उन्हे खुशी होती थी। पिता की बाते व्यंग मिली हुई होती थीं; उनकी बाते सुन कर लगता था कि मानो वे पुतई के अस्तित्व पर विश्वास करते थे। वे कभी-कभी पुतई की शक्ल का ऐसा विस्तृत वर्णन करते थे कि उसे सुन कर माँ विस्मित होकर कहती—'तुम इस कदर बाते बना सकते हो! तुम्हारी बाते सुनने पर लोग कहेगे कि तुम सच्ची बात कह रहे हो। पर तुम खुद जानते हो कि—'

पिता बनावटी गम्भीरता से उत्तर देते, "सेण्ट-ओमेर के सब लोग पुतई के अस्तित्व पर विश्वास करते हैं। यहाँ इतने दिनों से रह कर क्या मैं यह अविश्वास कर सकता हूँ? इतने लोगों की एक पक्की धारणा तोडने के पहिले अच्छी तरह सोच लेना चाहिये।"

जिसका दिमाग बहुत साफ है वही इस तरह सोच सकता है। पिता ने अपने और साधारणों के विचार मे सामजस्य कर लिया था

सेण्ट-ओमेर के लोगो के साथ वे पुतई के अस्तित्व मे विश्वास करते थे, क्योंकि एक दार्शनिक ने कहा है—'मैं जो हूँ यही मेरे अस्तित्त्व का प्रमाण है।' पर वे नहीं मानते थे कि पुतई का, ककड़ी की चोरी, महाराजिन की फुसलाहट या अन्य घटनाओं मे कोई हाथ है। इसी-लिये लोग सोचते थे कि पिता बहुत बुद्धिमान और सज्जन हैं।

फिर माँ की बात। माँ सोचती थी कि पुतई के लिये वे उत्तरदायी हैं। और उनका यह ख्याल भी गलत नहीं था। शेक्सपीयर की कल्पना मे जिस तरह कैलिबेन का जन्म हुआ था, उसी तरह मेरी माँ की कल्पना मे पुतई का जन्म हुआ था। इस कल्पना को यदि मिथ्या सोच कर पाप समझा जाये, तो शेक्सपीयर से भी माँ का पाप कम ही था। फिर भी माँ डर गईं। इस छोटे से 'झूठ' से ही न यह विषय इतना बडा हो उठा! एक दिन वे अकेली बैठी-बैठी सोच रही थीं कि शायद किसी दिन उनका यह छोटा-मोटा 'झूठ' मनुष्य के आकार में उनके सामने हाजिर न हो जाय। उसी दिन घर के एक नौकर ने आकर कहा कि एक आदमी उनकी खोज कर रहा है, वह आदमी माँ से बाते करना चाहता है। माँ ने पूछा—'वह कैसा आदमी है?'

नौकर ने कहा—'कोई मजदूर-सा मालूम हो रहा है।'

'उसने अपना नाम बताया है?'

'हॉ।'

'क्या नाम?'

'पुतई।'

'क्या उसने ही कहा कि उसका नाम पुतई है?'

'हॉ, मालकिन।'

'वह यही है?'

'हॉ, रसोई घर के पास खडा है।'

'तुमने उसे देखा है?'

'हाँ, मालकिन।'

'वह क्या चाहता है, यह उसने कहा है?'

'मुझसे तो और कुछ नहीं कहा,—सिर्फ़ कहा कि आपसे मिलने पर सब कहेगा।'

'अच्छा तो उसे यहाँ लेते आओ।'

रसोई घर मे जाकर नौकर पुतई को और देख नहीं पाया। नौकर और पुतई की यह भेंट आज तक भी रहस्य मे ढँकी है। पर मुझे लगता है कि उस दिन से माँ को विश्वास होने लगा कि कदाचित् वास्तव में ही पुतई का अस्तित्व है,—वह केवल अपनी कल्पना का बना नही भी हो सकता है।"

इंग्लैंड

काला पर्दा

लेखक—चार्ल्स डिकेन्स

वर्षा हो रही थी। रात का समय था। नया डाक्टर आराम से कुर्सी पर अर्धनिद्रित अवस्था मे पड़ा था। उसके मन में नाना प्रकार के विचार चक्कर काट रहे थे। पहला विचार यह था कि यदि वह दरिद्र होता, तो घर न होने के कारण उसे कितना कष्ट होता! कभी उसके चित्त मे आता कि अब बड़े दिनों की छुट्टियों मे जब घर जाऊँगा तो सगे सम्बन्धी मुझसे मिल कर कैसे सुखी होंगे! मेरी भावी धर्म-पत्नी यह सुन कर बहुत प्रसन्न होगी कि मेरे दवाखाने मे रोगी आने लग गये हैं! फिर उसने सोचा वह कैसा सुहावना दिन होगा, जिस दिन मेरा पहला रोगी आवेगा! हो सकता है, मेरे यहाँ कभी कोई बीमार आवे ही नहीं। अन्त मे वह अपनी भावी धर्मपत्नी का विचार करते-करते सो गया—स्वप्न मे वह उसकी मधुर ध्वनि सुनने लगा और कन्धों पर उसके कोमल कर का स्पर्श अनुभव करने लगा।

उसके कन्धे पर एक हाथ था, किन्तु न तो वह कोमल था और न छोटा। डाक्टर ने आँख खोल कर देखा, तो वह हाथ उसके नौकर का था। डाक्टर के यहाँ रोगी आते ही न थे, इसलिये नौकर को कुछ काम नहीं था। वह बैठा-बैठा पेपरमिण्ट की गोलियो पर हाथ सफा करता रहता।

नौकर ने कहा—"एक स्त्री .."

"कौन-सी स्त्री? कहाँ?"

"वहाँ—सामने !"

सामने शीशे के किवाड़ के साथ लग कर एक औरत खड़ी हुई थी। डाक्टर अप्रत्याशित ग्राहक की ओर देख कर हैरान रह गया। वह अच्छी खासी लम्बी थी। वह शोक-सूचक वस्त्र पहने हुए थी। मुँह पर मोटा 'काला पर्दा' पड़ा हुआ था। वह बिल्कुल सीधी खड़ी हुई थी।

डाक्टर ने अनुभव किया कि पर्दे के नीचे से आँखे उसकी ओर ताक रही हैं।

"क्या आप मुझसे सलाह लेना चाहती हैं ?" डाक्टर ने दर्वाजा खोलते हुए पूछा।

दर्वाजा अन्दर की ओर खुलता था, इसलिए वह औरत वैसी ही खड़ी रही। सिर हिला कर उसने स्वीकृति दी।

"कृपया अन्दर आ जाइये।"

औरत अन्दर आ गई और उसने नौकर की ओर मुँह फेर कर सूचित किया कि वह उसके सामने कुछ नहीं कहना चाहती। डाक्टर ने नौकर से कहा, "तुम बाहर चले जाओ।"

नौकर बाहर चला गया और दीवार के साथ कान लगा कर उनकी बातें सुनने लगा।

डाक्टर ने अँगीठी के पास कुर्सी खींच कर औरत को उस पर बैठने के लिये सकेत किया।

अग्नि के प्रकाश मे उसने देखा कि उसकी पोशाक के निचले हिस्से पर कीचड़ पड़ा है।

"आप भीग गई हैं ?"

"हाँ !"

"आप बीमार हैं ?"

"हॉ, मैं बीमार हूँ—बहुत बीमार हूँ, किन्तु शरीर से नहीं—मन से, अपने लिये नहीं, दूसरे के लिये। यदि मुझे शरीरिक कष्ट होता तो रात के समय वर्षा मे मैं बाहर न निकलती। हॉ, अब से चौबीस घटे बाद मुझे बीमारी हो जाती, तो मैं निश्चिन्त होकर लेट जाती और मृत्यु का आह्वान करती। मैं आपके पास एक दूसरे व्यक्ति के लिये सहायता मॉगने आई हूँ। मानवीय हाथ उस व्यक्ति की कुछ सहायता नहीं कर सकता। किन्तु बिना प्रयत्न किये ही उसे दफना देने का विचार मुझे दहला देता है।"

यह कहते ही औरत का शरीर कॉपा।

औरत के शब्दों मे निष्ठुर सत्यता थी, जिसने डाक्टर को विश्वास करा दिया। डाक्टर ने अभी नया काम शुरू किया था, इसलिये उसका करुणा-स्रोत शुष्क न हुआ था।

उसने कहा—"यदि उस व्यक्ति की ऐसी चिन्ताजनक अवस्था है, तो मैं अभी आपके साथ चलता हूँ। आपने इससे पूर्व कोई सहायता क्यों नहीं ली?"

"क्योंकि वह व्यर्थ होती और अब भी व्यर्थ है।"

"आप बीमार हैं, यद्यपि आपको पता नही। आप बहुत थक गई हैं। एक गिलास पानी पीकर शान्त हो लीजिये। फिर बताइये उस रोगी को क्या बीमारी है और कब से है? आपकी बात सुन कर मैं निश्चय कर सकूँगा कि मुझे साथ क्या ले जाना चाहिये।"

औरत ने गिलास उठाया पर एक घूँट भी बिना पिये नीचे रख दिया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

"मुझे पता है कि मेरा कथन आपको ज्वर का प्रलाप प्रतीत होता है। मुझे पहले भी ऐसा कहा गया है। वह व्यक्ति, जिसके बारे मे मैं कह रही हूँ, कल प्रातः मानवीय सहायता के क्षेत्र से परे होगा। आज

रात उसका जीवन भंयकर सङ्कट मे है। फिर भी आप न उससे मिल सकते हैं और न उसकी सहायता कर सकते हैं।"

"मैं फिर अधिक पूछ कर आपको दुखित नहीं करना चाहता। मुझे एक बात समझ मे नहीं आई। वह व्यक्ति कल मरने वाला है और आज जब मेरी सहायता से उसका लाभ सम्भव है, तो मैं उसे देख नहीं सकता। आपको भय है कि कल मेरी सहायता से कुछ लाभ न होगा, पर फिर भी आप चाहती हैं कि मैं उसे कल देखूँ। आपके हाव-भाव से प्रकट होता है कि वह व्यक्ति आपका बहुत प्यारा है, तो मैं आज ही उसे क्यों न देखूँ और उसकी चिकित्सा करूँ?"

"तो क्या आप कल उसे न देखेंगे?"

"न, मेरा यह मतलब नहीं है। मैं आपको चेतावनी देता हूँ। यदि आपके ऐसे अनुचित विलम्ब से उस व्यक्ति के प्राण चले गये, तो आप पर भयकर जिम्मेवारी आ पडेगी।"

"जिम्मेदारी किसी और पर होगी। जितनी जिम्मेदारी मुझ पर है, उसका मैं उत्तर दे लूँगी।"

"आपकी बात मानने से मुझ पर कोई जिम्मेदारी नहीं पडती। मैं उसे कल ही देखूँगा। कै बजे आऊँ?"

"नौ बजे।"

"आशा है, आप मेरे इन प्रश्नों को बुरा न मानेगी। क्या मरीज आपके पास है?"

"नहीं, वह मेरे पास नहीं हैं।"

"मैं आपको कुछ निर्देश दूँ, तब भी आप उसकी सहायता न कर सकेगी?"

"नहीं।"

डाक्टर ने देखा कि अधिक बात-चीत से कुछ नई बात पता लगने

की आशा नहीं, इसलिये उसने अपनी ओर से कोई बात नहीं छेड़ी। औरत जैसे अविदित रूप से आई थी, वैसे ही चली गई।

(२)

कइयों को अपनी मृत्यु का पूर्व ज्ञान हो जाता है। डाक्टर ने सोचा—शायद उस काले बुर्के वाली स्त्री को भी अपनी मृत्यु का पूर्व ज्ञान हो गया हो। किन्तु दूसरे क्षण उसके मन मे आया कि यदि स्त्री को मृत्यु का पूर्व ज्ञान होना चाहिये, तो अपनी मृत्यु का, न कि दूसरे की मृत्यु का। दूसरे जिस दृढ़ निश्चय से स्त्री ने बातें कही थीं, उनसे मालूम पड़ता था कि उसके ज्ञान में सशय का स्थान नहीं। डाक्टर इसी परिणाम पर पहुँचा कि औरत का दिमाग बिगड़ गया है। रात भर उसने सोने का प्रयत्न किया मगर निद्रा उसके भाग्य में न थी। जितना वह नींद को बुलाता, वह उससे परे भागती।

उदय होते हुए सूर्य की प्रथम किरण का डाक्टर ने अभिनन्दन किया। नगर के जिस भाग में डाक्टर को जाना था, वह बहुत मैला-कुचैला था। प्रकाश चाँद और तारों के हाथ था, सफाई वायु के और छिड़काव वर्षा के। सरकार की ओर से सफाई न होती थी, तो लोग भी कम न थे। प्रति पन्द्रह मिनट बाद कोई न कोई स्त्री घर की जूठन सड़क पर फेंक जाती थी।

कीचड और दलदल को किसी तरह पार कर डाक्टर अपने स्थान पर पहुँच गया। जब उसने उस स्त्री के घर का पता पूछा, तो सब ने एक से एक नये उत्तर दिये। बहुत खोज के बाद डाक्टर ने घर का पता पाया।

डाक्टर ने पहले द्वार की सॉकल खड़काने मे सकोच किया। डाक्टर के संकोच से आप यह मत समझिये कि डाक्टर भीरु था। नहीं,

वह स्थान नगर के मुख्य भाग से अलग था। पुलिस उस स्थान की देख-भाल न करती थी। इसलिये गुण्डों के हौसले भी बढ गये थे। वे शरारतें करते आते और वहाँ छिप जाते थे। इसलिये यह स्थान नगर के छटे हुये बदमाशों का अड्डा था'। खैर, डाक्टर ने अन्त मे कुण्डा खड़का ही दिया। सीढियो पर से बूट की चर्र-चर्र सुनाई दी। अन्दर के व्यक्ति ने दर्वाजा खोल दिया। प्रकृति ने उस व्यक्ति को कुरूप बनाने मे विशेष कृपा की थी। चेहरा इतना पीला था, जैसे अभी कब्र से निकला हो।

"अन्दर आ जाइये, श्रीमान्!"

डाक्टर के अन्दर आते ही, दर्वाजा बन्द कर वह व्यक्ति उसे बैठक मे ले गया।

"क्या मैं ठीक समय पर आया हूँ?"

"बहुत जल्दी!"

डाक्टर ने भय-मिश्रित आश्चर्य से इधर-उधर देखा। वह व्यक्ति उसका मनोभाव जान गया और कहने लगा—

"आप यहाँ बैठिये। आपको पाँच मिनट भी प्रतीक्षा न करनी पड़ेगी।"

वह व्यक्ति दर्वाजा बन्द करके चला गया। कमरे में बडी ठण्ड थी। दो लकड़ी की कुर्सियाँ और एक लकडी की मेज को छोड़ कर कमरे मे और कोई सामान न था। एक टूटी हुई अँगीठी में कुछ अँगारे सुलग रहे थे। दीवारो पर सील चढी हुई थी। सभी ओर स्तब्धता का राज्य था। घर के बाहर भी—घर के भीतर भी।

थोड़ी देर बाद उसे किसी गाड़ी के आने की आवाज सुनाई दी। गाड़ी ठहर गई, दर्वाजा खुला। दबी हुई आवाज मे बातचीत शुरू हुई। ऐसा मालूम पड़ा कि जैसे दो-तीन आदमी सीढियों पर कोई भारी चीज उठा कर ले जा रहे हैं। थोड़ी देर बाद शान्त हो गई।

(३)

पाँच मिनट बीत गये। डाक्टर बैठे-बैठे उकता गया। जब वह सोच रहा था कि यहाँ से जाना कब होगा, तो वही औरत आ गई। उस औरत की लम्बाई देख कर शक होता था कि कहीं पर्दे मे औरत के वेश में आदमी तो नही छिपा है। किन्तु पर्दे के नीचे की ठण्डी आहे इस शक को मिटा देती थीं।

औरत आगे-आगे चली और डाक्टर पीछे-पीछे। दोनो ऊपर के कमरे मे जा पहुँचे। इस कमरे में एक लकड़ी का सन्दूक, दो तीन कुर्सियाँ और एक पुराना पलँग पड़ा हुआ था। इस पलँग पर बिछी हुई चादर पर जगह-जगह टाँके लगे हुये थे।

पलँग पर कम्बल से ढँका हुआ एक मनुष्य पड़ा था। निश्चेष्ट और निःसज्ञ। सिर और मुख खुले हुये थे। ठोड़ी से होती हुई सिर पर एक पट्टी बँधी थी। बायाँ हाथ छाती पर पड़ा हुआ था। स्त्री ने उस हाथ को अपने हाथ मे ले लिया। डाक्टर ने नब्ज देखी—और कहा—

"यह तो मर गया है!"

औरत एकदम खड़ी हो गई और कहने लगी...

"नहीं, महाशय! ऐसा न कहिये, मै यह नही मान सकती। कई मनुष्य, जिन्हे अनाड़ी हकीमों ने मृत समझा था, जीते पाये गये हैं। एक बार फिर कोशिश कर देखिये, शायद अभी कुछ जिन्दगी बाकी हो। खुदा के नाम पर एक बार फिर देखिये।"

"अब कुछ नहीं हो सकता।"

"क्यो?"

"नब्ज जा चुकी है। अच्छा कमरे के पर्दे सरका दो।"

"मैंने जान-बूझ कर कमरा अँधेरा किया था, महाशय! मुझ पर

दया करो। यदि यह व्यक्ति मर चुका है, तो इसे मेरे सिवाय और कोई न देखने पाये।"

"इसे स्वाभाविक मृत्यु नहीं प्राप्त हुई। मुझे जरा देख लेने दो।"

डाक्टर ने झटके से ऊपर का कपड़ा उतार कर देखा, तो चिल्ला कर कहा—"इस पर किसी घातक उपाय का प्रयोग किया गया है।"

स्त्री ने आवेश में अपने मुँह का पर्दा उतार दिया और डाक्टर ने उसका चेहरा देख लिया। आकृति से वह पचास साल की लगती थी। उसकी अंग-रचना से मालूम होता था कि जवानी में वह बहुत सुन्दर रही होगी। चेहरे पर दुःख और शोक का इतिहास लिखा हुआ था। डाक्टर ने अपना निरीक्षण जारी रखते हुये कहा—"इस पर किसी घातक उपाय का प्रयोग किया गया है।"

"हाँ।"

"इसकी हत्या की गई है।"

"हाँ, निर्दयता से, क्रूरता से और अमानवोचित रीति से।"

डाक्टर ने फिर देखना शुरू किया। मृत व्यक्ति का गला सूजा हुआ था और उस पर एक गोल निशान था। डाक्टर को एकदम सचाई का पता लग गया और वह कहने लगा—"आज प्रातः जिनको फाँसी दी गई हैं, यह उनमें से एक प्रतीत होता है।"

"हाँ, श्रीमान्।"

"यह कौन था?"

"मेरा बेटा! इकलौता बेटा! प्राणों से प्यारा! आँखों का तारा! बुढापे का सहारा!"

"इसे फाँसी क्यों दी गई?"

"कहानी नई नहीं, पुरानी है। बहुत पुरानी है। इस बालक के जन्म लेने के बाद इसके पिता स्वर्गवासी हो गये। मैं विधवा हो गई। न मेरे मित्र थे; न मेरे पास धन था। केवल "माँ का हृदय।" मैंने चक्की पीसी, दूसरो के जूठे बर्त्तन माँजे—सिर्फ इसके लिये। प्रायः पितृहीन बालक कुमार्ग-गामी हो जाते हैं। यह भी उसी ओर पड़ गया। मैंने इसे समझाया-बुझाया, कई बार इसके सामने रोई, किन्तु इसने कुछ परवाह नहीं की। परिणाम आपकी आँखों के सामने है।"

जल्लाद के हाथो अपनी हत्या, माँ की शर्मिन्दगी और न जाने वाला पागलपन।

इँग्लैंड

स्त्री या सिंह?

लेखक—फ्रैंक आर० स्टाक्टन

अत्यन्त प्राचीन काल मे एक राजा राज्य करता था, जिसके विचार यद्यपि निकटवर्ती देशो के शासको के प्रभाव के कारण कुछ-कुछ सभ्य हो गये थे, फिर भी वह जगली प्रकृति का ही था। वह एक विचित्र विचारो वाला मनुष्य था, और उसकी शक्ति इतनी प्रवल थी कि इच्छा करने ही से वह जो चाहता था, करा लेता था। जब वह किसी कार्य को करने का निश्चय कर लेता था, तो उसे करके ही छोड़ता था। जब तक राज्य का प्रत्येक कर्मचारी अपना कार्य सुचारु रूप से करता रहता था तब तक उसकी प्रकृति हँसमुख और उत्साहयुक्त रहती थी; पर जब कहीं कुछ भी गडबड़ी हो जाती, तो वह और भी प्रसन्न हो जाता था, क्योंकि दण्ड देना और अव्यवस्थित वस्तुओं को ठीक करना उसके लिये अमोद-प्रमोद के विषय थे।

उसके कई व्यसनों में एक था पशु और मनुष्य का युद्ध; जिसके दर्शन से उसकी प्रजा का मनोरजन और उसके मस्तिष्कों का विकास होता था।

पर यहाँ भी उसकी जगली प्रकृति प्रकट होती थी। जिस विशाल स्थल में दण्ड दिया जाता था, वह राजा की कवित्वमयी कल्पना का उदाहरण था। वहाँ न्याय—मृत्यु अथवा मुक्ति—सर्वथा भाग्य पर निर्भर रहता था। जब किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई इतना बड़ा दोष

प्रमाणित हो जाता था कि उसमे राजा को भाग लेने की इच्छा होती थी तो जनता को सूचित किया जाता था कि अमुक तिथि और अमुक समय पर दोषी को राजा के दण्डस्थल मे अपने अपराध का फल भोगना पड़ेगा। उसे दण्डस्थल कहना राजा का अनुचित नही था, क्योंकि यद्यपि उसका अस्तित्व अन्य देशो मे भी था, पर उसके निर्माण में जगली राजा के मस्तिष्क ने बहुत भाग लिया था।

जब सम्पूर्ण जनता आकर अपनी-अपनी जगह बैठ जाती थी और राजा भी अपने अनुचरों द्वारा आदरपूर्वक वहाँ लाया जाकर अपने उच्च सिंहासन पर आसीन हो जाता था, तो वह आज्ञा देता था और नीचे एक फाटक खुलता था और दोषी बीच में आकर खड़ा हो जाता था। उसके सामने ही दो दरवाजे थे जो बिल्कुल एक दूसरे की तरह थे और अगल-बगल थे। दोषी को यह आज्ञा दी जाती थी कि वह जाकर उन दोनो में से किसी एक दरवाजे को खोले। उसे कोई किसी एक दरवाजे को खोलने की आज्ञा नहीं देता था, जो उसकी इच्छा होती थी वही वह करता था। उनमे से एक के खोलने से एक अत्यन्त भयानक और भूखा सिंह बाहर आता था और अपराधी को वहीं उसके दोष का दण्ड दे देता था। जैसे ही अपराधी को यह दण्ड मिलता था, उसी समय घण्टियाँ बजती थीं और लोग दुःखित हृदय से अपने-अपने घर जाते थे।

पर यदि वह दूसरा द्वार खोलता था तो ठीक उसकी आयु और कुल प्रतिष्ठा के उपयुक्त एक सुन्दरी रमणी निकलती थी, और इस प्रकार उसकी निर्दोषिता प्रमाणित होने पर उसी स्त्री के साथ उसका विवाह हो जाता था। उसके कोई बच्चे हैं या नहीं, उसका किसी अन्य स्त्री से प्रेम है या नहीं, इन सब का तो राजा विचार भी नहीं करता था। उसी स्थान पर सब कार्य हो जाता था। उसी समय कई युवतियो के सुन्दर गानों के साथ एक पण्डित आकर उनका विवाह करा देता था। घण्टियाँ बजती थी और लोग प्रसन्नता से चिल्लाते थे।

राज्य के सबसे भयकर सिंहों और सबसे सुन्दर युवतियों की खोज की जाने लगी। राजा उत्कण्ठा-पूर्वक उस दिन की प्रतीक्षा करता था, जब यह प्रमाणित हो जायगा कि राजा की लड़की से प्रेम करना उचित है या नहीं।

वह दिन आ गया। दूर-दूर से लोग आये थे। सभा-भवन बिल्कुल भर गया था। राजा और उसके सभासद भी उपस्थित थे। समय आ गया! आज्ञा दी गई। एक द्वार खुला और अभियुक्त सामने आया—लम्बा कद, सुन्दर केशराशि और मनोहर रूप। जनता ने इतना सुन्दर व्यक्ति कभी नहीं देखा था।

युवक बीच मे आया और प्रणाली के अनुसार राजा का अभिवादन करने के लिये उसकी ओर मुडा। पर उसका ध्यान राजा की दाहिनी तरफ बैठी हुई राजकन्या की ओर था। यदि वह भी जगली प्रकृति की न होती, तो वहाँ उपस्थित न हो सकती। जब से उसने सुना था कि उसके प्रेमी को इस प्रकार अपना भाग्य-निर्णय करना पड़ेगा, तब से उसे दिन-रात इसी का ध्यान रहता था। किसी प्रकार उसने उन द्वारों का भेद जान लिया था। वह जानती थी, किस दरवाज़े के पीछे सिंह है और किसके पीछे स्त्री। दरवाजे इतने भारी थे कि उनके पीछे से किसी प्रकार की आवाज नहीं आती थी। पर द्रव्य की सहायता से राज-कन्या ने इनका भेद जान लिया था।

राजकुमारी यह भी जानती थी कि कौन-सी स्त्री चुनी गई है और उससे वह घृणा करती थी। कभी-कभी उसने उसे अपने प्रेमी के साथ टहलते और बातचीत करते हुये भी देखा था और तब से वह उससे पूर्णतया ईर्ष्या करती थी।

युवक ने राजकुमारी की ओर देखा और उस दिव्य दृष्टि से जो केवल प्रेमियों के ही पास होती है, यह जान लिया कि वह उन द्वारों का रहस्य जानती है, जिसे राजा भी नहीं जानता था।

उसने नयनों की मौन-भाषा मे पूछा—"कौन-सा ?" राजकुमारी प्रश्न स्पष्ट समझ लिया और दूसरे ही क्षण उत्तर भी दे दिया। दाहिने हाथ से उसने उसी ओर के द्वार को दिखा दिया। किसी ने उसे यह करते हुये नही देखा।

युवक दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ा। हरेक के हृदय की गति मानों रु गई थी। हरेक की दृष्टि उसकी ओर लगी थी। युवक ने बिना किसी हिचकिचाहट के दाहिना दरवाजा खोल दिया।

अब प्रश्न यह है कि उसमे से सिंह निकला या स्त्री ? जितना इस पर विचार करो उतना ही यह प्रश्न कठिन जान पड़ता है। २स उत्तर देने के लिये मानव-हृदय-वृत्ति के ज्ञान की आवश्यकता है। विचार करो, पाठक ! और यह ध्यान रखते हुये कि यह प्रश्न सामने नहीं, एक जंगली लड़की के सामने था, जिसकी आत्मा समय भय, प्रेम और ईर्ष्या से आन्दोलित हो रही थी।

हाँ, तो बताओ उस द्वार से कौन निकला—सिह या स्त्री ?

❋ समाप्त ❋